धरती के आँसू

श्रीराम शर्मा 'राम'

साहित्य सदन, देहरादून

*
प्रकाशक :
साहित्य सदन,
देहरादून.

*
प्रथम संस्करण,
अक्टूबर १९५६

*
मूल्य :
तीन रुपए बारह आने

*
मुद्रक :
भास्कर प्रेस,
देहरादून.

मेरी बात

प्रस्तुत कथा को लिखते समय लेखक के मन में यह बात आई थी कि नारी का सामीप्य और नारी का जीवन, ये दोनों ही, चिर-पुरातन से मनुष्य के आकर्षण के केन्द्र रहे हैं। देखा गया है कि जब से मनुष्य समाज में पैसे का चलन हुआ, बाहुल्य हुआ, तो मनुष्य चांदी सोने की पथरीली शिला से नारी का मोल करने लगा! पैसे से नारी को ठगा गया है...नारी का विक्रय हुआ है! मनुष्य की इस पाशविक वृत्ति का एक सूक्ष्म प्रदर्शन पाठकों को इस कथा में मिलेगा। पैसे के लिए और जीवन के अन्य भोगों को प्राप्त करने के लिए, एक सम्भ्रान्त पिता ही अपनी विधवा पुत्री को दूसरे के हाथों में सौंप देना पसन्द करता है...वह अपने इसी प्रयत्न में मारा जाता है।

किन्तु कथा का मुख्य पहलू अथवा ध्येय यह नहीं था। वह और था। पाठक देखेंगे कि गांव का एक जमींदार, जो नगरों सरीखी चकाचौंध का आदी नहीं, वह अपने मानस की वाणी को सुनता है और अपने अन्तर के उसी उद्घोष में जीवनेतर डूबा रहता है। व्यक्ति का व्यक्ति पर किस प्रकार प्रभाव पड़ता है, श्वसुर के द्वारा विधवा बहू के लिए यही निर्देश इस कथा में चित्रित किया गया है। सम्भव है, पाठकों

को कथा की भाषा लच्छेदार न मिले, भावों की उड़ान भी ऊंची न दिखाई दे। परन्तु जीवन की जिस चाह को चित्रित करने का प्रयत्न किया गया है, वह न केवल आज की, अपितु मनुष्य-समाज के जीवन भर की वह अमर सौगात है कि जिसे पाकर मानव निहाल बना है, अमर हो गया है। इसी आधार पर मनुष्य देवत्व को प्राप्त हुआ है।

भारत का कथा-साहित्य अपने साथ पीड़ा, दुःख और क्लेश साथ लेता रहा है। इसका एक प्रधान कारण देश की दुरावस्था है और उत्पीड़न है। इसलिए, साहित्य केवल मनोरंजन की सामग्री दे, कदाचित् ऐसा न पाठक चाहेगा, न लेखक। क्योंकि दोनों ही देश की आत्मा के प्रतिरूप हैं ..प्रतिनिधित्व करते है! भारत की दार्शनिकता, भारत का आदर्श गांवों में रहा है और आज भी वह गांवों में सिसक रहा है। उसे जीवन मिले, नव-प्राण मिले, प्रस्तुत कथा से यह भी एक छोटा-सा प्रयत्न किया गया है।

पाठक कुछ पा सकें, अपना मनोरंजन कर सकें, तो लेखक का प्रयत्न सफल होगा।

काशगरी कूचा,
बाजार सीताराम
दिल्ली

श्रीराम शर्मा 'राम'

(१)

पाषाण की तरह कठोर और मिट्टी के समान ठोस चौधरी रामलखन जब श्मशान भूमि में अपने एकमात्र पुत्र को जलाकर लौटा, तो उसकी कमर टूट चुकी थी। यद्यपि, उसकी आंखों में आंसू तब भी नहीं थे। वह नितान्त मौन और गम्भीर बना हुआ, जिस प्रकार पुत्र की अर्थी के साथ गया, तो उसी तरह की अवस्था लिये खाली हाथ लौट आया। लेकिन उसके मन का चीत्कार किसी प्रकार भी कम नहीं था। पड़ोसी और बिरादरी के लोग कुछ लौट गये थे और कुछ अभी रामलखन के द्वार पर बैठे हुए थे। वे सभी त्रस्त तथा दु:खी थे। रामलखन का बुढ़ापा बिगड़ गया, घर में बैठी हुई बेटे की जवान बहू विधवा हो गयी, आदि विचारों से वहां पर उपस्थित व्यक्तियों के मन का मन्थन हो रहा था।

रामलखन घुटने पर सिर रखे बैठा था। वह कभी ऊपर नीले अन्तरिक्ष की ओर देखता और कभी आस-पास बैठे हुए मूक व्यक्तियों की ओर। उसी समय, रामलखन के समकक्ष बैठे हुए और आयु में भी लगभग बराबर चलते हुए धनपत ने कहा—'भैया रामलखन, जानता हूं कि तुम समझदार हो -तुम तो सभी को सीख देते हो। अपनी इस जिन्दगी में, अब तक जाने कितने अपने और पराये तुम चिता में जाकर

रख चुके हो । जाओ, घर में ! बहू को समझाओ । उसे धीरज दो।'

उस समय, रामलखन की अवस्था अजीब थी। नितान्त भयावनी बनी थी । केवल उसकी आंखो में आंसू नहीं थे । परन्तु उसकी मुखाकृति जिस प्रकार का रौद्र रूप धारण किए हुए थी, निःसन्देह, वह देखने योग्य नहीं थी। उसके सिर के स्वेत बाल जैसे भयभीत हुए खड़े थे । आंखों में अजीब प्रकार की निराशा और त्रस्तता उपस्थित थी । वह बोल नहीं रहा था, परन्तु रामलखन के सूखे और दुर्बल होंठ बारबार कांपते, हिलते और रामलखन के मन की किसी कठोर वाणी को उद्घोषित करना चाहते थे ।

जब धनपत ने अपनी बात कही, तो रामलखन तब भी नहीं बोला, वह मौन ही बना रहा। उपस्थित व्यक्ति वहां से जाने लगे । एक-एक करके चले गये । किन्तु चौधरी धनपत बैठा रहा । जब सब व्यक्ति चले गये, तो धनपत ने रामलखन के हाथ पर अपना हाथ रखा और कहा--- 'आज तुम बहुत भारी बन गये हो, रामलखन ! देखता हूं, तुम बिलकुल मौन हो ! अपने-आप में डूब गये हो, रामलखन देखते हो न, आज तुम्हारे घर में ही नहीं, गाँव में और समूचे देश में आंधी उठी है। मौत सभी जगह किलकिला रही है । देखते हो न, अपने तेज दांतों से इन्सान को चबा रही है...इस इन्सान के समाज का यह मौत जैसे अन्त कर देना चाहती है...

'उसी समय रामलखन ने अपना मुंह खोला और कहा-—'हां भैया ! अब ऐसा ही दीखता है...अब।'

धनपत ने कहा—'रामलखन, मैं इन दस दिन में पूरे दो सौ आदमियों को स्मशान ले गया हूं । उन्हें फूंक आया हूं । सोचता हूं, वे जवान और बूढ़े, जाने कैसी-कैसी आशायें और इच्छाएं लिये इस जगत से चले गये । असमय ही लोप हो गये !'

रामलखन ने सांस भरी—'अरे, अब मैं किसको क्या कहूं, धनपत

भाई ! मैं स्वयं लुट गया ! खुद ही ठोकर खा गया !'

धनपत ने रामलखन का हाथ दबाया—'यह हमारी शक्ति से परे की बात है, भाई !'

किन्तु उस समय रामलखन की सूखी आंखें भरी थीं। सूरज ढल गया था। सन्ध्या आ गयी थी। कदाचित रामलखन अपनी आंखों के आंसू किसी को दिखाना नहीं चाहता था। जब उसकी वे सूखी आंखें भर आईं, तो उसने उसी तरह धूमिल आकाश की ओर अपना मुंह उठा दिया। रामलखन उस समय जैसे सचमुच ही, अजान और पराजित बना हुआ, पृथ्वी के छोटे से टुकड़े पर बैठा था। घर के बाहर बैठे हुए, उसने इतने बीच में कई बार अपनी पुत्र-वधु का प्रलाप सुन लिया था। परन्तु उस समय, जैसे वह भी थक गई थी। उसकी पीड़ा मानो आंधी बन कर उस नारी के चारों ओर समाहृत हो चुकी थी।

धनपत खड़ा हो गया और बोला—'अब मैं जाता हूं। तुम भी घर में जाओ। लड़के की बहू और मां को समझाओ।' कहते हुए धनपत रास्ते के अंधियारे में लोप हो गया। किन्तु रामलखन उसी प्रकार बैठा रहा। मानो वह घर में जाने के लिए प्रस्तुत नहीं था, शक्तिहीन था। वह अपने पुत्र की मां और बहू को देखने में असमर्थ था। वह उनसे कुछ नहीं कह सकता था। जिस सान्त्वना की आवश्यकता उसकी पत्नी और पुत्र-वधु को थी, कठिनाई तो यह कि उस समय, स्वयं रामलखन भी उसका ग्राहक था। उसने गांव में फैली हुई बीमारी के उस दस-पन्द्रह दिन में जाने कितनों को सान्त्वना दी थी। कितनी मां, बहिन और पत्नियों से उसने कहा था कि यह संसार असार है...यहां जो आता है, वह जाता है। रोना वृथा है। यहां तो सभी-से जीते जी का नाता है ...।'

लेकिन धनपत के जाते ही, रामलखन की वे सूखी आंखें जैसे एकाएक ही, बांध तोड़ कर समुद्र के समान, अपनी सीमा को लांघ

गयीं। वह फुफक कर रो पड़ा। जिस पुत्र को उसने अपने प्राणों से अधिक पाला था, उसी को चिता में रखकर, वह ऐसी धीरज नहीं पा सका, जिससे उसका मन शान्त हो...वह पीड़ा से परे हो . ।

तभी, पड़ौस की एक वृद्धा वहां आई। वह रामलखन के घर से निकल कर आई थी। अपने घर जा रही थी। जब उसने रामलखन को घुटनों पर मुंह रखे फुफक कर रोते देखा, तो वह सीधी उसके पास गयी और रामलखन के सिर पर हाथ रख कर बोली —'भैया !'

चीखकर रामलखन ने कहा—'मैं लुट गया, अम्माजी !'

वृद्धा ने कहा—'भैया शान्ति रखो। इस आंधी में जाने कितने उड़ गये। कितनों के खेमे उखड़ गये। देखते तो हो, जाने कितने असमय ही मौत के मुंह में चले गये।'

रामलखन ने कहा—'अम्माजी, मैं चला जाता, तो ठीक था। मेरा समय था।'

बुढ़िया ने कहा—'यही तो बात है। इन्सान यमराज के कागजों की लिखत को नहीं पहचानता। उसे नहीं पढ़ पाता। वहां क्या उम्र देखी जाती है। वहां क्या तुम्हारे सम्बन्ध समझे जाते हैं।'

रामलखन बोला—'अम्माजी, मेरा तो बुढ़ापा भी बरबाद हो गया...यह बहू...'

बुढ़िया ने कहा—'हां, हां, बहू की बात सच्ची है, बेटा ! उसकी उम्र ही अभी कितनी है। अभी तो उसके ब्याह की हल्दी भी नहीं सूखी ! अभी क्या सुहाग की रातें...'

रामलखन ने कहा—'अम्माजी !'

अम्मा ने कहा—'धीरज से काम लो, रामलखन ! अब घर में जाओ बहू को बार-बार बेहोशी आती है। उसे समझाओ। अब सभी कुछ भूल कर भगवान का सहारा लो। तुम तो समझदार हो। दूसरों को अच्छी बातें बताते हो। तुम्हारे दुःख की चोट सभी ने महसूस की है।

सभी के दिल में दर्द है।'

रामलखन मौन था। वह अपनी भरी आंखों से ऊपर आसमान की ओर देख रहा था। तभी वृद्धा ने सांस भरी और कहा—'भैया राम-लखन, सूझ नहीं पड़ता कि अब क्या होगा! देखती हूं कि इस गांव में ही बहुत से घर बिगड़ गये। सुनती हूं, दूर-दूर तक यह बिमारी फैली है। गांव के गाँव बरबाद हो गये!'

रामलखन ने कहा—'अम्मा, इन्सानों के ऊपर यह बहुत बड़ी मुसीबत आई है। आदमी बीमारी से मर रहे हैं और चौपाये भूख से, उन्हें कोई चारा भी नहीं दे पाता।'

वृद्धा ने सांस भरी—'हे राम! भगवान ही इस बीमारी से बचा सकता है, भैया! इन्सान नहीं?'

रामलखन ने भी सांस भरी और कहा—'इन्सान असमर्थ है, अपाहिज है। इन्सान की शक्ति तो बहुत कम है, अम्माजी!'

वृद्धा ने कहा—'हां, भैया! इन्सान की शक्ति ही कितनी है।' यह कहते हुए वह आगे बढ़ गयी। रामलखन फिर भी बैठा रहा। उसका मुंह घुटनों पर पूर्ववत रखा रहा। गांव पर अन्धेरा छा गया। मोहल्ले में जो अन्य व्यक्ति आ-जा रहे थे, उसे रामलखन नहीं दिख रहा था। किन्तु रामलखन बैठा था। वह अपनी सूखी आंखों से काले आसमान को देख रहा था। जिस प्रकार रामलखन बैठा हुआ था और आसमान की ओर देख रहा था, तो उससे लगता था कि सचमुच, अब उसके पास कुछ नहीं था। वह खाली था। वह बेकार था। उस समय वह निरा बच्चा बना हुआ ऊपर को मुंह उठाए था।

उसी समय वह उठा और घर में गया। देखा कि लड़के की मां एक तरफ पड़ी थी और बहू एक तरफ। क्षण भर, रामलखन ने इतना देखा, तो वह बोल न सका। उसने किसी को भी नहीं टंकोरा। उस करुण दृश्य को देख, वह फिर कांप गया। जब उसने दीवार के

सहारे लगी, उस सुन्दर और कोमल बहू की ओर देखा, तो तभी, उसके मानस में फिर चीत्कार उठा, वह तुरन्त लौट पड़ा। बाहर आते-आते वह बड़बड़ाया—'इन्हें मत छेड़ो! इस आग को मत कुरेदो! यह खुद बुझ जायेगी!'

२

पुत्र का अभाव जितना घर की स्त्रियों ने अनुभव किया, रामलखन ने कदाचित उनसे अधिक ही अनुभव किया। परन्तु वह स्वयम् अपने को समझा सकता था, पुत्र की पत्नी और मां को नहीं। मानो उन दोनों नारियों का अभाव सर्वोपरि था। वह अभाव नहीं पुर सकता था। रामलखन जब पुत्र को जाने से न रोक सका, तो वह अपने घर की नारियों के शोर को भी कम नहीं कर सका। इसके साथ, जो एक दोष रामलखन के सिर पड़ा, वह यह था कि वह पिता बन कर भी, अपने पुत्र का यथोचित उपचार नहीं कर सका। जब घर में उसका पुत्र बीमार रहा, तो वह गांव के अन्य रोगियों की सेवा में लगा रहा। रामलखन के सिर यह ऐसा दोष था कि जिसे वह नहीं मिटा सकता था। जिसने भी उससे यह बात कही, रामलखन ने वह चुपचाप सुन ली। मानो उसने स्वतः ही अपना दोष स्वीकार कर लिया।

किन्तु इस दोष के कारण तो रामलखन ने अपना कुछ और भी खो दिया था। वह एक बड़े जमींदार के घर में पैदा हुआ था। लेकिन जब स्वयं जवान हुआ, तो उस जमींदारी का एक बड़ा भाग स्वतः ही जोतने वाले किसानों को दे बैठा। अब उसके पास कठिनाई से इतनी

जमीन बच गयी थी कि जिससे उसके परिवार का गुजारा मात्र हो पाता। वैसे रामलखन गांव का सरपंच था। गांव का समाज उसके चरणों में अपना सिर झुकाता था। यह बात उस गांव में प्रसिद्ध थी कि किसी का कोई अभाव हो और वह चौधरी रामलखन द्वारा पूरा किया जा सकता था, तो निश्चय ही, वह पूरा होता था। इस प्रकार रामलखन न केवल गांव का सरपंच और चौधरी था, अपितु वह 'भक्त जी' के नाम से भी प्रसिद्ध था।

और यह केवल चौधरी रामलखन के लिये ही शोभनीय हो सकता था कि जब लड़के ने अपने अन्तिम सांस तोड़े तो उस बेचारे पुत्र का पिता तब भी उसके पास नहीं था। वह उन क्षणों में गाँव के एक अन्य रोगी के पास बैठा हुआ था। वह रोगी गांव का अत्यन्त निर्धन था। वह भी युवक था। रामलखन के पुत्र के समान ही सुन्दर और जवान था। वह भी उन क्षणों में अपने अन्तिम सांस तोड़ रहा था। रामलखन के पास उस समय बार-बार आदमी आता था और वह 'अभी आता हूँ' कहकर टाल देता था। कदाचित रामलखन को इसका भरोसा नहीं था कि उसका पुत्र भी चला जाएगा। वह भी रामलखन को अकेला छोड़ जाएगा। किन्तु जब रामलखन के पास पुत्र के मरने का समाचार पहुंचा, तो वह जैसे सचमुच ही कोई अपारध कर बैठा। रामलखन अपराधी के सदृश्य घर में प्रविष्ट हुआ। उसे देखते ही पत्नी ने चीख कर कहा—'अरे, अब आए हो तुम! तुम!'

किन्तु रामलखन मौन था। पृथ्वी पर पड़े हुए पुत्र का उसने मुंह खोला और उसे क्षण भर देखकर फिर ढंक दिया।

तभी एक वृद्ध ने उसे सुनाकर कहा–'तुम सचमुच ही पत्थर हो रामलखन! तुमने पुत्र का इलाज नहीं कराया। मरने के समय भी बेचारे से कुछ नहीं कहा-सुना। वह अपनी सभी बातें लिये चला गया।

एक वृद्धा बोली—'इतने निर्मोही बने तुम!'

रामलखन ने उसकी ओर देखा और कहा—'अम्मा, वह भी मेरा एक कर्तव्य था। वह लड़का भी मर रहा था। मर जायेगा।'

'पर तुम्हारा अपने पुत्र के लिए भी कोई कर्त्तव्य था, रामलखन ! वृद्धा ने फिर कहा।

इतना सुना तो रामलखन मौन रह गया। वह कुछ नहीं बोल सका। अपनी पत्नी और पुत्र-वधु के विलाप में डूब गया।

किन्तु जब पुत्र के मरने का दूसरा दिन हो गया, तो तब अवसर पाते ही, रामलखन की पत्नी के मन का क्षोभ फूट पड़ा। उसने चीख कर कहा—'मेरा लड़का तुमने खोया है ! बाप बन कर भी तुमने शत्रु का काम किया है !'

पत्नी को क्रोध में देख, क्षण भर रामलखन बैठा रहा। वह स्वतः ही शांत रहने का आदि था। उसे क्रोध कम आता था। परन्तु जब वह देर तक पत्नी की बातें सुनता रहा, तो तब, उसने नितान्त सदय भाव में कहा—'यह सब सत्य होते हुए भी, सत्य नहीं है। रतन की माँ ! मैं भी बाप हूं। बाप का दिल रखता हूं। पर शायद तुम मेरे समान भगवान पर भरोसा नहीं रखतीं। तुम यह नहीं देखतीं कि यह मुसीबत अकेली तुम पर नहीं आई, समूचे गांव पर आई है। आज सभी जगह आंसुओं की धारा बह चली है।'

इतना सुना, तो पत्नी और चिढ़ गई। वह उसी आक्रोश भरे स्वर में बोली—'भाड़ में गया गांव, और ऊपर से जाओ तुम ! मैं किसी को नहीं जानती। मैं तो देखती हूं, मेरा बेटा चला गया, वह तुमने मार दिया... तुमने ही उसका अन्त कर दिया।'

रामलखन ने कहा—'तुम अधिक क्रोध में हो, रतन की मां ! देखता हूं कि तुम शुभ और अशुभ को भी भूलती हो। भला जब गांव मर जायगा, जल जायेगा, तो तुम क्या जीवित रह सकती हो ? तब क्या तुम स्मशान के ढेर पर खड़ी रह सकती हो ! न, तुम सभी की सलामती

मनाओ ।'

पत्नी ने कहा—'बस-बस, तुम्हीं मनाते फिरो दूसरों की सलामती ! मुझे नहीं चाहिये । जब मेरे घर में आग लग गयी, तो मुझे दूसरों की क्या पड़ी ?'

रामलखन ने फिर भी दीन बन कर कहा—'अपने गुस्से को शान्त करो रतन की मा !' यह कहते हुए उसने पास बैठी हुई पुत्र-वधू को देखा । वह उसी को लक्ष करके बोला—'बहू, जानता हूं कि तुम समझदार हो । तुम अपनी सास को समझाओ । तुम समझती तो हो कि इस संसार में सभी-कुछ होता है । इस मनुष्य को रोना-कलपना ही अधिक मिलता है ।' यह कहते हुए रामलखन खड़ा हो गया । वह बाहर चला गया । उसने हाथ में लाठी पकड़ ली और सीधा गांव से बाहर उस स्थान पर पहुचा कि जहां स्मशान था । उसके पुत्र की चिता जली थी । कल की जली हुई चिता उस समय ठंडी हो चुकी थी । किन्तु रामलखन उसी चिता के पास बैठ गया । वह एक तिनके से उस चिता की राख को किरोदने लगा । उसने हड्डी का एक टुकड़ा उठा लिया । पास ही पुत्र की जली हुई खोपड़ी पड़ी थी । वह उसको भी देखने लगा । देर तक रामलखन उसी अवस्था में बैठा रहा । उस समय उस के मन में तरह तरह के विचार आ रहे थे और जा रहे थे । रामलखन सोच रहा था, क्या यही जीवन है ! ऐसा ही अन्त है, मनुष्य के जीवन का ! उसने कहा, और फिर भी मनुष्य में इतना अहंकार ! इतना दम्भ ! इतना पाप ! वह बोला, जरा से जीवन को पाकर आखिर मनुष्य क्यों ऐसा स्वेच्छाचारी बनता है ! क्यों पाप का सृजन करता है...।

परन्तु मानो इतना कह देने से रामलखन के मन को शान्ति नहीं मिल सकती थी । क्योंकि ऐसी बात तो वह जाने कितनी बार सोच चुका था और दूसरों से भी कह चुका था । उस समय तो वह केवल अपने पुत्र की फुंकी हुई चिता देख रहा था और मुट्ठी भर बिखरी हुई

हड्डियों को लक्षकर, मन में बार-बार आई हुई बात को लिए हुए, वह कह रहा था, जब ऐसा है...मनुष्य इतना दुर्बल है पराश्रित है, इतना क्षणिक है, तो तब, निश्चय ही, ऐसे संसार का निर्माण करना क्या शोभनीय है ! यह मनुष्य की प्रभुता का उपहास नहीं है, क्या ! रामलखन के मन में बात आ रही थी, वह भगवान भी मनुष्य के साथ न्याय नहीं करता......उसे स्वतन्त्र नहीं कर देता...मनुष्य को स्वतः ही भगवान बनने का अवसर नहीं दे पाता !

इस अवस्था में ही, रामलखन ने हाथ में ली हुई हड्डी फिर राख में डाल दी। वह चिता के पास खड़ा हो गया। किन्तु वहां एक वही तो चिता नहीं थी, और भी बहुत सी थीं। कुछ ऐसी भी चिताएं वहाँ पर थीं कि जिनकी हड्डियां (फूल) अभी चुने भी नहीं गए थे। उनका कोई अपना नहीं रह गया था। वे चिताएं निराश्रित थीं। रामलखन उन चिताओं के मध्य खड़ा हो गया और बोला —जाने कितनी इच्छाएं और आकांक्षाएं यहां आकर जल गयी हैं—राख के ढेर बन चुकी हैं। वह बोला यह भी एक संसार है। मरा हुआ और जला हुआ संसार है ! यह मूक है ! राख का ढेर है !

किन्तु उसी समय, जबकि रामलखन वहां श्मशान भूमि में खड़ा एक-एक चिता की ओर झुक रहा था और कह रहा था कि यह उसकी चिता है और यह उसकी, कि जो जवान था—सुन्दर था, भला था; तभी गांव में एक चमार की स्त्री रामलखन के घर पहुंची और वह उसकी स्त्री के सम्मुख जाकर बोली—'मालकिन ! तुम चौधरी को धीरज दो, उन्हें समझाओ। मैं अभी जंगल से लौट रही थी, तो देखती हूं चौधरी जी अपने लड़के की चिता के पास बैठे हैं। वे उसकी हड्डी को अपने माथे से लगा रहे हैं। उनकी आंखों में आंसू...'

रामलखन की स्त्री ने इतनी बात सुनी, तो जैसे अचम्भे में पड़ गई। सचमुच उसके मन में बात थी कि उसके लड़के का बाप

रनिर्मोही बन गया है। किन्तु जब चमारिन से पति के श्मशान में बैठे रहने की बात सुनी, तो वह एकाएक कुछ न बोल पायी। बल्कि उसकी बहू ने कहा—'अम्माजी, पिताजी से कुछ न कहो। उनके दिल को न दुःखाओ। कोई रोकर अपना दुःख बहाता है, दूसरों को अपना दुःख दिखाता है, पर पिताजी, के मन का दुःख क्या हमें दिख सकता है—न, उनके मन का दर्द बड़ा है। जरूर, वह पिता जी के मन का मन्थन कर रहा है।'

पत्नी ने कहा—'बहू, मुझे पता है कि तेरे स्वशुर रतन को कितना प्यार करते थे। मैं कभी बचपन में रतन को मार बैठती तो मुझसे लड़ते थे। अनेक बातें सुनाते थे।'

पुत्र-वधु ने कहा—'वे पिता हैं। उनका पुत्र गया है, तो क्या उन्हें शान्ति मिल सकती है—कदापि नहीं! पिताजी योगी नहीं है। वे इतने निर्मोही नहीं कि पुत्र मरे और वे पत्थर की तरह पड़े रहें।

लेकिन रामलखन की पत्नी के मन में जो काँटा चुभ रहा था, वह अभी नहीं निकला था। वह सुगमता से निकल भी नहीं सकता था। वह देर से चुभा हुआ था। मानो उस नारी के दिल की गहराई में उतर गया था। उसको इस बात का देर से खेद था कि उसके पति ने बाहर की ओर ही अधिक देखा, घर की ओर नहीं। इसीलिये, उस घर का नाश हो गया। उस घर की श्री चली गयी। जिस घर में सोना था, चांदी थी, और जायदाद थी, अब वहां कुछ भी नहीं रहा। मानो वह घर खण्डहर हो गया। और अब, पुत्र भी चला गया। पिता ने पुत्र की ओर भी ध्यान नहीं दिया। उस स्त्री के मन का यह विश्वास जैसे अमिट बन गया कि यदि उसके पुत्र का किसी अच्छे वैद्य या डाक्टर से इलाज कराया जाता, तो वह जरूर अच्छा हो जाता। उसका पुत्र बच जाता।

तभी, सामने खड़ी हुई चमारिन ने कहा—'चौधरन, वे बेचारे पागल की तरह से श्मशान में घूम रहे हैं। जैसे अपना बेटा खोज रहे हों।'

इतनी बात सुनी, तो चौधरन तुनक गयी। वह तुरन्त बोली—'न, री! वे क्या पागल बनेंगे! पागल तो मैं बना दी हूं। यह बहू बना दी है। हमारा सभी कुछ छीन लिया है, इस चौधरी ने!'

चमारिन बोली—'चौधरी देवता हैं, मालकिन! गांव के सिरताज हैं। जो दूसरों के दुःख में दुःखी होते हैं, आज उन्हीं को बेटे का दुःख मनाते देखकर, गांव भर कह रहा है कि भगवान के यहां न्याय नहीं......कोई-कोई तो कहता है कि भगवान नहीं! उसकी दया नहीं, ममता नहीं!'

किन्तु रामलखन के लड़के की बहू उस समय किसी और विचार में डूबी थी। निःसन्देह, उसे अपने श्वसुर के प्रति श्रद्धा थी। इसलिये उसने अत्यन्त आतुर और सहमे हुए स्वर में कहा—'ऐसा न कहो, अम्माजी! भगवान तो है, उसकी कृपा भी है, हम पर! पर जैसा हमारा भाग्य है, वही तो हमें मिलेगा! उससे अधिक नहीं मिल सकेगा।'

चमारिन ने कहा—'बहू ठीक कहती है, अम्माजी! भगवान तो सभी-कुछ देता है। जो जैसा बोता है, वह वैसा ही काटता है।'

लेकिन चौधरन के मन की खिन्नता जैसे और अधिक उग्र बन गयी। उसने तब भी नितान्त उदास भरे स्वर में कहा—'अरी, यह सभी झूठ है! मन को धोखा देना है!'

बहू ने कहा—'न, अम्माजी!'

अम्मा बोली—'तू क्या जाने! अभीब च्ची है!

बहू ने बात सुनी, तो मौन रह गयी।

उसी समय, द्वार पर एक युवक आया। उसने आते ही पुकारा—'चाची!' और उसने अन्दर आकर कहा—'यह मैंने क्या सुना, चाची!'

चाची ने कहा—'भगवान की यही इच्छा थी, बेटा ! उठ् जा ! अभी आया तू कान्त !'

आगन्तुक युवक शशिकान्त उसी गांव का और उसी मुहल्ले का वासी था। वह रामलखन के सगे भाई का लड़का था। शहर में पढ़ रहा था। पिछले वर्ष ही, वह एम० ए० की क्लास में पहुंचा था। रामलखन के लड़के की मृत्यु का समाचार सुना, तो वह शहर से दौड़ आया। कान्त को आया देख, बहू ने अपने मुंह पर धोती का पल्ला कर लिया था।

तभी कान्त ने उसकी ओर देखा और कहा—'इस कमला भाभी के साथ भी ऐसा होगा, भगवान इतना कठोर बनेगा, आज से पूर्व मैं नहीं सोच सकता था ! चाचा कहां है ?'

चाची ने कहा—'वे भी भटक रहे हैं। अभी चमारिन बता गयी है कि श्मशान में फिर रहे थे। रतन की चिता के पास बैठे थे।'

कान्त ने कहा—'मैं भी वहां जाऊंगा ! रतन भाई की चिता को नमस्कार करके आऊंगा। मैं उस चिता की राख को माथे से लगाऊंगा।'

चाची ने कहा—'अरे, अब इससे क्या होता है, भैया ! तोता तो उड़ गया। पिंजरा खाली कर गया। इस बहू को और मां को जन्म भर बिलखने को छोड़ गया। वह पंछी तो, इस डाल को छोड़, किसी और पेड़ की डाल पर जाकर बैठ गया......

कान्त ने बात सुनी, तो सांस भरा। वह पास बैठी हुई कमला भाभी के गोरे और मुलायम हाथों को देखने लगा। उन हाथों की कलाईयों में उसने कांच की रंग-बिरंगी चूड़ियां देखी थीं। पर उस समय उन सूनी कलाइयों को देख, उसका मन चीख उठा। वह आहत हुये भाव में अपने-आप बोला—हाय, इस बेचारी के साथ भी ऐसा हुआ... इतना कठोर...रे, परमात्मा !

तभी रामलखन को घर में आता देख, कान्त खड़ा हो गया। वह उनको देखते ही फूट कर रो पड़ा।

३

चौधरी रामलखन इस बात के लिए प्रस्तुत नहीं थे कि उनकी पुत्र-वधु अपने माता-पिता के घर चली जाए। किन्तु उसके पिता और माता की यह इच्छा थी कि वे अपनी लड़की को वापिस बुला लें। उनका एक यह भी विचार था कि अभी उनकी लड़की कमला की आयु भी छोटी है, इसलिए उसका किसी दूसरे लड़के के साथ विवाह कर दिया जाय। क्योंकि उनकी जाति में इस प्रकार का सम्बन्ध प्रायः स्वीकार किया जाता था। कमला के पिता ने जब इस प्रकार का पत्र चौधरी रामलखन को दिया, तो उन्हें लगा कि जैसे भगवान एक और विपत्ति उनके ऊपर डाल रहा था। यद्यपि रामलखन अधिक पढ़ा-लिखा व्यक्ति नहीं था, परन्तु जिस प्रकार के विचार उस व्यक्ति ने अपने जीवन में संचित किए थे, वे किसी भी उदार शिक्षित के लिए शोभनीय तथा ग्राह्य हो सकते थे। उन्हीं विचारों में एक यह विचार भी चौधरी रामलखन के मन में देर से समाहृत था कि विवाह न केवल एक सामाजिक बन्धन है, अपितु एक सांस्कृतिक और आत्मिक भी है। स्त्री अथवा पुरुष केवल भोग के लिए ही इस पृथ्वी पर नहीं आया। जानवर की कोटि से भी इन दोनों का स्थान ऊंचा है। अतएव, उनके मन में यह बात थी कि यदि उनकी बहू

कमला दूसरा विवाह चाहती है, जीवन को भोगना पसन्द करती है, तो वह स्वयं ही ऐसा पात्र चुन लेंगे। अपनी बहू को वे उसके पिता के घर भेजना पसन्द न करेंगे।

इसी अभिप्राय को लिये, चौधरी रामलखन कमला के पिता का पत्र पाने के बाद कई दिन तक उलझे रहे। वे अपनी बहू कमला से भी इस विषय में बात करना पसन्द करते थे। कमला पढ़ी-लिखी थी। उसके विचार भी प्रौढ़ थे। इसलिये, एक दिन अवसर पाकर वे घर में गये और पत्नी तथा कमला के पास जाकर बोले—'कमला के पिता का पत्र आया है। वे कमला को बुलाना चाहते हैं। तुम्हारा क्या मत है? तुम कमला को भेजोगी? कमला जायेगी क्या?'

पत्नी ने कहा—'अभी लड़के को मरे कितने दिन हुए हैं! मैं अभी बहू को नहीं भेजूंगी।'

रामलखन ने कहा—'लेकिन कमला से भी तो बात कर लो। कुछ दिन वहां जाकर मन बहल जाये, तो क्या बुरा है।'

पत्नी ने तुनक कर कहा–'तुम हर बात में मत टांग अड़ाया करो। समझते तो हो नहीं, बहू का अभी एक-दो महीने यहीं रहना शोभता है।'

इतनी बात सुनकर, रामलखन ने एकाएक कुछ नहीं कहा।

पत्नी ने पूछा—'और क्या लिखा है, चौधरी ने?'

रामलखन ने कहा—'बात तो बहुत लिखी हैं, पर उन सबके कहने सुनने से फायदा क्या! बस, पत्र की दो बात मुख्य हैं, एक कमला का यहां से प्रस्थान और दूसरा कमला का दूसरा विवाह!'

छूटते ही, पत्नी ने अपने स्वर पर जोर दिया–'क्या कहा, दूसरा विवाह! राम-राम! लड़की को अभी विधवा हुए पूरा महीना भी नहीं हुआ कि बाप बेटी का दूसरा स्वयम्बर रचाने लगा! वह बोली—'उन्हें लिख दो, अब तुम्हारा अपनी बेटी पर कोई हक नहीं रहा। तुम्हारी बेटी का भला-बुरा सोचने का काम अब हमारा है, तुम्हारा नहीं! और

हमारी बहू किसी गाय की बछिया भी नहीं कि एक खूंटे से खोलकर दूसरे खूंटे पर बांधने के लिए बेच दी जाय !'

रामलखन ने कहा—'रतन की मां, बात नाजुक है। सोच-समझ कर कहो, हम-तुम तो अब बूढ़े हो गए। इस कमला बहू के साथ क्या देर तक रहना है ?'

पत्नी ने आंख फाड़कर कहा—'तो तुम्हें क्या कहना है ?'

'मैं कहता हूं, चौधरी का अपनी बेटी कमला पर अब भी अधिकार है।' रामलखन ने कहा—'यदि कमला अपने पिता के घर जाना चाहती है, तो शौक से जाए। अब हमारा यही कर्तव्य है कि कमला को सुख मिले। आज की तरह यह घर आगे भी कमला का रहेगा।'

पत्नी बोली—'तो इसके माने यह हुए, मैं कुछ भी नहीं रही ! बात तुम्हारी चले या कमला की—मैं तीन में रही, न तेरह में।' उसने कहा—'मैं कहे देती हूं, मेरे जीते-जी कमला इस घर से न जाएगी ? मैं मर जाऊंगी, तो चाहे रहे या जाए।' यह कहते चौधरी की स्त्री का गला भर आया।

कमला ने कहा—'माता जी, आप क्यों चिन्ता कर रही हैं, मैं कहीं न जाऊंगी। नारी का एक ही पति होता है, दो नहीं। जितना मेरे भाग्य में था, मैंने पा लिया, भोग लिया। मैं जिन्दगी की बाजी हार गयी, तो इसमें किसी का दोष क्या ?'

चौधरी रामलखन ने कमला की बात सुनी तो जैसे आहत स्वर में कहा—'न, कमला बेटी ! तेरी जिन्दगी बड़ी है। रास्ता लम्बा है। अभी तो तेरे दिल पर लगी चोट का घाव हरा है। जब वह सूख जाएगा, तो इन्द्रियों का और मन का प्रश्न भी तेरे सामने आयेगा ! तब क्या तुझसे कुछ बोला जाएगा ? तब क्या उस मांग का विरोध तुझसे किया जाएगा ? न, बेटी ! वह काम दुष्कर है, तुझसे न हो सकेगा !

अभी कितने दिन की है तू ! भरी जवानी में लुट गई है तू ! तेरे पिता ने ठीक ही कहा है। ठीक सोचा है !'

पत्नी ने अपने माथे पर हाथ मार कर कहा—'तो तुम्हें भी यही कहना है, क्या ! देखती हूं तुम भी नहीं लजाते अपनी बहू से ऐसी बातें करते हुए। कोई सुने तो क्या कहेगा कि अभी लड़के को गए, कुछ दिन हुए कि बहू का बाप और स्वसुर दूसरे विवाह की चिन्ता करने लगे। मैं कहती हूं, इस जिन्दगी में तुम्हें क्या कभी भी शऊर आएगा, या नहीं ! बूढ़े तो हो गए, बाल भी सफेद कर लिए, पर बात वही बच्चों जैसी !'

रामलखन ने कहा—'बच्चा-बूढ़ा एक स्वभावा !' वह बोले—'काश ! मैं बच्चा ही होता !' उन्होंने कहा—'रतन की मां, मैं कमला बेटी की जिन्दगी के साथ खेल नहीं करूंगा। चाहता जरूर हूं कि बहू यहीं रहे, परन्तु जब इसकी भलाई-बुराई का प्रश्न खड़ा होता है, तो मुझे मौन रह जाना ही शोभता है।'

पत्नी ने कहा—'चौधरी को लिख दो, बहू अभी नहीं आएगी। रही दूसरे विवाह की बात, बहू चाहेगी, तो कर लेगी। हम नहीं रोकेंगे।'

कमला ने कहा—नहीं अम्मा, साफ-साफ लिख दो, अब कमला दूसरा विवाह नहीं करेगी।'

रामलखन खड़े हो गए और बाहर चले गए। वे वहां से सीधे गांव की चौपाल में पहुंच गए ! वहां कुछ वृद्ध बैठे हुए थे, कुछ जवान। गांव के ऊपर जो बीमारी की आंधी आई थी, वह दब चुकी थी। किसी-किसी घर में कोई बीमार पड़ा था, वह अच्छा हो रहा था। चौधरी रामलखन ने प्रान्त की सरकार से कुछ सहायता प्राप्त कर ली थी, उससे गांव की यथोचित सहायता की गई थी। उनके चौपाल में जाते ही, एक व्यक्ति ने कहा—'कुछ उदास दीखते हो, चौधरी ! कोई

और बात !'

चौधरी ने कहा—'कोई नई बात तो नहीं !' और तभी उन्होंने अपने-आप कहा—'रतन क्या गया, अब उसकी बहू का प्रश्न भी मेरे सामने खड़ा हो गया। बहू के पिता का पत्र आया है। वह बड़ा आदमी है। उसके पास पैसा है। वह सोचता है कि पैसे से सभी-कुछ हो सकता है। वह अपनी बेटी को बुला लेना चाहता है। बेटी का दूसरा विवाह कर देना भी पसन्द करता है।'

तभी एक व्यक्ति ने कहा—'बात तो उसकी ठीक है, चौधरी ! जमाना बुरा है।'

चौधरी ने जल्दी से आतुर बन कर कहा—'यह मैं भी जानता हूं।'

उनसे कहा गया—'लेकिन बहू के चले जाने से तुम्हारा घर सूना हो जाएगा।'

इतनी बात सुनकर चौधरी जैसे कड़वे भाव में मुसकरा दिया—'जिसे भगवान ने सूना कर दिया, उसे अब कैसे सरसब्ज बनाया जायेगा, भैया !'

चौधरी के मन की पीड़ा को जैसे सभी उपस्थिति व्यक्तियों ने अनुभव किया। इसीलिये फिर किसी ने अपना मत नहीं दिया। किन्तु पास बैठे हुए वृद्ध व्यक्ति ने प्रश्न किया—'तो तुमने क्या निश्चय किया ? क्या बहू को भेज दोगे ?'

रामलखन ने कहा—'अभी कोई निश्चय नहीं किया। रतन की मां को यह पसन्द नहीं। बहू भी नहीं जाना चाहती।'

वृद्ध कहा—'ठीक तो है ! अभी उसका जाना शोभता भी नहीं।'

रामलखन ने कहा—'वह दूसरे विवाह को भी इन्कार करती है।'

वृद्ध ने अपनी सफेद दाढ़ी पर हाथ फेरा और अपनी बूढ़ी आंखों से सामने के आसमान को देखते हुए कहा—'हां, भैया ! तेरी बहू

समझदार है । उसे ऐसा ही कहना शोभता है ।'

दूसरे व्यक्ति ने कहा—'बहू विवाह की बात नहीं कहेगी ।'

तीसरा बोला—'हां, ठीक तो है, वह लजाएगी ।'

चौथा बोला—'लेकिन समय आने पर इस लाज के पीछे से जो आंधी उठेगी, वह क्या तुम्हारी बहू को रोक सकेगी ! बड़े-बड़े उस आंधी में उड़ गए हैं । अच्छी-अच्छी औरतों के सतीत्व चले गये हैं ।'

रामलखन ने आतुर बन कर कहा—'तुम ठीक कहते हो, भैया !'

उस व्यक्ति ने कहा—'हम लोग सुगमता से उस बात को अनुभव नहीं कर सकते, क्योंकि अब जवानी की दहलीज से उतर आये हैं न ! पर जवानी का तूफान भारी होता है । औरत हो या मर्द, उस तूफान में क्या टिक सकता है, न, कभी नहीं । मैं तो कहता हूं कि वह तूफान भी है और ज्वाला भी है, जो जलाती है और फूंक देती है । राख का ढेर बना देती है ।'

एक युवक, जो एक स्कूल में मास्टर था, इतनी बात सुनकर बोला—'इन्द्रियों के जिस भोग की बात आप लोग करते हैं, उसे तूफान और आग बताया जाता है । जिसे जलना है वह जल जाता है ।' उसने कहा—'लेकिन इस देश में ऐसी नारियां और पुरुष भी हुए हैं कि जिन्होंने इन्द्रियों की भूख को सदा ही उपेक्षा भाव से देखा ।'

बात सुनी, तो एक प्रौढ़ व्यक्ति बोला—'मास्टर जी, यह बात सभी के लिये नहीं ।'

मास्टर ने कहा—'वासना की भट्टी में सभी नहीं जलते । मजदूर को पेट की चिन्ता होती है । यह भी पेट भरों का सवाल है ।'

तभी एक व्यक्ति बोला—'हमारे गांव का सांवलिया चमार अमीर नहीं था । मजदूर था । हरखू के लड़के की विधवा बहू को लेकर भाग गया था । केदारा सुनार भज्जू मेहतर की लड़की के लिए स्वयं भंगी बन गया ।'

मास्टर ने कहा—'राम-राम ! तुम भी कहां के उदाहरण ले बैठे ! भाई, जिनके पास विचार नहीं, जिन्दगी को समझने का ज्ञान नहीं; वे सब ऐसा भी कर बैठते हैं ।'

जल्दी से पूर्व वक्ता ने कहा—'और ऋषि विश्वामित्र क्या थे ? वे भी क्या मूर्ख थे ? जिन्दगी को नहीं समझते थे ?'

मास्टर ने जैसे लाल बन कर कहा—'मैं मानता हूं, वासना का भूत किसी को भी सता सकता है ! विवेकहीन बना सकता है । लेकिन उसके साथ परिस्थिति का भी तकाजा होता है, जब वैसे साधन बन जाते हैं, तो मनुष्य सचमुच ही अन्धा हो जाता है ।'

चौधरी रामलखन ने कहा—'ऐसी परिस्थिति सभी के समक्ष आ सकती है । यह जरूरी नहीं कि सभी अन्धे हों, लेकिन आशंका तो की जा सकती है ।'

पास बैठे हुए वृद्ध ने कहा—'हां, यही बात है, चौधरी !'

चौधरी ने कहा—'मैं अपने बेटे की बहू के लिये भी ऐसा ही सोचता हूं, वह बेचारी अभी कितने दिन की है । अभी बच्ची है । कठिनाई से बीस वर्ष की हुई है ।'

वृद्ध ने कहा—'वह भरी जवानी में लुट गयी है ।'

रामलखन ने कहा—'बात मेरी है, तो मैं सोचता हूं । परन्तु ऐसा ही दूसरे घरों में होता है । वहां औरतें सिसकती हैं, कराहती हैं । कुदरत की मांग क्या छुपायी जा सकती है ?'

मास्टर ने कहा—'हमारे समाज का पाप बढ़ रहा है । वह छुपाया भी जाता है ।'

रामलखन ने कहा—'लेकिन पाप छुप नहीं सकता । औरत यदि अपनी माँग रखती है, तो उसे पाप भी नहीं कहा जा सकता । जो भूखा है, और रोटी नहीं पाता, तो वह चोरी भी करता है जब कठोर बनता है, तो डाकू भी बन जाता है । यह पाप तो समाज के उन बुजुर्गों का है कि

जो उसे देखकर भी नहीं देखते। अपने बच्चों की आवश्यकता नहीं समझते। उसे पूरा नहीं कर पाते। धर्म की आड़ लेते हैं। वहीं तो पाप और व्यभिचार को जन्म देते हैं।'

वहां पर उपस्थित व्यक्तियों के लिये चौधरी रामलखन के ये विचार नये नहीं थे। वे प्राय: चौधरी से कुछ न कुछ सुन पाते थे। परन्तु अब तक रामलखन ने जो कुछ कहा, दूसरों के लिये कहा। लेकिन अब जब स्वयं अपने घर की विधवा बहू का प्रश्न उसके समक्ष आया, तो उसके लिये भी चौधरी के ते अमिट विचार पाकर सभी के मन में उसके प्रति श्रद्धा का भाव उमड़ आया।

मास्टर ने कहा—'चौधरी जी, आपके ये विचार ऊंचे हैं। उदार हैं। आपको यही कहते शोभा देते हैं।'

रामलखन ने कहा—'मै बेटा खोकर भी बहू को नहीं खोऊंगा। मैं उसकी सहानुभूति और स्नेह अपने घर के लिये रखूंगा। वह शरीर से कहीं जाना चाहे, तो अवश्य जाये। मैं उसका रास्ता नहीं रोकूंगा।'

एक व्यक्ति ने प्रश्न किया—'तो क्या आा उसे विवाह करने की आज्ञा देंगे? अपने घर से जाने देंगे?'

रामलखन ने कहा—'हां, क्यों नहीं जाने दूंगा। वह जायेगी, तो मैं स्वयं अपने ही हाथों से, अपनी बहू को डोले में बैठाऊंगा। एक दि। बहू बनाकर लाया था, तो आने वाले एक दिन मैं बेटी बना कर भी भेज सकूंगा।'

वृद्ध ने कहा—'तुम समर्थ हो, रामलखन! ऊंची बात सोचते हो।'

रामलखन ने कहा—'जो सत्य है, मैं उसे नहीं मिटा सकता। उस शाश्वत पर पर्दा नहीं डाल सकता।'

'पर तुम्हारी बहू ऐसा नहीं चाहेगी'—वृद्ध ने कहा।

रामलखन ने कहा—'मैं अपनी बहू को मना लूंगा। आवश्यकता

पड़ी, तो बेटे की बहू को सुख प्राप्त कराने के लिये, अपनी बहू के पैर पकड़ लूंगा।'

'हां, हां, तुम सभी कुछ कर सकते हो, भाई!' वृद्ध ने कहा और आदर पूर्ण दृष्टि से रामलखन की ओर देखा।

रामलखन खड़ा हो गया। उसने कहा—'गांव की बीमारी तो गयी, पर भुखमरी आ गयी। मुझे इसकी चिन्ता है। सरकार से फिर कुछ सहायता करने के लिये कहा है।'

मास्टर ने कहा—'सरकार कम सुनती है। उसकी मशीन खराब है। ऑफीसर बड़ी-बड़ी तनख्वाहें पाते हैं और गरीब जनता की ओर से मुंह मोड़ कर बैठते हैं।'

रामलखन ने सांस भरी—'यही तो परेशानी है। अब हमारे नेता भी अन्धे बन गये हैं। सरकारी कुर्सी पर बैठ कर वे भी सोने-चांदी की दुनिया में खो गये हैं।'

मास्टर ने कहा—'वे पैसे वालों के हाथों में चले गये हैं।'

रामलखन ने अपना मत नहीं दिया। वह लाठी उठाकर वहां से चल दिया। उसका मन एक अजीब प्रकार के उद्वेलन से भर गया था।

४

कमला अपने माता-पिता की इकलौती और लाडली बेटी थी। यद्यपि, आन्तरिक रूप से चौधरी रामलखन की आर्थिक अवस्था अच्छी नहीं थी, परन्तु घर के बाहर बिरादरी में उसकी प्रतिष्ठा थी। रतनलाल उसका इकलौता लड़का था। वह ग्रेजुएट था। लेकिन उसे नौकरी करने में रुचि नहीं थी। घर पर जितनी जमीन थी, उसीसे उपार्जित करके जीवन का पोषण करना उसे प्रिय था। कदाचित यह उसके पिता रामलखन की सीख थी। लेकिन जब उसका कमला सरीखी महत्वाकांक्षिणी युवती से विवाह सम्बन्ध स्थापित हुआ, तो तब, मानो रतनलाल को नये सिरे से जीवन के भविष्य पर विचार करना पड़ गया। बात यह थी कि कमला के पिता ने रतन के साथ अपनी पुत्री का विवाह केवल इसी इच्छा पर आधारित होकर किया कि लड़का सरकारी विभाग में कोई बड़ा आफीसर बनेगा। अथवा प्रोफेसर या वकील बनेगा। लेकिन जब उनके साथ स्वयं उनकी पुत्री ने अपने पति को गांव का एक छोटा सा काश्तकार बना देखा, हल चलाते पाया, खेतों में पानी देते हुए देखा तो तब, न उसके पिता को अच्छा लगा, न कमला को। रतन खेत गोड़ कर, पानी देकर या हल चलाकर घर आता, तो तब, कमला उसे देख पाते

ही, जैसे अपनी छाती में धुआं सा घुटा पाती। वह उन क्षणों में अनुभव करती कि उसका भाग्य फूट गया...जिस जीवन की बाजी वह जीतने चली थी, वह हार गयी। ·जीवन के प्रथम प्रहर में ही वह खो गयी।

रतन जल्दी ही, अपनी मधुर पत्नी के मन की इस दुर्बल अवस्था को समझ गया था। जब कमला विरोध प्रगट करती, तो रतन या तो मौन बन जाता, अथवा वह बड़े नम्र भाव में कमला को बताने का प्रयत्न करता कि इन्सान का जन्म केवल इसलिये नहीं हुआ कि वह किसी अप्सरा के समान अपने को सजाये रखे। केवल जीवन का निर्वाह करने के लिये पैसा चाहिये। अन्न चाहिये, वस्त्र चाहिये। जब मैं उसे खेत जोत कर सुगमता से प्राप्त कर सकता हूँ, तो मुझे भला नौकरी क्यों करनी चाहिये! बाबू क्यों बनना चाहिये! मुझे किसान या मजदूर क्यों न बनना चाहिये?

किन्तु इतनी बात पर कमला और अधिक तुनक जाती। वह तुरन्त अपने स्वर में क्षोभ भर लाती और कहती, तो तुमने बी० ए० की डिग्री क्यों प्राप्त की! उसकी कीमत क्यों बेकार की! भला यहां उसकी क्या उपयोगिता है! तुम्हें क्या मिलता है? पेट भी कठिनाई से भरता है, शऊर से वस्त्र भी नहीं प्राप्त होता।

लेकिन रतनलाल जैसे किसी और धातु से बना था। उसके मन पर पिता के विचारों का पूर्णरूप से प्रभाव पड़ा था। जब वह कमला के मुंह से अपनी पढ़ाई की व्यर्थता को सुनता, तो तब; कभी मुसकराता और कभी हंस देता। मानो कमला जो कुछ कह रही थी, उसमें अज्ञानता अधिक थी, समझ कम! परन्तु कभी-कभी ऐसे अवसर आते कि जब रतनलाल अतिशय गम्भीर बन जाता और कहता, तुम्हारे पिता के पास पैसा है न, तो तुम्हें यही सिखाया है! जो काम तुम्हें स्वयं करना चाहिये, उसे नौकर से कराना तुमने अभीष्ट समझा।

जीवन के भोग भोगना ही तुम्हें पसन्द आया ! वह कहता, परन्तु जिस देश की मिट्टी में तुम्हारा जन्म हुआ है, जीवन में एक बार भी समझा तुमने कि वह देश गरीब है ... ... जीवन की साधना में लगा है ! आज वही देश त्रस्त है ! दुःखी है ! क्यों ! इसलिये कि अशिक्षित है। रूढ़िवादी है ! पूंजीवाद के जाल में पड़ा कसक रहा है ! मूक जानवर के समान आज इस देश के इन्सान का वध किया जा रहा है ... ... पूंजीवाद उसी इन्सान के रक्त की अञ्जलि भर रहा है और पीकर अपनी प्यास बुझा रहा है ... ...

ऐसे समय, कमला का वह सौन्दर्य, वह माधुर्य, जो उसे जन्म से ही प्राप्त हुआ था और जिसे उसके पिता के ऐश्वर्य ने और अधिक सुकोमल बना कर निखार दिया था, तब मानो एकाएक ही बदल जाता। उसका रंग काला पड़ जाता। वह सहम जाती। वह जैसे रतनलाल को कोई बड़ा भारी रहस्यवादी कठोर व्यक्ति समझने लगती। जैसे क्रूर! जैसे पत्थर ! इसलिये, वह एकाएक कुछ भी न बोल पाती। केवल विस्मय भरी दृष्टि के साथ रतनलाल की ओर देखती रह जाती।

लेकिन रतनलाल कमला की उस भाव-भंगी को देख, पुनः कहता—'कमला रानी, पैसा पाकर आमोद प्रमोद का जीवन तो सभी स्वीकार करते हैं, किन्तु दरिद्रता, भूख की ज्वाला और विपन्नता में पड़े व्यक्ति की कराह को सुनने वाला क्या तुम्हें हर जगह मिल सकता है ? तुम सच कहती हो कि मैंने दुनियादारी की दृष्टि से अपनी पढ़ाई का कोई उपयोग नहीं किया। न तुम्हें उसका कोई लाभ मिला, न मेरे माता-पिता को। सच ही, मैं पढ़कर कुछ रुपया उपार्जित करता, कोई अच्छी नौकरी पाता। मैं अफसर बनता। तुम्हें बंगले में रखता। नौकर-नौकरानियों से तुम्हें घेर देता। किन्तु ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। तुम्हारी दृष्टि में मेरा पढ़ना बेकार चला गया। और तुम यह भी अनुभव करती होगी कि मैं गंवार का गंवार ही बना रहा। मैं पत्थर

ही रहा ... केवल जड़ ... ...'

एक बार जब इसी प्रकार की बात चली, तो तब, रतनलाल ने अत्यन्त नम्र और मृदु स्वर में कमला को सम्बोधित किया और उसका कोमल हाथ पकड़ कर कहा—कमला रानी, आज कहता हूँ तुमसे, मैंने स्कूल-कालेज में परीक्षा के हेतु किताबें भले ही पढ़ी हों, लेकिन इन्सान का दर्शन, इन्सान का तत्व-ज्ञान, मुझे साक्षर बनकर ही प्राप्त हुआ। यदि मैं कुछ न पढ़ पाता, तो कोरा गंवार रहता। मूर्ख ही बना रहता। जीवन के अन्धेरे में पड़ा होता।'

उस दिन जाने किस प्रकार कमला ने अपने स्वभाव के विपरीत बन कर कहा 'और तुम्हारे पिताजी तो अधिक नहीं पढ़े-लिखे। वे भी तो इन्सान का दर्द समझते हैं। इन्सान का दर्शन जानते हैं।'

रतन ने कहा—'पिताजी का अनुभव बड़ा है। वह स्कूल की किताबों की पढ़ाई से ऊंचा है। मैं तो कहता हूं कि मैंने कुछ पढ़ कर, यह समझना सीख लिया है कि इन्सान की पीड़ा को किस प्रकार देखा जाता है ... ... इन्सान के समीप किस प्रकार पहुंचा जा सकता है।

कमला ने जैसे उपहास किया—'तो तुमने इन्सान को समझा है? उसे पाया है? इन्सान को खोजा है?

रतनलाल ने कहा कि—मैं पूर्ण अधिकार की बात नहीं कह सकता। हां, इतना मानता हूं कि अन्धकार में पड़े इन्सान तक पहुंचने की मुझमें इच्छा पैदा हुई है। मेरे हाथों में मशाल है, उसका प्रकाश उस इन्सान को भी दिखाने की भावना है।

कमला ने आंखों से मुसकराया—'तो यों कहो, तुम भी महान बनने की इच्छा रखते हो। इन्सान के पथ-द्रष्टा बनना चाहते हो!'

रतन का उत्साह जैसे फिर गिर गया। उसने कहा—'मैं

ऐसा दम्भ नहीं करता । परन्तु जितना पढ़ा है, उसे समाज को देना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूं । मनुष्य समाज का अङ्ग है । समाज से ही हमने सब कुछ पाया है । उसे लौटाना हमारा नैतिक कर्त्तव्य है ।' और कहा उसने—'पर तुम ऐसा स्वीकार नहीं करतीं । तुम नहीं चाहतीं कि देखो कि तुम्हारे इस सुन्दर जीवन के पार भी कुछ है । वहां रोदन है, चीत्कार है, अमानुषिकता है ।'

एकाएक कमला ने झुंझला कर कहा—'ओह ! तुम उपदेश देते हो । अब तुम अपने को समाज का गुरु मानते हो !'

रतन इतनी बात सुनते ही, जैसे ऊंचे पहाड़ से किसी गहरे खड्ड में डाल दिया गया । वह तिलमिला गया । तब उसने एकाएक ही अपनी वाणी को रोक लिया । वह पहिला दिन था कि जब उसने वहाँ से उठते हुए, अत्यन्त खेद भरे स्वर में कहा—'कमला, तुम पत्थर हो......नारी बन कर भी निर्मम, निरी जड़ ।'

किन्तु कमला तो जैसे लड़ने के लिए उद्यत थी । वह रतन से ऐसे भी उद्‌गार सुनने के लिए प्रस्तुत थी । इसलिए तुरन्त ही बोली—'पत्थर मैं या तुम ! जब ऐसा था, तो विवाह न करते । मेरा जीवन तो न बिगाड़ते ! मेरा ऐसा भाग्य कि......'

वहाँ से जाते-जाते एकाएक रुक कर, रतन ने जैसे क्रोध भरे स्वर में कहा—'तुम अपने बाप के घर जा सकती हो । सदा के लिए मुझसे और इस घर से सम्बन्ध तोड़ सकती हो !—'

आश्चर्य कि इतनी बात सुन कर भी कमला का माथा नहीं ठनका । वह उसी प्रकार तटस्थ बनी रही । अपितु, पहिले से अधिक क्रोध में भर गई । रतन अपनी बात कह कर चला गया । पीछे अकेली रह गई कमला ने अपने दोनों हाथों की मुट्ठियाँ भींच लीं और अत्यन्त रोष भरे स्वर में अपने-आप कहा— ओहो ! हजरत आज आ गये हैं अपने असली रूप में । निरे गंवार......जाहिल......'

कमला उठ कर अपने कमरे में चली गई। अच्छी बात यह थी कि उस समय रतन की मां भी घर पर नहीं थी, किसी पड़ौसी के घर बैठी थी। वैसे भी जब रतन घर पर होता, तो वह स्वयं किसी और जगह जा बैठती थी। इसलिए, उस समय भी, जब रतन अपनी बात कह कर घर से चला गया, तो कमला कमरे में जाते ही, पलंग पर गिर पड़ी और एकाएक फूट कर रोती हुई अपने आप बोली—'हाय ! मैं भाग्य की इतनी बदकिस्मत निकली ! अपनी साथिनों में मैं ही हीन निकली ! —'

कमला के मन में उसी समय बात आई कि वह पिता को पत्र लिखेगी और जल्दी ही, अपने घर लौट जायेगी। किन्तु उसी समय रतन की मां घर में आई। वह कमला के कमरे के सामने खड़ी होकर बोली—'अरी बहू !'

कमला मौन, जैसे निर्वाक् !

माँ ने कमला को धोती के पल्ले से मुंह ढँके देख, कुछ और जोर से कहा—'अरी—सो गई क्या ? सुनती नहीं !'

तब कमला ने अपना मुंह खोल दिया। उसकी लाल आँखें देख रतन की माँ ने कहा—'अरी तू रोई है क्या ?' वह कुछ और आगे बढ़ी और कमरे की दहलीज पर अपना एक पैर रख कर बोली—'बता तो, क्या हुआ ? तेरे मन में क्या आया बहू !' उसने कहा—'अभी रतन भी बाहर गुमसुम बैठा था ; आँखें चढ़ाये था। जरूर, तूने उससे कुछ कह दिया—उसका दिल दुःखा दिया।—'

कमला ने तुनक कर कहा—'जी, मैं ऐसी ही हूँ। मूर्ख हूँ।'

मां एकाएक चकित रह गई। वह पहिला ही दिन था कि जब कमला एक नये स्वर में बोल रही थी। वह अभी तक मां के सामने कम बोलती आई थी। किन्तु रतन की मां स्वयं कम गुसियारी नहीं थी। फिर भी, उस समय, उसने अपने स्वभाव के विपरीत संयम से

काम लिया और अपने स्वर को और अधिक नरम बना कर कहा—'न, मेरी अच्छी बहू ! मैं कब कहती हूं कि तू मूर्ख है। पर इतना बताये देती हूं कि मेरा रतन कभी किसी पर गुस्सा नहीं करता और जब करता है, तो वह आसानी से काबू में भी नहीं आ पाता। वह तो ठीक अपने पिता पर गया है। पर तू बता कि तुझे और उसे गुस्सा किस बात पर आया ? तुम दोनों क्यों लड़ पड़े ?'

उसी समय, रतन घर में आया और तेज स्वर में बोला—'मां, तुम कमला को इसके पिता के घर पहुंचा दो। न तुमने मेरे साथ न्याय किया, न कमला के पिता ने अपनी पुत्री के साथ ! दोनों को गलत दिशा की ओर धकेल दिया !

माँ ने विस्फारित होकर रतन की ओर देखा और कहा 'तू क्या कहता है, रे ! क्या मां-बाप भी अपनी औलादों के साथ अन्याय करते हैं ? —,

रतन ने कहा—'इस कमला के साथ यही किया गया हैं। इसे ऐसा पति मिलना चाहिये थां कि जो बंगलों में रहता, मोटर में सर करता, नौकर-चाकर रख पाता। जो गरीबों और असहायों का शोषण करके रुपया प्राप्त करता और ऐश्वर्य के साधन जुटाता.........हां, तुम तुरन्त इस कमला को इसके पिता के यहां भेज दो। यह मुझ सरीखे किसान और मजदूरी का काम करने वाले के यहां नहीं रह सकती। यहां इसकी जिन्दगी नहीं कट सकती। यहां नौकर नहीं। यहां हाथ से सब काम करना है। पीसना है, रोटी पकाना है, गोबर पाथना है, यह गरीब का घर है, किसान और मजदूर का घर है।'

पुत्र को क्रोध में देख, मां न गम्भीर बनी, न हंसी। अपितु, वह हल्का सा मुसकराती हुई बोली—'क्यों रे, तू इतनी बात तो करता है और अगर मेरी नन्हीं सी बहू की इच्छा पूरी करने के लिये कोई और काम करले, तो क्या बुरा है ? पर तुझ पर तो बाप का जादू चढ़ा

है। वही तेरे सिर पर बोलता है। बता तो, तूने इतना पढ़ कर पाया क्या ?'

रतन ने कहा—'मैंने बहुत कुछ पाया है, मां, ! और मुझे अपने पिता पर गर्व है ! यह मेरा भाग्य है कि मुझे ऐसा पिता मिला।'

'जो निरा भूखा ... ... कंगाल !'—माँ ने जैसे रुष्ट होते हुए कहा।

रतन ने कहा—'पिताजी यदि और अधिक भूखे और कंगाल बन जायेंगे, तो, तब, और अधिक तपेंगे। वे यदि बाकी जमीन भी लोगों को देना पसन्द करें, तो मैं न रोकूंगा। मैं तब अपने पिता की पहिले से अधिक इज्जत करूंगा।' यह कहते हुए रतन फिर बाहर चला गया।

उसी समय उसकी माँ कमरे में प्रविष्ट हुई और पंलग पर उठ कर बैठी कमला के सिर पर हाथ फेरती हुए बोली—'सुना बहू ! ऐसा है, मेरा रतन ... ... तेरा पति ! सच निरा भोला ! अरी, यह तो अपने पिता की डगर पर ही चलेगा। साधु नहीं बना, तो कंगाल अवश्य जीवन भर बना रहेगा।' उसने कहा—'बहू, पैसे वाला पति तो तुझे दूसरा भी मिल जाता। पर इतना भोला, ऐसा सुकुमार और निश्छल पति शायद ही तुझे दूसरा मिल पाता। औरतें अपने पतियों के हाथों में खेलती हैं, पर मेरा रतन सदा तेरा ही मुंह जोहता रहेगा। यह तेरे विरुद्ध नहीं जायेगा। आज सचमुच, तेरी किसी बात से रतन को दुःख हुआ है। उसे क्रोध आया है। उसने भी तुझसे कुछ कहा, तो तुझे रोना आया है। चल, उठ ! देख दिन ढल गया। आसमान में बादल आ गये। ऊपर छत पर कपड़े पड़े होंगे, उन्हें उठाला। कण्डे भी फैले पड़े होंगे, भीग जायेंगे। ठीक से रख आ। अब यह घर तो तेरा ही मुंह देखता है। तुझसे ही शोभा पाता है, मेरी बहू !'

तभी दरवाजे पर कान्त का स्वर सुन पड़ा। वह अन्दर आया।

आते ही, उसने रतन की मां से पूछा—'भाभी कहां है, चाची !'

चाची ने कमरे की ओर हाथ उठा दिया और बताया कि यह रही तेरी भाभी !' तब कांत हंसता हुआ उसी कमरे के पार पहुंच गया और बोला—'नमस्ते, भाभी जी !'

कमला ने जैसे अज्ञात भाव में कान्त की ओर देखा और बरबस ही अपना सिर झुका दिया।

५

वही कान्त, जब रतनलाल की मृत्यु का समाचार पाकर गांव आया, तो निश्चय ही, वह एकाएक अपने को नहीं सम्भाल सका। वह कमला की दयनीय अवस्था भी सिर उठाकर नहीं देख सका। मनुष्य अपने आप में कितना हीन, कायर और अस्थिर है, यह भी उस तरुण शशिकान्त के मन में बरबस ही आया। रतन और वह, न केवल कौटुम्बिक आत्मीय थे, अपितु सगे सहोदर से अधिक उन दोनों में स्नेह स्थापित था। लेकिन जब कमला उस घर में बहू बन कर आई, तो कान्त को जैसे एक ऐसा साथी प्राप्त हो गया कि जो उसके पूर्व जीवन से ही, उससे परिचित था, नितान्त अभिन्न! कमला के रूप में मधुर भाभी को पाकर वह अपार सुखी था। परन्तु जब वही भाभी, जब-जीवन के खुले चौराहे पर लुट गयी, तो कान्त अपने को नहीं सम्भाल सका। वह रतनलाल को खोकर भी जैसे स्वयं खो गया। निःसन्देह, रतन की मृत्यु का जितना दुःख और सन्ताप शशिकान्त को हुआ, उतना रामलखन के कुटुम्बियों में किसी को नहीं हुआ। वह युवक मानों स्वयं भी अकेला हो गया। जीवन के पथ पर पिछड़ गया। रतनलाल आगे निकल गया, कान्त को पीछे छोड़ गया।

किन्तु शशिकान्त के समक्ष जो अब एक नयी समस्या थी, वह यह कि क्या कमला का जीवन अब हरा-भरा नहीं रहेगा ! उस कोयल की कूक क्या सुनायी नहीं देगी कि जो एक दिन आम के बौरों की बहार पर समस्त बाग को गुंजा रही थी। क्या सचमुच ही, इस सलोनी और मधुर कमला का जीवन समाज और स्वयं उसकी दृष्टि में एक काँटा मात्र रह जायगा ? इस प्रकार, कान्त अपने-आप में अनेक प्रकार की बातें सोचता और उन्हें अपने हृदय के अन्तर पट में उतार लेता था। उसी समय, कान्त को ज्ञात हुआ कि कमला के पिता अपनी लड़की का दूसरा विवाह करना चाहते हैं। पुत्री को अपने पास बुलाना पसन्द करते हैं। इतना सुनकर कान्त के मन में जिज्ञासा उदय हुई, तो क्या कमला अवश्य ही अपना दूसरा विवाह कर लेगी ? इस घर को और गाँव को छोड़ देगी ? तो क्या कमला अब एक बार भी भूल जायेगी कि वह एक दिन इस गांव में बहू बन कर आई थी। क्या कमला उस रतनलाल को भी भूल जायेगी कि जिसकी एक दिन वह अर्धांगिनी बनी थी ? उसे नारी का सुलभ और सुकोमल माधुर्य्य प्रदान किया था ? इस प्रकार के अनेक प्रश्न कान्त के मन में चक्कर लगा रहे थे। ये प्रश्न जब वह गांव में नहीं सुलझा सका, तो उन्हें अपने मस्तिष्क में लिये शहर लौट गया। वह समय उसकी परीक्षा का था। वर्ष भर का परिश्रम उस समय ही उसे सार्थक करना था। इसलिये, वह अधिक समय तक गाँव में नहीं रह सका।

लेकिन परीक्षा देने के बाद शशिकान्त फिर गांव लौट आया। वह उसी दिन ही, चौधरी रामलखन के घर पहुँचा। वहां जाकर उसे पता चला कि अभी सप्ताह भर हुआ कि कमला के पिता आये और अपनी पुत्री को ले गये। उसी प्रसंग में रतनलाल की माँ ने बताया कि जरूर, कमला ने अपने पिता को पत्र लिखा होगा। कमला ने स्वयं जाने के लिये अपने पिता से कहा होगा।

इस समाचार को पाकर शशिकान्त को कितना दुःख हुआ, वह सुगमता से नहीं बताया जा सकता। सचाई यह थी कि वह कमला के प्रति जिस प्रकार की ऊंची भावनायें रखता था, वे सभी, एकाएक पानी के समान प्रवाहित हो गयीं। उस समय, उसे इतना क्रोध आया कि यदि कमला उसके समक्ष होती, तो वह उसे फटकार देता। वह साफ कह देता कि क्या यही तुम्हारे जीवन की शोभा है ! यही साधना है, नारी के जीवन की ! औरत का जन्म क्या इसीलिये हुआ है कि वह कुतिया के समान जगह-जगह फिरे और वासना गन्ध में डूबती रहे।

परन्तु शशिकान्त के मन का वह क्रोध यदि उस तक ही सीमित रहता, तो ठीक था। वह उसे रोक नहीं सका। उसने गांव से ही, कमला को एक बड़ा पत्र लिखा। वह पत्र कुछ उपदेश से भरा था और कुछ क्रोध भरे वाक्यों से। शशिकान्त समझता था कि उसे पत्र का उत्तर नहीं मिलेगा। परन्तु उसी सप्ताह उसे कमला का उत्तर प्राप्त हुआ। कमला का पत्र अधिक बड़ा नहीं था, छोटा था। लेकिन उस छोटे से पत्र में कमला ने स्पष्ट बता दिया था कि उसके मन में क्या है ? उसने लिखा था, मैं जिस पति की पत्नी बनकर आज विधवा हो गई हूँ, तुम जानते हो कि मैं उस पति से सदा लड़ती रही। उस पति की विचारधारा से कभी भी सहमत नहीं रही। लेकिन अब केवल मैं इतना ही कह सकती हूँ कि वे बातें, वे अमर उपदेश, जो रात-दिन मैं अपने पति से पाती थी और उनके प्रति उपेक्षित होती थी, दुर्भाग्य से अब मुझे सुनने को नहीं मिलेंगे। लेकिन मैं उस व्यक्ति की कल्पना में सदा निरत रहूंगी। मैंने अपने जीवन का एक अवसर तो खो दिया, अब दूसरा अवसर खोकर देवता सदृश स्वसुर से नाता तोड़ने की शक्ति नहीं पा सकूंगी।

उस पत्र में ही कमला ने लिखा था, मैंने अनुभव किया है कि तुमने अपने अधिकार के अनुरूप ही, मुझे पत्र लिखा। मुझ पर क्रोध

प्रदर्शित किया। यहां मेरे सन्ताप से मेरी माँ दुःखी है। वह अस्वस्थ हो गई है। लगता है कि मां अपनी पुत्री का वैधव्य देखकर, एकाएक ही मृत्यु की ओर जा रही है। मैं माँ के स्वस्थ होते ही लौट आऊंगी। तब तुमसे बात करूंगी।

कमला का पत्र पाकर, उसी दिन कान्त चौधरी रामलखन के घर पहुँचा। वह चाची को सम्बोधित करके बोला—'चाची, एक बात कहता हूँ, भाभी इस घर से दूर नहीं जायेगी। नाता नहीं तोड़ेगी।'

चाची ने इतना सुना, तो आश्चर्य के साथ कान्त की ओर देखा—जैसे उसे कान्त की बात पर विश्वास नहीं हुआ।

शशिकान्त ने जेब से पत्र निकाल कर दिखाया—'यह भाभी का पत्र आया है। मैंने उसे पत्र दिया था। फटकारा था।'

चाची ने साँस भरी और कहा—'अरे, बेटा ? वह पढ़ी-लिखी औरत है। रतन से ही उसका झगड़ा चलता था। उसे क्या इस गाँव में रहना अच्छा लगता था ? देख लेना, वह नहीं आयेगी। वह किसी और घर को आबाद करेगी।'

कान्त ने कहा—'मैं नहीं मान सकता ! भाभी को इतनी झूठी नहीं समझता।'

चाची ने अपने सूखे होठों पर जीभ फेरी और कहा—'भैया, जब वह आये तो, न आये तो, मेरे घर का तो दीपक बुझ गया।' और तभी वह साँस भर कर बोली—'अच्छा ही तो है, वह कहीं और जाती है, तो जावे ! किसी भी घर को आबाद करे। बाल-बच्चे वाली बने !' 'उसने कहा—'बेटा कान्त ! जमाना भी तो क्या आगया है। वह ठहरी औरत,—जवान—शक्ल सूरत की अच्छी—तो भला, उसका इस तरह रहना क्या सुगम रहेगा। अरे, वह न गलत रास्ते पर जायेगी, तो लोग उंगली उठाकर कहेंगे, यह है, चौधरी के बेटे की विधवा, एक को खोकर अब दूसरा पाने चली है,—फिर तीसरा—राम राम ! मुंह

नौचले ऐसे आदमियों का ! रांड तो रडांपा काटले, पर रंडवे काटने दें, तब तो ! भला तूने चिट्ठी लिखी क्यों रे ! जाने क्या कहेगा, उसका बाप ! उसकी मेहतारी !'

कांत ने कहा—'उन्हें कुछ कहना है, तो कहा करें। जहां तक मेरी शक्ति होगी, मैं कहूँगा। कहता रहूंगा।

चाची ने कहा—'न, बेटा ! जमाना खराब है ! विधवा पर कोई भी उंगली उठा सकता है !'

कान्त ने कहा—'मैं जमाने की बात नहीं सुनता। ऐसी बातों पर कान नहीं देता।

उसी समय चाची फिर कुछ कहने चली थी, कि तभी चौधरी रामलखन घर में आये। उनके हाथ में एक लिफाफा था। उस लिफाफे को पत्नी को दिखाकर कहा—'कमला का पत्र आया है। उसकी माँ बीमार है। जल्दी आ जायेगी।'

पत्नी ने कहा—'कान्त के पास भी तो पत्र आया है।'

रामलखन ने कहा—'कमला ने अपने पत्र में यह भी लिखा है।'

पत्नी बोली—'मैं इस कान्त से कहती हूं कि कमला से कुछ कहना-सुनन बेकार है। उसे जो कुछ करना है, करेगी।'

रामलखन ने कहा—' मला समझदार है।'

पत्नी बोली—'मैं कहती हूं अगर उसका पिता अपनी पुत्री का दूसरा विवाह करना चाहता है, तो हमें आपत्ति क्या ! वह जहां रहे, सुखी रहे।'

रामलखन ने जैसे खिसिया कर कहा—'मैं कहता हूं, बार-बार इस विवाह के प्रसंग को उठाना क्या अच्छा है ? यह कमला का अपना काम है। वह अब बच्ची नहीं है। सुना कान्त, तुम भी उससे विवाह की बात पर कुछ न कहना। कमला को ऐसा सुनना भी पसन्द नहीं आता।'

कान्त ने कहा—'मुझे क्रोध आ गया था।'

रामलखन ने कहा—'यह भी स्वाभाविक था। खून जोश मारता है।'

कान्त बोला—'वैसे मैं भी इस विवाह की बात का महत्व नहीं देता।'

रामलखन ने कहा—'वैसे मेरी इच्छा थी कि कमला इस गांव को और बिरादरी को बता दे कि जीवन की साधना किस प्रका की जाती है। विवाह करके तो यह नर-नारी का समाज त्रस्त बनता है .. मौत को नजदीक बुलाता है। पाप का सृजन करता है। ऐसा समाज दम्भी और स्वार्थी बनता है।'

कान्त ने कहा—'चाचा जी, भाभी आपके ही आदेश का पालन करेगी ?'

चाचा ने सांस भरी—'मुझे कुछ नहीं सूझता बेटा ! कमला एक बड़े अन्धड़ में फंस गयी है। उसे सहारा चाहिए उस बेचारी का संसार लुट गया है। उसे एक ऐसा तपस्वी चाहिए कि जो कुन्दन के समान जिन्दगी की आभा से तप कर निकला हो। जिसका जीवन संघर्ष में बीता हो ! जो वासना की पुकार को केवल कल्पना मानता हो।' और उन्होंने ऊपर आसमान की ओर देखकर कहा—'भला ऐसा व्यक्ति कहां मिलेगा, मेरी नन्हीं बहू को।'

कान्त ने कहा—'वह व्यक्ति तो है। भाभी को मिला है।'

रामलखन ने चकित बन कर उसकी ओर देखा—'भला वह कौन?'

कान्त ने कहा—'चाचा जी, आप। भला आपसे श्रेष्ठ उपदेशक भाभी को इस जगत में और कौन मिलेगा।'

चाचा ने कहा—'बेटा, कान्त ! अब मैं बूढ़ा होगया। मेरे उपदेशों का इस पढ़े-लिखे जगत में महत्व भी अधिक नहीं रहा। कमला को एक कर्मठ सहयोगी की आवश्यकता है। अब उसके समक्ष एक ऐसा आयोजन प्रस्तुत होना चाहिये कि जिसमें वह लगी रहे। व्यस्त रहे।'

कान्त ने कहा—'चाचा जी, देश और समाज में काम की कमी नहीं। आवश्यकता काम करने वालों की है।'

चाचा ने कहा—'मैं मानता हूं। इस अभाव को देखता हूं।'

कान्त बोला—'भाभी आये तो! उसने भी कुछ निश्चय किया होगा।'

चाचा ने कहा—'मेरी आकांक्षा है, मेरे पुत्र की बहू आदर्श नारी बने। वह विलास और भोग की कीचड़ में न फँसे।'

पत्नी उस समय, देर से मौन बैठी थी। तभी छूटते बोली—'बूढ़े तोते राम-राम रटते हैं न! यही तुम्हारी बात है। जवान बहू को आदर्श बनने का उपदेश देते हो। मैं कहती हूं ऐसे थोथे आदर्श से जिन्दगी की गाड़ी नहीं चला करती। अगर तुम्हें अपने मुंह पर का लिख नहीं पुतानी तो कुछ और सोचो। कोई लड़का खोज लो। कमला का विवाह कर दो।'

चौधरी ने कहा—'भगवान को जैसा स्वीकार होगा, वही होगा।'

कान्त खड़ा हो गया। वह चाचा और चाची को नमस्ते करके चल दिया। जब वह घर से बाहर चला गया, तो तभी पत्नी ने चौधरी को सुना कर कहा—'एक बात कहती हूं अब इस, कान्त का भी बहू से अधिक मिलना बैठना शोभा नहीं देता। दोनों जवान हैं। और अभी कान्त का विवाह भी नहीं हुआ है।'

चौधरी ने कहा—'कान्त भला लड़का है। चरित्र का अच्छा है।'

पत्नी ने तुनक कर कहा—'बस, तुम से कुछ कहना भी पाप है। मैं कहती हूं, बुरा कौन और अच्छा कौन, हमें यह नहीं देखना। हमें तो समय की हालत देखनी है। जब रतन था, तो आता था, बैठता था। हँसता-बोलता भी था। तब हमें भला क्या कहना था! लड़का अपना है, घर उसका है, इसे आना ही था, बैठना ही था।'

रामलखन ने कहा—'चौधरी नरपत कहते थे कि तुम अपनी बहू

को कान्त के साथ विवाह दो। यों बहू तुम्हारे ही घर में रहेगी।'

पत्नी ने तुरन्त ही कहा—'न, न, ऐसी बात मुंह पर भी न लाना। चौधरी नरपत को भी रोक देना। वह बूढ़े हैं न, तो पुरानी बात सोचते हैं। यह नहीं समझते कि आजकल हवा कौनसी चल रही है। बात एक मुंह से निकल कर सौ मुंहों पर नाचती है।'

रामलखन ने कहा—'कान्त का पिता पसन्द करे, तो हम स्वीकार कर लेंगे।'

'वह नहीं चाहेगा। उसके पास पैसा है! लड़का भी ऊंची पढ़ाई में चल रहा है! खूबसूरत है! वह किसी ऊंचे घर की बहू लायेगा।'

चौधरी बोला—'कमला से अच्छी बहू नहीं मिलेगी। ऐसी सुबोध और सुन्दर भी नहीं।'

पत्नी ने तब ध्यान से, जैसे रहस्यपूर्ण दृष्टि से पति को लक्ष किया। उसने कहा—'इतना कहे देती हूं, अगर कमला इस घर से चली गई, तो मैं जल्दी मिट जाऊंगी। उसे देख कर मैं सोच लेती हूं, बेटा न सही, उसकी बहू तो है। घर उसके ऊपर है।'

चौधरी ने कहा—भरोसा रखो, कमला नहीं जाएगी। वह इसी घर में रहेगी।' और तभी चौधरी ने देखा कि पत्नी की आंखें भर आई हैं। वे उसके सूखे गालों पर भी ढुलक आई हैं।

रामलखन ने कहा—'मैं तुमसे यह कहने आया था कि कमला की मां बीमार है। जब उसका पत्र आया है, तो मुझे जाना चाहिए। देख आना चाहिए।'

पत्नी ने कहा—'हां! जरूर जाना चाहिए। तुम्हारी समधिन है।'

रामलखन ने मुस्कराकर कहा—'दोनों बूढ़े हैं। दोनों ही लम्बा सफर कर चुके हैं।'

पत्नी ने कहा—'कमला की मां को आराम हो, तो उसे ले आना। मेरा मन नहीं लगता। अब तो घर में रहना भी अच्छा नहीं लगता।'

चौधरी रामलखन ने खड़े होकर कहा—'अच्छा, अच्छा!'

६

चौधरी रामलखन जब अपने पुत्र की सुसराल से लौटे, तो कमला भी साथ आ गई। वह लगभग एक सप्ताह बाहर रहे थे। जब घर आए, तो उनकी पत्नी की बहिन आई हुई थी, वह भी वृद्धा थी। वह नारी अपने यौवन काल में ही विधवा हो चुकी थी। वैसे स्वभाव की दोनों बहिनें समान थीं। दोनों की उग्रता किसी एक से कम नहीं थी। रामलखन ने जब अपनी पत्नी की बहिन को वहां आई देखा, तो बरबस ही, उसका माथा ठनक गया। क्योंकि झगड़ा करने में उसकी पत्नी ही कम न थी। साली को देख पाकर उसके मन में एकाएक ही यह बात आई कि इन दो लड़ाकू औरतों के मध्य में कमला परेशान रहेगी। इसे शान्ति नहीं मिलेगी। परन्तु जो आगया, उसे लौटाया नहीं जा सकता। अब यह भी नहीं कहा जा सकता कि वह अधिक समय वहां न रहे।

लेकिन इसके विपरीत, कमला की उस वृद्धा मौसी ने अपने स्वभाव के विपरीत, बहू पर ऐसा प्यार प्रदर्शित किया कि स्वयं रामलखन को भी अपनी धारणा पर खेद हुआ। उसने देखा कि उसकी वृद्धा साली कमला को नयी-नयी सीख देती है और बताती है कि नारी का यह

जीवन कितना कठोर है और कितने प्रकार के कर्म करने के लिये इस पृथ्वी पर अवतरित हुआ है।

चूंकि कमला स्वयं शिक्षित थी, इसीलिये, वह सहज भाव से अपनी वृद्धा मौसी के प्रत्येक वाक्य को समझ सकती थी और हृदयंगम करने की चेष्टा करती थी।

किन्तु अभी मौसी को आये हुए पूरा सप्ताह भी नहीं हुआ था कि उसने घर में आते-जाते हुए शशिकान्त को लक्ष कर, अपनी बहिन से कहा—'जीजी, मैं ऐसी परिपाटी को पसन्द नहीं करती। जाने तुम कैसे पसन्द करती हो! भला यह शशिकान्त क्यों आता है। बहू से हंसता-बोलता है। हमारा रतनलाल गया, तो उसकी यह बहू ..'

आतुर बनकर, रतन की मां ने कहा—'रतनलाल के ताऊ का ही तो लड़का है। कान्त भला है। कमला को कुछ पढ़ाने-पढ़ने आ जाता है। बस दो चूल्हे हो गये हैं। आत्मा और खून का कोई भेद नहीं।'

लेकिन वह वृद्धा अपनी बहिन की इतनी सी बात से सन्तुष्ट नहीं हुई। उसके मनमें जो बात एक बार आई, तो वह बाहर नहीं निकल सकी। वह दिल में जम कर बैठ गयी। इस वार्ता के जब दूसरे दिन कान्त उस घर में आया और सभी से कुछ न कुछ बात करके लौट गया तो तब ही कमला की मौसी उसके पास पहुंची और बोली—'क्या कर रही है, बहू? पढ़ रही है?'

कमला ने किताब की ओर से मुंह उठा कर कहा—'आओ मौसी, बैठो! मैं किताब पढ़ रही थी।'

मौसी ने पूछा—'कैसी किताब है! क्या लिखा है।'

कमला ने आंखों से हँस कर कहा—'यह तो एक कवि की कविता पुस्तक है, मौसी। जिसमें प्रकृति का वर्णन किया है।'

मौसी ने प्रश्न किया—'प्रकृति क्या? आदत?'

कमला हँस पड़ी—'न, मौसी! प्रकृति के माने हैं जंगल, पहाड़

नदियां !'

'अच्छा !' मौसी ने जैसे चकित बनकर कहा—'तो उसका नाम प्रकृति रख दिया है, लोगों ने ! और कवियों ने नदी, पहाड़ और जंगल पर कविता लिखी, खूब !'

कमला ने कहा—'मौसी प्रकृति का वर्णन बड़ा अच्छा होता है। उसमें ही भगवान का दर्शन होता है।'

लेकिन उस मौसी की समझ में यह बात एक क्षण के लिए भी नहीं आई कि जंगल, पहाड़ और नदियों में भगवान का दर्शन होता है। इसी से उसने कहा—'बहू, तू पढ़ी-लिखी है। जाने क्या कहती है, क्या समझती है ? मेरी तो उम्र बीत गयी। जब भगवान हमें इन्सानों में नहीं दिखायी देता, तो भला उन जंगलों में क्या दिखाई देगा ! लोग कहते हैं कि इन्सान में भगवान होता है, पर मैं तो आज तक भी नहीं समझ पाई कि जब इन्सानों में भगवान रहता है, तो यह चोरी, लूट और खून क्यों होते हैं ?'

कमला बोली—'मौसी, मनुष्य अपने स्वार्थ के कारण अन्धा हो जाता है।'

मौसी ने कहा—'हां, यही तो ! देखती हूं आदमी स्वार्थ को बड़ा मानता है। वह भगवान को लूटता है—उसका खून करना भी पसन्द करता है।'

इतना सुनकर, कमला एक क्षण के लिये मौन रह गयी।

किन्तु मौसी ने फिर कहा—'ऐसा ही एक स्वार्थ आदमी का यह है कि औरत को ठगता है,—उसका दीन ईमान नष्ट करता है।'

कमला ने कहा—'इसमें औरत का भी दोष है, मौसी ! स्वार्थ उसका भी है।'

मौसी ने जैसे विस्फारित बन कर कमला की ओर देखा। उसकी समझ में कमला ने निरे सत्य का उद्घोष किया। इसीसे, उसने कहा—

'हां बहू, ! तू ठीक कहती है। औरत भी कमजोर होती है। ठगी जाती है। वह खुद ही अपने को ठगा देती है।' वह बोली—'हमारे गांव में तुझ सरीखी ही एक सुन्दर बहू थी। वह भी कुछ पढ़ी-लिखी थी। भाग्य की बात कि बेचारी जल्दी ही विधवा हो गयी। जब उसका पति मरा तो वह दो बच्चों की मां थी।'

कमला ने कहा—'मौसी जी, यह अच्छी बात थी। वह मां बन चुकी थी।'

मौसी ने अपने स्वर पर जोर देकर कहा—'अरी, ओ बहू ! वह मां तो थी, पर तब भी—फिसल गई ! वह ठगी गई ! कुटुम्ब के एक लड़के के साथ भाग गई। बच्चों को छोड़ गई !'

कमला ने चौंक कर कहा—'वह भाग गई ! बच्चों को भी छोड़ गई, राम राम !'

मौसी बोली—'मैं कहती हूं न, औरत भी अन्धी बन जाती है। कुल की लाज खो देती है। खानदान के मुंह पर कालिख पोत देती है।'

कमला इतनी बात सुनकर जैसे उदास बन गई। वह एकाएक कुछ नहीं बोल पाई।

किन्तु मौसी तो अपनी पूरी बात कहने पर उतारू थी। इसलिये, जब कमला ने उसकी बात को सुन मुंह गिरा लिया, तो वह फिर बोली—'मेरी अच्छी बहू ! आदमी जब अपना स्वार्थ पूरा करने पर उतारू होता है, तो वह निर्लज्ज भी बन जाता है। औरत को भी बेहया कर देता है। उसके दोनों लोक बिगाड़ देता है। इसलिये समझदार औरत का काम है कि जहां तक बन पड़े पर-पुरुष से दूर रहे। लोगों का तो कहना है कि जवान औरत अपने भाई और बाप से भी दूर रहे।'

कमला इस बात को पहिले से समझती थी कि उसकी यह मौसी

कि जो अब लगभग साठ वर्ष की होगई, कभी भी किसी के प्रति उदार नहीं बनी। जैसे यह बुढ़िया सदा दूसरों के प्रति सन्देहशील ही बनी रही। किन्तु वह मौसी के उग्र स्वभाव को भी समझती थी। इसलिये अपनी ओर से उसने कोई बात नहीं कही। उसे यह भी अच्छा नहीं लगा कि वह क्यों उसके पास आगई। क्योंकि वह जिस किताब को पढ़ रही थी, वह उसने शशिकान्त से कह कर मंगाई थी। उस पुस्तक की कविताओं से उसे पहिले से रुचि थी। उसी को पढ़ने में तन्मय थी।

तभी मौसी ने कहा—'बहू, बुरा न मानना, तू जो इस तरह अपने कमरे में पड़ी रहती है, यह भी क्या ठीक है? क्या तुझे शोभता है? आज तेरी सास है, स्वसुर हैं पर कल जब ये दोनों न रहेंगे, तो तुझे ही घर का और बाहर का काम देखना है। बहू, जिन्दगी बड़ी है! अभी तेरी लम्बी मंजिल है। अगर अभी से तू उदास रहेगी, इस जिन्दगी को भींच कर रखेगी, तो बता, कैसे इस रास्ते को पार करेगी?'

कमला ने कहा—'मौसी, भगवान सभी की रक्षा करता है।'

मौसी ने कहा—'न, बहू! भगवान पर भरोसा रखना ही क्या अच्छा है? इन्सान को अपने पौरुष की ओर देखना पड़ता है। उसी से काम लिया जाता है!'

कमला ने हँस कर कहा—'तो मैं क्या करूं, मौसी! क्या जंगल में जाकर हल चलाऊं?'

मौसी ने कहा—'हल चलायें तेरे दुश्मन! तू तो घर का काम देख!' वह बोली—'बहू, मैं भी तेरी तरह विधवा बन गयी थी। पर मुझे आज भी नहीं सूझ पड़ता कि कभी किसी को मुझसे कोई शिकायत हुई हो। मैंने घर का सभी काम अपने ऊपर लिया था।'

कमला ने कहा—'अच्छा मौसी, मैं भी खूब काम करूंगी।'

मौसी बोली—'ये किताबें तो मन पर बोझ डालती हैं। मन बिगाड़ती हैं।'

इतना सुना तो कमला हँस पड़ी।

उस खिलखिलाहट को देख, मौसी हतप्रभ रह गयी। वह अप्रतिभ भी हो गयी। इसलिये, तुरन्त बोली—'यह हंसी की बात नहीं है, बहू!' मैं तो यहां तक कहती हूं कि यह शशिकान्त आता है, तो यही क्या अच्छा है? यह लड़का...'

एकाएक अपने स्वर पर जोर देकर कमला चीख पड़ी—'मौसी!'

मौसी ने कहा—'अब तेरे ही हाथ में इस घर की लाज है, बहू! भला-बुरा तुझे ही सोचना है। अगर तूने जरा भी अपनी आंखें बन्द कर लीं तो कहे देती हूं ऐसे खड्ड में गिरेगी कि जहां पता भी न चलेगा।'

कमला ने स्वर को तेज करके, एकाएक आँखों में आंसू लाकर कहा—'तुम्हारा मतलब क्या है, मौसी।'

किन्तु मौसी ने कमला की आंखों पर और स्वर पर ध्यान नहीं दिया। जिस धारा में वह बह चली थी, उसी में थपेड़े मारते हुए उसने कहा—'यह शशिकान्त तेरे पास आयेगा, तो तेरी जिन्दगी बिगाड़ देगा। तेरे स्वसुर का मुँह काला कर देगा।'

कमला चीख पड़ी—'तुम्हारा दिमाग तो ठीक है, मौसी? जानती हो, शशिकान्त...'

मौसी ने कमला के क्रोध पर ध्यान नहीं दिया। उसने नहीं देखा कि कमला कांपने लगी है। उसकी आंखें भरी हैं। वह फिर अपनी बात लिये-लिये बोली—'मैं तेरे भले की बात कहती हूं, बहू! मैंने इस औरत की जिन्दगी को देखा है और समझा है। मुझे पता है कि आदमी किस तरह औरत का ईमान और धर्म एक ही चुल्लु में पी जाता है।'

कमला अपनी चारपाई से खड़ी हो गयी। उसने हाथ में ली हुई किताब एक ओर पटक दी और तेज चाल से कमरे के बाहर निकल

गयी । मौसी कमरे में बैठी हुई, उसे आंख फाड़ कर, देखती रह गयी । तभी मौसी के मन में बात आई कि कमला अपनी सास के पास गयी है । उसकी शिकायत करने पहुंची है । इसलिये वह स्वयं भी कमरे से बाहर चल पड़ी । देखा कि सास घर के आंगन में बैठी हुई अनाज फटक रही थी । कमला वहां नहीं थी । किन्तु अपनी बहिन को देख, कमला की सास ने स्वतः ही कहा—'जीजी, क्या बहू से कुछ कहा तुमने ! कमरे से जोर की आवाज आई थी । और कमला अभी-अभी तेज चाल से मेरे पास से निकल ऊपर की मंजिल में चली गयी ।'

जीजी बैठ गयी । वह भी अनाज साफ करने लगी । तभी वह बोली —'हाँ, री! वह मुझसे बोल रही थी । वह गुस्से में भी आगयी । त्रिया-चरित्र दिखाती हुई, ऊपर भी चली गयी ।' यह कहते हुए उसने सांस भरी और कहा—'रामकली, मुझे तेरी इस बहू के ढंग अच्छे नहीं लगते । देखती हूं कि आसार अभी से बिगड़ चले हैं । अभीतो जुम्मा जुम्मा आठ दिन इसे विधवा बने हुए हैं । आगे की राम जाने ।'

रामकली ने कहा—'जीजी, मेरा तो भाग्य ही फूट गया । इस डायिन ने मेरा लड़का खा लिया ! वह जब तक जिन्दा रहा, इसी पटरानी के नखरे बरदास्त करता रहा ।'

जीजी ने कहा—'लेकिन अब कौन इसके नखरे बरदास्त करेगा री !'

रामकली ने कहा—'मैं कुछ नही सोच पाती । देख भी नहीं पाती ।'

'तू शशिकान्त को आने से रोक दे ।'—जीजी ने रामकली का हाथ पकड़ कर कहा—'वह इस घर में आता रहा, तो बताये देती हूं, तेरा घर चौपट हो जायगा ।'

रामकली ने कहा—'और अभी क्या इस घर का भाग्य अच्छा है ? सभी कुछ बिगड़ चुका है । इस बहू का सुसरा ही इसे सिर पर

उठाता है। बहू की हर इच्छा पूरी करनी चाहता है।'

जीजी ने कहा—'मैं रामलखन से भी कहूंगी। समझाऊंगी।'

रामकली ने तुरन्त कहा—'न, न, भगवान के नाम पर रहम करना। उनसे कुछ न कहना। जब से रतन गया है, तब से तो उनका मिजाज ही बिगड़ गया। बात-बात पर लड़ते हैं। बहू के लिये तो वह अपना सभी कुछ देना पसन्द करते हैं।'

जिस समय मकान के चौक में दोनों बहिनें बात कर रहीं थीं, तो तभी कमला छत के उपर खड़ी एक मुंडेल का सहारा लिये थी। उसी समय, उसने नीचे की ओर झांका। दोनों बहिनों को बात करती पाया, तो वह तुरन्त जीने में पहुंच गई। वहां से वह सुगमता से बातें सुन सकती थी। जब वह देर तक सुनती रही, तो वह स्वतः ही नीचे पहुंच गई। वह मौसी को लक्ष करके बोली—'मुझे लगता है कि तुम इस घर में आग लगाने आई हो! तुमने जिन्दगी भर ऐसा ही सोचा है।'

मौसी ने रामकली को लक्ष किया—'सुनती है, अपनी बहू की बात! तूने इतनी सिर पर चढ़ा ली है। मेरी बहू ऐसी जबान निकाले तो तोड़ दूं! चिमटे से खींच लूं!'

रामकली ने कहा—'मैं तो इस घर में नौकरानी हूं—बांदी!'

जीजी बोली—'पर मैं अपने घर में बांदी नहीं बन सकती। मेरा लड़का और बहू क्या मजाल जो मेरी मर्जी के खिलाफ कुछ भी कर लें। लड़का बाल-बच्चेदार बन गया है तो क्या, अब भी मेरे सामने खड़ा कांपता है। उसे भूख लगती है. तो मुझसे कहता है।'

रामकली ने कहा—'तुम भाग्यशाली हो, जीजी! मेरे भाग्य तो उसी दिन फूट गए कि जिस दिन रतन चला गया।'

उस समय कमला वहां नहीं थी। वह अपनी बात कहने के साथ ही, अपने कमरे में पहुंच गयी थी। उसने अन्दर से किवाड़ बन्द कर लिए थे और खाट पर पड़ गयी थी। उस दिन कमला कितनी देर

रोई, इसे केवल वह जानती थी या उसका भगवान। वह पहला दिन था कि जब उसने अनुभव किया कि सचमुच, उसकी जिन्दगी बिगड़ गई..., उसका सोहाग लुट गया और वह उस पृथ्वी पर एक अनाथ की स्थिति को छोड़ और कुछ नहीं रह गई थी...'

७

चोधरी रामलखन के मन में इस बात की धारणा पकती जारही थी कि हमारे देश और समाज का भारतीय दृष्टिकोण उस दिन ऊंचा उठ सकता है कि जब शिक्षा का प्रचार हो और मनुष्यता पौराणिकता को छोड़ वास्तविकता की ओर अग्रसर हो। अपने जीवन में रामलखन ने इस बात को अनेक बार अनुभव किया कि इस देश का मनुष्य अन्धेरे में है। अन्धकार चारों ओर फैला हुआ है। चौधरी का मन इस बात से सन्तुष्ट नहीं था कि गांवों को उजाड़ कर शहरों को बसाया जाय। शहरी मनुष्य का जीवन-स्तर ऊंचा उठाया जाय। वह देखते कि मनुष्य अपनी आवश्यकताऐं बढ़ाता है, तो अधिक पैसा प्राप्त करने के लिये संघर्ष करता है। समाज को ठगता है। समाज का व्यक्ति चोर और डाकू बनता है। किन्तु गांवों की जो अवस्था थी, वह चौधरी रामलखन की दृष्टि में सब से अधिक दयनीय थी। वहां का आदमी पराश्रित भी था और भूखा था। चूंकि रामलखन के सिरपर गांव की सरपंची का बोझ था, इसलिये उसे आय दिन ऐसे झगड़ों को भी निपटाना पड़ता कि जो केवल छोटी-बड़ी जातियों के संघर्ष से उत्पन्न होते थे। उन दिनों इसी प्रकार का एक झगड़ा पंचायत में आया हुआ

था। वह गांव के एक चमार का और ठाकुर का झगड़ा था। चमार ठाकुर के जिस खेत को देर से जोत रहा था, उसे ठाकुर ने अवसर पाकर छीन लिया। चूंकि ठाकुर के पास पैसा था, आदमियों का भी बल था, इसलिए, वह ऐसा करने के लिए एकाएक तैयार हो गया। फलस्वरूप, चमार ने पंचायत में फरियाद की।

चौधरी रामलखन ठाकुर की महत्वाकांक्षा को जानता था। वह यह भी समझता था कि ठाकुर ने जन-बल और धन-बल के साथ जाति की श्रेष्ठता का बल भी अपने पक्ष में कर लिया है। न्याय सर्वथा चमार के पक्ष में है। किन्तु गांव के उस छोटे से समाज में, उन अशिक्षित व्यक्तियों के समूह में, चौधरी रामलखन जिस प्रकार अपनी जिन्दगी का सफर तय कर रहा था, वह भी एक कठोर समस्या थी। वह धीरे-धीरे वहां के समाज का विशिष्ट कार्यकर्ता बन गया था किन्तु वह जानता था कि विरोधी उसके भी थे। गांव में तब भी कुछ ऐसे तत्व विराजमान थे कि जो रामलखन का यश बढ़ता देख कुढ़ते थे और उसका पतन देखने लिए के उत्सुक लिए थे।

जिस ठाकुर के विपक्ष में चमार ने फरियाद की, वह ठाकुर चौधरी रामलखन का मित्र था। देर का साथी था। इसलिए जब उसके विरुद्ध पंचायत में मामला आया, तो वह बेफिक्र था। उसे इस बात का भरोसा था कि रामलखन उसके विरुद्ध नहीं जा सकता।

किन्तु एक दिन जब संन्ध्या के झुटमुटे में रामलखन उस ठाकुर के घर पहुंचा, तब, ठाकुर यह जानने के लिये उत्सुक हुआ कि आज चौधरी किसलिये आया। रामलखन बैठ गया और बोला—'तुम्हारे झगड़े ने मुझे आपत्ति में डाल दिया है, ठाकुर! अच्छा हो कि तुम फैसला करलो। न्याय स्वयं ही कर दो।'

ठाकुर ने कहा—'चौधरी यह जमीन का मामला है। और तुम देखते-सुनते आये हो कि इस पृथ्वी पर जर-जोरू और जमीन का झगड़ा सदा

से चलता आया है, चमार को अब खाने को मिलने लगा है, तो उसका दिमाग बिगड़ गया है। सुना नहीं तुमने-शूद्र, गंवार, ढोल, पशु, नारी,–ये सब ताड़न के अधिकारी! हाँ, चमार के सिर पर जब तक जूता न पड़े, वह क्या आदमी रहता है। जमीन मेरी थी, मेरी रहेगी।'

रामलखन ने कहा—'लेकिन वह देर से जोतता आया है, भाई।'

ठाकुर ने कहा—'तो क्या हुआ? इससे क्या वह मालिक बन गया।'

चौधरी ने कहा—'आज का कानून ऐसा ही है।'

ठाकुर ने कहा—'मैं इसे नहीं मानता।'

चौधरी रामलखन बोला—'न्याय उसी के पक्ष में है।' उसने कहा—'आज का जमाना दूसरा हो गया है, ठाकुर! इन्सान न्याय मांगता है। देखते हो न, इन्सान देर से सताया गया है। उसका अधिकार छीना गया है। युग की पुकार तुम भी सुनो! अब तुम भी अपने मन में दया, ममता और स्नेह पैदा करो—इस इन्सान के लिये! तुम्हारे पास बहुत जमीन है। समर्थ हो। अगर चेता चमार को दया की भीख न दो, तो न्याय की तो दो। कानून की पुकार सुनो।'

इतनी बात सुनी, तो ठाकुर एकाएक झल्ला गया। वह क्षुण्ण बन गया। उसने तुरन्त ही कहा—'तुम अपना न्याय कर देना। जो मन में आये सुना देना। मैं अदालत में जाऊंगा।'

रामलखन ने कहा—'मैं इस समय रामलखन बन कर आया हूं, तुम्हारा साथी। मैं पंच की हैसियत से तुम्हारे पास नहीं आया।'

ठाकुर ने कहा—'कल ही तो तुम्हें फैसला देना है। दे देना। सुना देना। यह ठाकुर आसानी से जमीन नहीं देगा। चेता अगर ज्यादा अकड़ेगा, तो जान से हाथ धो बैठेगा।'

रामलखन ने कहा—'तुम्हें पैसे का घमण्ड हो गया है। यह भी सोचते हो कि ठाकुरों का गाँव है, तो जन-बल भी तुम्हें मगरूर बनाने

में मदद देता है।'

ठाकुर ने लापरवाही से कह दिया—'शायद।'

रामलखन ने कहा—'शायद नहीं, सत्य!' वह बोला—'भाई, तुम अब भी आंख बन्द करके चल रहे हो। वस्तुस्थिति से दूर जाते दीखते हो।'

ठाकुर ने कहा—'चौधरी, तुम्हारी तरह सब संन्यासी नहीं बन सकते। चाण्डाल को देवता भी नहीं समझ सकते! कल चौपाल में होते, तो तुम्हें मालूम पड़ता कि आज तुम्हारे बेटे की बहू ही किस तरह तुम्हारी पगड़ी उछालना चाहती है। कह तो रहे थे लोग कि एक दिन दरिया पर स्नान करने गयी होगी तो शशिकान्त के साथ घाट पर बैठी हँस रही थी, खिलखिला रही थी। मैं कहता हूं, भले घर की बहू-बेटियों के के लिये यह अच्छा है क्या! उस शशिकान्त के लिये भी शोभनीय है, क्या?' वह बोला—'मैं न होता, तो लोग जाने क्या-क्या बातें करते। पर समझते हैं न कि मैं तुम्हारा साथी हूं और मैंने सुना तो तुरन्त कहने वाले को डपटना पड़ा। पर मैं तुम से कहता हूं, अभी तो लड़के को मरे पूरा वर्ष भी नहीं हुआ। बहू अभी से शहरातिन की तरह दरिया किनारे पहुंचती है और उस जवान शशिकान्त के साथ...'

चौधरी रामलखन ने बीच में ही कहा—'दोनों पढ़े-लिखे हैं, भाई! हँसना भी क्या पाप है? शशिकान्त भाई का लड़का है! समझदार है!'

ठाकुर ने खिसियाकर कहा—'जी, बड़ा समझदार है।' वह बोला—'तुम्हारे इसी थोथे आदर्श ने यह अवस्था बना दी है। इतने बड़े घर की बहू तो तुम ले आये, पर कभी सोचा, उसका गुजारा कैसे होगा? विधाता ने उसे विधवा बना दिया, तो बताओ उस भरी जवान का रंडापा अब कैसे कटेगा!'

चौधरी रामलखन ने मानो उदास बनकर कहा—'भगवान सब ठीक करेगा!'

ठाकुर फिर झुंझला गया—'वाह रे, तुम्हारा भगवान !' उसने कहा—'बताये देता हूं, लोग तुम्हारा मजाक उड़ाते हैं ! बहू की चर्चा करते हैं।'

चौधरी ने अप्रतिभ बन कर कहा'—वे मूर्ख हैं। अपनी समस्या को भूल दूसरे की सुलझाना पसन्द करते हैं।' यह कहते हुए रामलखन खड़ा हो गया। वह बोला—'अच्छा, तुमने अपनी बात छोड़ कर फिर दूसरी उठा दी। बात बाकी है, सोच लेना। यदि फैसले की बात पसन्द हो, तो मुझे प्रातः ही बता देना।'

ठाकुर ने लापरवाही से कहा—'देखा जाएगा।

चौधरी चला गया। वह वहां से सीधा घर न जाकर नदी की ओर चला गया। क्योंकि उस समय रामलखन का मस्तिष्क अतिशय विकृत था। ठाकुर ने कमला और शशिकान्त की बात उठाकर व्यर्थ ही उसके मन को दुखा दिया। उस समय चारों ओर अन्धेरा था। नदी का जल शान्त था ! रामलखन किनारे पर बैठ गया। जिस पत्थर पर वह बैठा था, वह काफी बड़ा था। उसने बचपन से ही उस पत्थर को वहां पड़े देखा था। लेकिन कभी भी उसके मन में इस बात की जिज्ञासा नहीं पैदा हुई कि वह विशाल पत्थर नदी के उस तट पर, वहां कैसे आ गया ? किन्तु इस समय यही बात रामलखन के मन में उठ आई। जब वह उसका उत्तर नहीं दे सका, पत्थर का इतिहास न पा सका, तो तभी, उसने अपने और आस-पास के इन्सानी विश्व के प्रति जानने की जिज्ञासा लेकर कहा—'सहस्रों वर्ष बीत गए कि यह इन्सान आता है और चला जाता है। कोई जल्दी जाता है, कोई देर में जाता है। लेकिन इसका अर्थ क्या है ? इस विश्व का इतिहास क्या है ? यह इन्सान न जाने कब-कब से निर्बल पर अत्याचार करता आया है। उसका शोषण करना ही, इस इन्सान ने पसन्द किया। वह बोला—औरत भी एक निर्बल प्राणी है। उसे भी सदा ठगा

गया है। औरत ने इसीलिए आदमी का आश्रय लिया है। किन्तु इसी आदमी ने औरत का हनन किया है...खून किया है! और तब भी यह आदमी औरत की लाज पतंग की तरह उड़ाता है.. उसका प्रदर्शन करता है,—हे राम !'

उसी समय, एकाएक चौधरी रामलखन चौंक गया। उसका ध्यान नहीं गया, लेकिन उसकें नदी पर आते-आते चांद निकल आया था। उस चांद के प्रकाश में ही, रामलखन ने कुछ दूर पर देखा और करुण पुकार को सुना कि एक लम्बा सांप मेंढक को मुंह में दबाए हुए था। वह मेंढक चीख रहा था। चूंकि मेंढक बड़ा था, इसलिए सांप भी उसे एकाएक नहीं निगल पा रहा था। उस सांप की आंखें भी फटी थीं। आधा मेंढक उस सांप के मुंह में था, तो इसलिये सांप का छोटा-सा मुंह भी काफी चौड़ा हो गया था। इस रूप में वह विकराल लग रहा था। किन्तु रामलखन कदाचित ऐसे करुण दृश्य पहले भी देख चुका था, इसलिये वह डरा नहीं। वहां से भागा भी नहीं। यद्यपि उसके हाथ में लाठी थी। सांप की विवशता भी उसकी देखी-समझी थी। किन्तु न उसने सांप पर लाठी चलायी, न वहां से उठने की इच्छा की। कुछ ही देर में सांप धीरे-धीरे वहां से चल दिया और दृष्टि से ओझल हो गया।

तभी रामलखन ने कहा—'औरत के लिये समाज का इन्सान भी सांप है। मेंढक के समान औरत को निगल जाता है। औरत चीखती है, पर क्या इन्सान उस ओर ध्यान देता है! वह बोला—'मैं कमला को कुछ नहीं कहूंगा। मैं उसे दास नहीं बनाऊंगा। वह अपना भलाबुरा समझती है। यदि वह शशिकान्त को ही अपना जीवन-साथी बनाना पसन्द करेगी, तो क्या मैं रोकलूंगा? न, मैं कमला से यह भी नहीं कहूंगा कि वह शशिकान्त से न बोले। उसे अपना देवर न समझे।'

किन्तु इतना कहकर भी, रामलखन उस वेदना को नहीं दबा

सका कि जो उसे ठाकुर की बातों से प्राप्त हुई। उस वेदना को लिये हुए ही वह दरिया किनारे आ गया था। वह शांन्ति चाहता था। एकान्त में बैठना पसन्द करता था। परन्तु उस एकान्त में भी उसे क्या मिला ? शाँन्ति कहाँ प्राप्त हुई ? अपितु हुआ यह कि सांप की विकरालता ने उसे और सहमा दिया। रामलखन को यह समझने में उस सांप ने भी मदद दी कि वह जो कुछ कर रहा है, अलौकिक नहीं, नया नहीं। वह मनुष्य समाज की रीति के अनुरूप ही, अपने जीवन का और जीवन के कर्म का प्रदर्शन कर सका है !'

तभी रामलखन ने अपनी लाठी के कुन्दे को जमीन पर मारा। वह अपने आप बोला—'दीखता है, यह मनुष्य जानवर ही रहेगा...... मनुष्य देवता नहीं बनेगा! उसके अन्दर प्रश्न उठा तो बुद्ध कौन ? राम कौन ? ईसा कौन ? वह बोला—'अरे रामलखन, सहस्रों वर्षों में यदि एक देवता उतर आया, तो क्या उस से इस विशाल विश्व का उद्धार होता है। 'न कुछ भी नहीं'। प्यासे लोग उस अमृत को पीना चाहते है, पर उनके जीवन की प्यास तो मदिरा से बुझती है...... जीवन का उन्माद ही, इस इन्सान को पागल बनाता है। वही तो इस मनुष्य का पतन करता है . रे, इन्सान !'

उस समय, सचमुच ही दरिया किनारे अपूर्व शांति थी। इस पर जो दरिया का पुल था, तो वहां पानी को बांधकर सरकार ने बिजली बनाने की मशीने लगा रखी थीं। उस पुल के ऊपर विद्युत का प्रकाश फैलरहा था। किन्तु रामलखन की दृष्टि उस दूरी की ओर न देख कर, वह चांद की चांदनी में चमकती हुई दरिया की लहरों को देख रहा था। कभी-कभी पानी में किसी जानवर के कूदने से छपाका होता था। तब ही रामलखन का ध्यान उस ओर जाता। वह यह देखने के लिये भी शंकित हो उठता कि कहीं सांप फिर लौट न आये, पर उसे भरोसा था कि सांप न आयेगा। उसे पता था कि जिस प्रकार उसे साँप से भय लगता है, इसी प्रकार

वह सांप भी उससे डर कर भाग गया था। तभी रामलखन ने कहा—'यही तो इस संसार की रीति है। सभी एक-दूसरे से डरते हैं। छोटा बड़े से डरता है, तो बड़ा भी अपने प्राणों के मोह के लिये, छोटे व्यक्ति से दूर रहना पसन्द करता है।

किन्तु चौधरी को वहां बैठे देर अधिक हो गयी थी। रात भी काफी चली गयी थी। वह उठ चला। गांव में पहुंच गया। जब वह अपने घर के द्वार पर पहुंचा, तो उसे देख पाते ही, उसकी पत्नी रामकली ने उत्सुक तथा हर्ष भरे भाव में चौधरी का हाथ पकड़ कर कहा—'कुछ देखा-सुना भी. आपको दिखाऊं ?'

चौधरी समझ न सका। पत्नी के साथ हो लिया। उस मकान के साथ जो दूसरा हिस्सा था वहां आकर, बड़े कमरे के दरवाजे पर खड़ी हो, रामकली ने कहा—'देखो अपनी बहू को, क्यों ठीक है न, इस का काम ! कहती है, अब मैं यही करूंगी।'

और रामलखन ने देखा कि गांव की कोई पच्चीस-तीस बहुएं, जवान लड़कियां, फर्श पर बैठी हैं और कमला उनके समक्ष बैठी हुई हिन्दी की पहली किताब का पहिला पाठ अ—आ लिखना और पढ़ना सिखा रही है।'

रामलखन ने कहा—'तुम नहीं बैठी?'

रामकली ने कहा—'मैं यहां बैठूं या घर का काम देखूं।' चलो, रोटी खा लो तुम ! देर से ठण्डी हो रही है।'

चौधरी लौट चला और पत्नी के साथ रसोई घर में पहुंच गया। वहीं जाकर उसने प्रश्न किया—तो तुम्हें पसन्द आया कमला का यह काम !'

रामकली ने कहा—'हां क्यों नहीं। यह भी क्या बुरा है। मैं यही चाहती हूं कि कुछ करे—बैठे नहीं।'

और चौधरी तब मौन बना हुआ, रोटी खाने लगा था।

८

चौधरी रामलखन ने अपनी पत्नी का वह नया रूप देखा, तो वह विस्मय से भर गया। उसके मन में बार-बार यह बात आई कि आखिर रतन की मां ने कमला के नये प्रयास को देख अपनी सहमति दी है, या हर्ष की आड़ लेकर अवहेलना की है। परन्तु इतना रामलखन को पता था कि रामकली अधिक गहरी औरत नहीं। इसके मन की बात मुंह पर तुरन्त आती है। इस प्रकार रामलखन ने अपने मन को सन्तोष तो देना चाहा, परन्तु फिर भी उसके मन में यह सन्देह बना रहा कि आखिर कमला के इस प्रयत्न का अन्त क्या होगा ..रामकली को यह भी पसन्द आयेगा, या नहीं ?'

किन्तु इस सन्देह का समाधान रामलखन को अगले दिन ही हो गया। उसे यह भी मालूम हो गया कि कमला के इस प्रयत्न का भागीदार शशिकान्त है। उसकी कालेज से दो मास की छुट्टियां हो गयी हैं। कदाचित उसी की प्रेरणा पर कमला गांव की बहू-बेटियों को शिक्षित बनाने के लिये अग्रसर हुई।'

उस रात के बाद का अगला दिन रामलखन के जीवन में एक विशिष्ट स्थान बना बैठा। पंचायत के समक्ष विचाराधीन ठाकुर और

चेता चमार का निर्णय भी अगले प्रातः ही होना था। रामलखन समझता था कि दोनों पक्षों में से जिसके विरुद्ध निर्णय किया जायेगा, वह मान लेगा अन्यथा सरकारी अदालत में अपने मामले को ले जायेगा। किन्तु जब नया प्रातः हुआ और अन्य पञ्चों के साथ रामलखन ने अपनी सहमति देकर ठाकुर के विरुद्ध निर्णय दिया, तो आशा के विपरीत गांव में एक अजीब प्रकार का तूफान उठ खड़ा हुआ। ठाकुर धन-बल और जन-बल से समर्थ था। इसलिये जब निर्णय सुनाया गया और चेता के पक्ष वालों ने पञ्चायत के समक्ष ही हर्ष प्रकट किया, तो ठाकुर चिढ़ गया। उसके आदमियों ने लाठियां सम्भाल लीं और बात की बात में चमारों पर हमला कर दिया। लाठियां दूसरे पक्ष के आदमियों के पास भी थीं, वे भी तन गयीं। जब दूसरी ओर से हमला हुआ, तो उस का जवाब दिया गया। क्षण भर में वह स्थान युद्धक्षेत्र बन गया।

उस समय अन्य पञ्चों के समान रामलखन तटस्थ नहीं रह सका। वह तुरन्त खड़ा हो गया। वह चीख पड़ा। ठाकुर को सम्बोधित कर उसने बार-बार कहा कि जंगली मत बनो। तुम शान्त रहो। परन्तु उस समय कौन किसी की सुनता था। लाठियां चल पड़ी थीं। दोनों पक्षों में कुछ व्यक्तियों के चोटें भी आ गयी थीं। जमीन पर और उन लड़ने वालों के कपड़ों पर खून दिखायी देने लगा था।

किन्तु उसी समय जैसे आग पर पानी पड़ गया। ठाकुर के पक्ष के एक आदमी का भरा हाथ रामलखन के सिर पर पड़ा, सिर फट गया। खून का फौव्वारा छूट निकला। रामलखन आह भरता हुआ, कटी डाल की तरह पृथ्वी पर गिर पड़ा। इतना देख, तुरन्त ही दोनों पक्ष की लाठियां रुक गयीं। ठाकुर के आदमी वहां से चल दिये। चमार तथा गांव के अन्य व्यक्तियों द्वारा चौधरी रामलखन को उठाया और घर पहुंचाया गया। एक आदमी थाने दौड़ गया। एक डाक्टर के पास।

दोपहर होते-होते डाक्टर आ गया। सिपाहियों के साथ थानेदार

भी। डाक्टर द्वारा चौधरी के सिर में पट्टी बांध दी गई। चोट अधिक सांघातिक नहीं थी, इसलिए रामलखन को शहर के अस्पताल में ले जाने की आवश्यकता नहीं अनुभव की गई। किन्तु थानेदार ने मामले की पूर्ण रूप से जांच कर ली। उसने ठाकुर और उसके अन्य साथियों को बुला लिया। वह उन्हें गिरफ्तार करके ले गया। चौधरी रामलखन मौन था। डाक्टर द्वारा भी उसे बोलने से रोक दिया गया था। इसलिए, चौधरी को इस बात का पता नहीं चला कि गांव में पुलिस आई और वह किस-किस को गिरफ्तार करके ले गई।

यों गांव एकाएक ही, भय और त्रास का अखाड़ा बन गया। दो-तीन दिन बाद ही, ठाकुर और उसके साथी जमानत पर छूट आए। पुलिस ने मामला आगे बढ़ा दिया। परन्तु उस मामले में कितनी उग्रता थी, एक-दूसरे के प्रति कितनी जलन थी, इसका रूप, तुरन्त ही, गांव के बच्चे-बच्चे के समक्ष आगया। ठाकुर के व्यक्तियों ने केवल एक ही प्रकार का शस्त्र धारण नहीं किया, उन्होंने विविध प्रकार की चालें चलकर अपने पक्ष को बलिष्ठ बनाने का प्रयत्न किया। लेकिन अवस्था यह बनी कि ठाकुर का समस्त क्रोध चेता की तरफ से हटकर चौधरी रामलखन की ओर मुड़ गया। उसके मन में यह बात जड़ की तरह जम गई कि उसे नीचा दिखाने का काम रामलखन का है। यही अपने को गांव का नेता मानता है। बड़ा आदर्शवादी बनता है! सुधार के नारे लगाता है! लोगों को ज्ञान की सीख देता है..! मूर्ख! निदान, ठाकुर ने अपने पक्ष को हर प्रकार से सबल बनाने का प्रयत्न किया। उसने ढूंढ-ढूंढ कर रामलखन के विरोधी एकत्र किए और पूर्ण रूप से चाहा कि रामलखन का अस्तित्व बरबाद कर दिया जाय। इसलिए, फल यह हुआ, कि शनैः शनैः रामलखन के साथी उससे कतराने लगे। गांव पार्टीबाजी का अखाड़ा बन गया। छोटी कौमें और बड़ी कौमें पृथक्-पृथक् हो गयीं।

बड़ी कौम के व्यक्तियों ने जिस निर्लज्जता और अमानुषिकता का प्रदर्शन किया, वह उस गांव के इतिहास में सबसे अधिक करुण और भयावह दृश्य था। मानो गांव के उन ठाकुर, ब्राह्मण और वैश्यों ने सदियों की परम्परा को तोड़, एकबारगी यह बताने का प्रयत्न किया कि इस गांव की पृथ्वी पर उन्हीं को रहने का अधिकार है, अन्त्यजों को नहीं, छोटी जाति वालों को नहीं। मानवीयता के नाते भी उनका उन व्यक्तियों से कोई सम्बन्ध नहीं। इसका परिणाम यह हुआ कि गांव में असन्तोष, विग्रह और भय का वातावरण सभी ओर दिखाई देने लगा। गांव का कारबार भी ठप्प हो गया। यदि बड़ी कौमों के व्यक्ति उन छोटी जाति वालों से नफरत कर सकते थे, तो वे छोटी कौम वाले भी उनसे असहयोग करने के लिए उद्यत थे। लाला के और ब्राह्मण के घर यदि गाय थी, तो वह भूखी खड़ी थी। क्योंकि चमार उसे घास नहीं दे सकता था। किसी को पैर के लिए जूतियां चाहिएं, तो वह भी उपलब्ध नहीं हो सकती थीं। वे ठाकुर कि जिनका प्रमुख काम खेती था, उनके खेत न गोडे जा रहे थे, न उनमें पानी दिया जा रहा था। क्योंकि गांव के मजदूर उन्हें उपलब्ध नहीं होते थे।

इस प्रकार चारों ओर अशांति थी, त्रास था। कोई चेता को कोस रहा था, कोई ठाकुर को। किन्तु अधिक संख्या उन्हीं लोगों की थी कि जिनकी दृष्टि में ठाकुर ही दोषी था। परन्तु फिर भी उसका विरोध स्पष्ट रूप से नहीं किया जा रहा था। उसका आतंक प्रबल था।

इतने समय में, चौधरी रामलखन का घाव भर चुका था। अब वह घर से निकल कर बाहर आ-जा सकता था। गांव की चौपाल पर भी जाकर बैठ सकता था। लेकिन रामलखन के मन को यह देख कर अतिशय दुःख हुआ कि जो व्यक्ति पहिले उसके अपने थे, वे अब नहीं थे। वे अब उससे कतरा कर चलते थे। चौधरी से आंखे चुराते थे।

यह देख चौधरी के मन में अनेक बार आया कि वह ऐसे व्यक्तियों को पकड़ कर अपने पास बैठाये। वह ठाकुर को भी बुलाये। किन्तु ऐसा वह नहीं कर सका। क्योंकि उसके मन में एकबारगी यह बात आ गयी कि ठाकुर जिस आधार पर टिका है, वह जब तक नष्ट नहीं होगा, तब तक वह न बुद्धि से काम लेगा, न वास्तविकता को समझ पायेगा। और वह आधार क्या था—शक्ति! जन-बल! तो क्या उसका धन नष्ट किया जाना चाहिये? चौधरी के मन में बात थी कि हां, अब ऐसा ही होना चाहिये। ठाकुर के पास पैसा नहीं होगा, तो उसका विवेक काम करेगा। ठाकुर मनुष्य बनेगा। और जन बल? उसका क्या होगा? क्या वह भी नष्ट होना चाहिये? क्या ठाकुर के साथी मारे जायें? चौधरी के मन में बात थी कि नहीं, जब ठाकुर का धन नष्ट होगा, तो वे साथी अपने आप तिरोहित हो जायेंगे। जिस धनिक और सम्पन्न ठाकुर के पास लोग आकर बैठते हैं, जब वे ठाकुर को निर्धन पायेंगे, तो उनमें से एक भी उसके पास नहीं आयेगा। सभी रास्ता काट कर चलेंगे।

फलस्वरूप, इस प्रकार की भावना और विचार-धारा में प्रवाहित हुआ, चौधरी रामलखन सचमुच ही, अपने-आप में प्रसन्न नहीं था। वह तब भी चाहता था कि ठाकुर सुपथ पर आये। इन्सान बने। परन्तु वह तो सुनता था कि ठाकुर अत्यन्त निम्न स्तर पर उतर आया है। वह न केवल रामलखन को ही बदनाम करता है, अपितु उसके पुरखों की आत्मा को भी झिंझोड़ने का प्रयत्न करने से नहीं चूकता। इसी प्रसंग में रामलखन ने यह भी सुना कि वह उसकी पुत्र-वधु कमला को भी बदनाम करने पर तुल गया है। उसे चरित्र-भ्रष्टा बताता है।

रामलखन के लिये यह सन्तोष की बात थी कि शशिकान्त उन दिनों गांव में नहीं था। वह कालेज की एक पार्टी के साथ किसी पर्वतीय स्थान पर गया था। अन्यथा, निश्चय ही, वह युवक कोई

झगड़ा करता। वह भी ठाकुर के विरुद्ध प्रदर्शन करता। इधर जब रामलखन का सिर का घाव अच्छा हो गया। तो कमला भी अपने पिता के बुलावे पर सुसराल से चली गयी। उसकी मां दूर की तीर्थयात्रा पर जा रही थी, इसलिये, वह भी बुला ली गयी। इस तरह रामलखन सोचता, चलो, भगवान ने यह अच्छा ही किया कि बहू भी यहां नहीं। क्योंकि जो बातें उसके प्रति गांव में प्रचारित की जा रहीं थीं, निश्चय ही, कमला उन्हें सुनती। कदाचित वह भी प्रतिरोध करती। उसने स्त्रियों की रात्रि पाठशाला खोली थी, तो वह भी, निश्चय ही, उस गन्दे वातावरण में न चल पाती।

ठाकुर के विरुद्ध गाँव में बलवा करने का मुकद्दमा नगर में एक मजिस्ट्रेट के सम्मुख पेश था। पुलिस को इस बात का विश्वास था कि ठाकुर और उसके साथी सजा पायेंगे। क्योंकि अन्य व्यक्तियों के साथ, रामलखन की चोट सांघातिक बन गयी थी। डाक्टर की रिपोर्ट भी अदालत में उपस्थित कर दी गयी थी। पुलिस यह भी जानती थी कि चौधरी रामलखन की गवाही महत्वपूर्ण होगी। इसलिये ठाकुर और उसके साथियों ने पुलिस की जेब में जो रुपया डाला, वह अधिक महत्वपूर्ण नहीं था। रुपया देने वालों को इस बात का सन्तोष नहीं था कि वे अपने प्रयत्न में सफल होंगे।

मुकद्दमे का दिन आया और पुलिस ने गवाह पेश किये। सर्वप्रथम चौधरी रामलखन की पेशी हुई। डाक्टरी रिपोर्ट मजिस्ट्रेट के सम्मुख थी।

अदालत ने रामलखन से पूछा—'बताओगे, किसके हाथ की लाठी तुम्हारे सिर पर लगी? झगड़ा किसने किया? ठाकुर और उसके आदमियों ने?'

उस समय अदालत में दोनों पक्ष के व्यक्ति उपस्थित थे। ठाकुर भी सामने खड़ा था। वह सिर झुकाये था। रामलखन ने देखा कि

सचमुच, उस समय वह दीन था। जैसे याचक बना था। किन्तु ठाकुर की उस मनः स्थिति से ऊपर जो विशेष बात चौधरी रामलखन के सम्मुख उस समय आ उपस्थित हुई, वह थी, उस समय के गांव की परिस्थिति—वहां के वासियों की परेशानी। वही रामलखन के मन का उन दिनों मन्थन कर रही थी। वह अनुभव कर रहा था कि इस रोग का यह इलाज नहीं। इस प्रकार तो यह गांव मर जायेगा। एक राम का नाम रटने वाले व्यक्ति जब पृथक रास्तों पर चढ़ कर विभक्त हो गये, तो क्या वे जीवन में शांन्ति और सुख पायेंगे ? इन्हें चैन मिलेगा ? वे अपने बच्चों का पोषण कर सकेंगे ?

तभी मजिस्ट्रेट ने प्रश्न किया—'हां बताओ, चौधरी रामलखन ! तुम गांव के सरपंच हो। तुमने ही निर्णय दिया था कि जमीन का भागीदार चेता चमार है। क्यों ठीक है ना ?'

रामलखन ने कहा—'जी, हां।'

'यह निर्णय तुम्हारा किस आधार पर था ?' मजिस्ट्रेट ने प्रश्न किया।

रामलखन ने कहा—'लगभग तीस वर्ष से चेता उस जमीन को जोत रहा था।'

'और तुम्हारे इस निर्णय को सुनकर ही, ठाकुर के साथियों ने झगड़ा किया होगा ?'

चौधरी ने कहा—'जी।'

सरकारी वकील ने प्रश्न किया—'जब झगड़ा हुआ, तो तुम बचाने के लिये चेष्टित हुए होगे ? झगड़ा करने वालों को रोकते होगे ?'

रामलखन ने कहा—'जी, यह मेरा कर्तव्य था।'

वकील ने कहा—'हां, हां, तुम सरपंच थे। गांव के समझदार थे। पर तुमने तो ठाकुर के विरुद्ध निर्णय दिया था, तो उसका क्रोध तुम पर विशेष रूप से होगा ?'

चौधरी ने सामने खड़े, ठाकुर की ओर देखा और तब झटका सा खाकर कहा—'जनाब, ठाकुर मेरा पुराना मित्र है। मैं ऐसा नहीं अनुभव करता।'

वकील बोला—'पर भाई, तुमने तो मित्र के विरुद्ध निर्णय दिया था। मित्र का पक्ष नहीं ग्रहण किया।'

चौधरी बोला—'वह मेरा कर्तव्य था। मैं न्याय और अन्याय को तौल रहा था।'

वकील बोला—'हां, हां, तुम्हें यही करना था। तभी तो मैं कहता हूं कि तुम इस बात को स्वीकार करो कि ठाकुर या उसके किसी व्यक्ति ने इसी दुर्भावना को लेकर तुम पर हमला किया। यह तो तुम्हारा भाग्य था कि तुम बच गये। अन्यथा, डाक्टर की रिपोर्ट के मुताबिक तुम्हारे सिर में कई इन्च गहरा घाव होगया था। क्यों ठीक है न? बताओ, ठाकुर ने तुम्हारे सिर में लाठी मारी?'

एकाएक जैसे आतुर बनकर चौधरी बोला—'न, न, मैं ऐसा नहीं अनुभव करता। मैं निश्चित रूप से नहीं कह सकता कि लाठी किसके हाथ की लगी। मैं दोनों पक्षों के बीच में था। मैं उस समय इतना देख न सका।'

सरकारी वकील ने अपनी मुट्ठी भींच कर कहा—'पर वास्तविकता क्या थी? यह बताओ। चेता के आदमी तुम्हें नहीं मार सकते थे। तुमने उसके पक्ष का समर्थन किया था।'

परन्तु चौधरी रामलखन ने भी अपने स्वर पर जोर दिया—'जनाब, मैं उस समय ऐसी स्थिति में नहीं था। मैं पागल व्यक्तियों की भीड़ में घुस गया था। मैं स्वयं विवेक-भ्रष्ट बन बैठा था। मेरी बुद्धि का सन्तुलन नष्ट हो चुका था।'

उसी समय, मजिस्ट्रेट ने अगले दिन के लिए मुकद्दमा स्थगित कर दिया।

६

संध्या की उस धूमिल वेला में जब कि चौधरी रामलखन दरिया के किनारे जाकर बठना चाहता था, तभी ठाकुर महीपाल उसके पास आया और अपने सिर से पगड़ी उतार कर रामलखन के पैरों में रखता हुआ बोला—'तुम्हारा कृतज्ञ हूं कि तुमने मुझे जेल जाने से बचा लिया ?'

रामलखन ने पैरों के पास से पगड़ी उठा दी और उसे ठाकुर के सिर पर रखता हुआ बोला—'जब आदमी जोश में होता है, अच्छा और बुरा काम दोनों तेजी से करता है। यही तुम्हारा हाल है। तुमने चमारों के साथ लड़ाई की, अच्छा नहीं किया। अब मेरे पैरों में पगड़ी रखने आ गये, यह भी क्या बुद्धिमानी का काम हुआ ? न, तुम मेरे पहले ही मित्र हो, महीपालसिंह ! अदालत में मैंने जो गवाही दी, उसमें इतना तुम्हारा लाभ नहीं, जितना गांव का है। गांव का स्वार्थ हम और तुमसे बड़ा है,— सर्पोपरि है। क्या तुम इस बात को अनुभव नहीं करते ? तुम नहीं मानते कि हम सब इस बात को चाहते हैं कि हमारे बाद भी गांव जिन्दा रहे—उन्नति करता रहे ?'

ठाकुर ने कहा—'मानता हूं, चौधरी।'

'और तुम यह जानते हो, हमारी-तुम्हारी जिन्दगी अब कितने दिन की है ? तुमने चेता और गांव के साथ अन्याय किया है। अपने घर वालों के साथ भी अनर्थ किया। मुझे पता है कि तुमने अपनी प्रतिष्ठा रखने के लिये पुलिस को रुपया दिया, अदालत में रुपया खर्च किया।'

ठाकुर ने कहा—'जब बुरे दिन आते हैं, तो बुद्धि भी भ्रष्ट हो जाती है।'

चौधरी रामलखन ने कहा—'तुम गांव के बनो, ठाकुर ! इस मिट्टी की उपासना करो। इसने तुम्हें जन्म दिया है।'—यह कहते हुए रामलखन दरिया की ओर बढ़ गया। ठाकुर अपने घर की ओर चल दिया। जब चौधरी दरिया पर पहुंच गया, तो एकाएक उसके मन में बात आई—ठाकुर मुकद्दमे से छूट तो गया, परन्तु क्या इसका दिल भी साफ हो गया ? वह अपने आप बोला—'मैं इसका भरोसा नहीं करता। अभी ऐसा नहीं मान सकता। यह ठाकुर अत्यन्त कुटिल है और ईर्षालु है। तब ? तब क्या करेगा यह ? क्या यह ठाकुर मुझसे ईर्षा करेगा ? मेरा कोई अपयश चाहेगा ?' रामलखन इस बात का एकाएक उत्तर नहीं दे सका। वह बात जैसे उसके गले में अटक गयी। उसका सांस भी रुकने लगा।

उसी समय गांव का एक किसान वहां आया और वह चौधरी को अकेला बैठा देख, पास आकर बोला—'क्या सोच रहे हो, चौधरी।'

चौधरी चौंक गया। उसने अपने मन पर झटका-सा खा कर कहा—'कुछ नहीं ठाकुर रणजीतसिंह ! आओ बैठो।'

रणजीत पास बैठ गया और बोला—'आजकल चौपाल पर कम आते हो, चौधरी !'

चौधरी ने कहा—'समय कम मिलता है।'

रणजीत ने पूछा—'शायद बहू यहां नहीं है ?'

चौधरी बोला—'वह अपने पिता के यहां गयी है।'

'हां, यही तो।' रणजीतसिंह ने कहा—'जगतसिंह हरिद्वार से कल ही लौटा है। वह कहता था कि रतनलाल की बहू और शशिकान्त वहां घूमते मिले थे'

चौधरी ने बात सुन ली, मगर उत्तर नहीं दिया। जैसे उसके गले में किसी ने जहरीला घूंट उतार दिया। उसकी छाती जलने लगी। उसने कहा—'बहू के माता-पिता तीर्थ-यात्रा पर गये हैं। वह भी इसीलिये गयी है। शशिकान्त भी उधर गया होगा।'

रणजीत इतनी बात सुनकर मुसकरा दिया। उसने बात का उत्तर नहीं दिया। तभी उसने बात बदल दी और कहा—'जिस आदमी ने तुम्हारा सिर फोड़ा, तुमने उसी के पक्ष में गवाही दी, यह अच्छा नहीं किया। सांप को दूध पिलाने से क्या उसका जहर जाता है... उसका काटना छूटता है? जब ठाकुर तुम्हारे साथ ऐसा कर सकता है, तो वह दूसरों के साथ भी करेगा।'

किन्तु रामलखन का मस्तिष्क उस समय दूसरी बात की ओर लगा था। वह सोच रहा था कि शशिकान्त तो अपने कालेज के लड़कों के साथ गया था। वह हरिद्वार कैसे पहुंचा। शायद कमला ने उसे लिख दिया होगा। वह अपने साथियों का साथ छोड़ कर आ गया होगा। पर क्यों? किसलिये? आदि प्रश्न एकाएक ही चौधरी के मस्तिष्क में आंधी के समान उठे और उसे परेशान करने लगे। इसलिये उसने रणजीत की बात सुनी और अनसुनी कर दी।

यह देख, रणजीत अनायास ही समझ गया कि चौधरी का ध्यान इस समय यहां नहीं, हरिद्वार में है। यह मेरी बात नहीं सुन सका है। अतएव, वह फिर बोला—'क्यों चौधरी, ठीक कहा न, मैंने? तुमने ठाकुर को बचाकर अच्छा काम नहीं किया।'

चौधरी चौंक गया और एकाएक बोला—'क्या.....क्या कहा

तुमने ? तो मैंने अच्छा काम नहीं किया, ठाकुर को बचा कर ?'

रणजीत ने कहा—'हां, जरूर।'

चौधरी बोला—'भाई, मैंने उस समय यही सोचा। मेरा यही कर्तव्य था।'

रणजीत ने कहा—'चलते जमीन पर हो और निगाह आसमान में ! कभी गहरी ठोकर खा जाओगे, चौधरी !'

चौधरी ने कहा—'अब तक ठोकर ही खाई हैं, मैंने ! कभी क्या शांति पाई है। चैन की सांस ली है ! मेरे भाग्य की लकीर अब मिट चुकी है, रणजीतसिंह !'

रणजीतसिंह उठ खड़ा हुआ और दरिया की गहरी धारा की ओर देखता हुआ बोला—'ठाकुर के मन का यह घाव कभी नहीं भरेगा कि तुमने चमार के समक्ष ठाकुर को झुका दिया।'

चौधरी ने बात सुन ली, पर मत नहीं दिया। रणजीतसिंह चला गया। जब वह दृष्टि से ओझल हो गया, तो चौधरी ने उसी पथ की ओर घूरते हुए कहा—'कम्बख्त, बेकार में दिमाग बिगाड़ गया। जाने कहां से आ गया।' और बोला—'तो कमला और कान्त हरिद्वार में हैं। वहां जाकर साथ-साथ घूमते हैं। यों स्वतन्त्रता का उपभोग करते हैं। उसने कहा—'बेशर्म कहीं के ! क्या यही आज की तहजीब है ? इसी का नाम सच्चरित्रता है ! दोनों ने इसीलिये शिक्षा प्राप्त की कि यों समाज की चोरी करें... कपट कर के अपने उद्देश्यों की पूर्ति करें। चौधरी के मन में उस समय सचमुच ही क्रोध आ गया। यदि कान्त या कमला उसके सामने होते, तो वह दोनों को फटकार देता। वह दोनों को सुनाकर साफ कह देता, तुम दोनों भ्रष्ट हो...तुम दोनों ही चरित्र का मुंह काला कर रहे हो !'

निदान, उस समय, चौधरी रामलखन का मन उस दरिया किनारे पर भी नहीं लगा। वह उठ खड़ा हुआ। दरिया किनारे-किनारे

चलने लगा। सूरज छिप गया था। परन्तु अभी पूरा अन्धेरा नहीं हुआ था। उसी किनारे पर एक पेड़ की ओर देखते ही, चौधरी के पैर रुक गये और उसने देखा कि दो पंछी पास-पास बैठे हैं। वे दोनों ही एक-दूसरे की चोंच से चोंच मिलाये हुए हैं। उनकी आंखें बन्द हैं। मानो वे समस्त विश्व की ओर से अजान हैं। वे अपनी ही दुनियां में और अपने राग की लय में खो गये हैं। क्षण भर रुक कर चौधरी ने इतना देखा, तो वह अपने पैर उठाता हुआ और मन पर झटका खाता हुआ अपने आप बोला—'तो मैं कब कहता हूं कि कमला अपने जीवन का गीत न गाये। मैं उसे नहीं रोकूंगा। मैं उसके मन की भावना को नहीं कुचलूंगा। उसे यदि शशिकान्त के राग में अपना राग मिलाना है, दोनों को साथ-साथ गाना है, तो क्यों नहीं मुझसे कहते! वे मुझे बतायें, मैं स्वयं उन्हें स्वतन्त्र कर दूंगा। मैं उनसे कह दूंगा, जाओ, तुम इस विश्व के किसी भी सुन्दर कोने में समाधिस्थ हो जाओ। प्रकृति के विराट रूप में तुम भी अपनी धुन से, गान से और राग से जगत के नियन्ता को प्रसन्न करो... . उसकी खोज करो!

किन्तु चौधरी जब उस पेड़ से बहुत दूर चला गया, तो अनायास उसका मन फिर गिर गया। उसे यह अच्छा नहीं लगा कि आज के युवक केवल इन्द्रियों की भूख मिटाने के लिये एक दूसरे का सम्पर्क करते हैं .....युवक और युवती यौन सम्बन्ध स्थापन में ही अपने जीवन को खो देते हैं ..जैसे कीड़ा सड़ांद में ही आनन्द पाता है...वासना के भूखे ये नर-नारी भला इसके अतिरिक्त और क्या पा सकते हैं—कुछ नहीं!'

लेकिन चौधरी के मन का कोलाहल इतना भर कह देने से शान्त नहीं हो सकता था। चौधरी में स्वयम् भी अब इतनी शक्ति नहीं थी कि वह अपने मन में आई हुई किसी विषैली या कषैली बात को तुरन्त ही, शिव के समान एक ही घूंट में पी जाता और पचा लेता। वह तो अब स्वयं कमजोर हो गया था। इसलिये, वह पलभर के

लिये भी अपने में शक्ति नहीं पा सका। वह ऐ, । धैर्य नहीं रख सका कि कमला और कान्त यदि हरिद्वार में मिले हैं, वे दोनों अपनी किसी इच्छा को सार्थक करना चाहते हैं, तो करने दे। वह उनके रास्ते का रोड़ा न बने। अपितु, हुआ यह कि चौधरी ने सामने के एक पेड़ पर बैठी चील को लक्ष करते हुए, हाथ की मुट्ठी भींच कर कहा—'कमला की यदि कोई इच्छा है, तो मुझसे कहे! वह मुझसे चोरी नहीं कर सकती ऐसा करेगी, तो उसका गला घोंट दूंगा। अभी मेरे हाथों में शक्ति है। मैं उसके द्वारा अपना या अपने मृत पुत्र का उपहास न कराऊंगा। मेरा पुत्र आज भी मेरी दृष्टि में जिन्दा है। वह अब भी मेरे समक्ष मुस-कराता है। मुझे कभी भी लगता है कि वह आज्ञाकारी रतन मे' समक्ष हाथ बांधे हुए खड़ा है ..और उसी की बहू अपनी इन्द्रियों की वासना को इस प्रकार पूरा करेगी? मेरा और मेरे पुत्र का इस गांव के लोगों में मजाक उड़वायेगी.. राम-राम! तब तो सचमुच ही, मैं अपनी दृष्टि में मर जाऊंगा। मेरी आंखों के सामने ही, मेरी चिता धू-धू करती हुई जलेगी। उस चिता की सडांद से मेरा मस्तिष्क विकृत बनेगा। मैं पागल बन जाऊंगा। बच्चे मुझ पर कीचड़ उछालेंगे। कांकड़ मारेंगे। वे मुझे देखकर तालियां बजायेंगे ।

'रामलखन . अरे, तू !'

निस्सन्देह, चौधरी का मस्तिष्क विकृत हो गया। वह एक अवसर था कि जब रामलखन स्वयं ही अपनी दृष्टि में क्रूर और पतित बन गया था, मानो उसकी आत्मा मर गयी थी, अथवा उसके शरीर में कोढ़ फूट आया था। उस कोढ़ से पीप और पानी रिस-रिस कर वह रहा था। उस पर मक्खियां बैठ रही थीं। वे हजारों मक्खियां भिनभिना रही थीं। रामलखन को पीड़ा थी। जैसे उसकी काया जलने लगी थी।

परन्तु उसी समय गांव का किनारा आगया। गांव के कुंए पर

पनिहारिनें पानी भर रहीं थीं। उनमें कुछ जवान लड़कियां-बहुएँ आपस में बातें करती हुई हँस रही थीं। उन युवतियों के घड़े, कुंए में आधे फंसे थे और वे हाथ रोके, जैसे बड़े मन से अपने पिया की कहानी अपनी सखियों को सुनाने में लगीं थीं। निश्चय ही, उनमें दो लड़कियां अभी गौने से लौट कर पीहर आई थीं। और कुछ गौने के बाद अपनी सुसराल में आकर अपनी नयी दुनिया बसाने में लगी थीं। उसी समय कुंए के उस अनुपम दृश्य को देखने के अभिप्राय से ही, कुछ जवान लड़के कुंए के आस-पास चक्कर लगा रहे थे उनमें से कुछ सीटी बजा रहे थे। किन्तु जब उन्होंने और खड़ी युवतियों ने चौधरी को आता हुआ देखा तो वे सब चौकन्नी बन गयीं। वे अपना काम करने लगीं। दूर खड़े लड़के भी तिरोहित हो गये। वह ऐसा समय था कि जब गांव में दिन भर की शांति के बाद कोलाहल होता। जंगल से चरवाहे लौट रहे थे। गायों के गले में पड़ी हुई घण्टियां अपने एक अजीब स्वर से बज रहीं थीं। गायें रम्भाती हुई अपने घरों की ओर पहुंच रही थीं। उनके बच्चे घरों पर बन्धे हुए, दूर से मां का स्वर सुन, स्वयं भी रम्भा रहे थे और अपनी मां को पुकारते हुए, हर्षोन्मत्त हो, जेवड़ा तुड़ाने का प्रयत्न कर रहे थे।

गांव के उस अलौकिक और अलभ्य दृश्य को देख, चौधरी राम-लखन का मन एकाएक बदल गया। दरिया किनारे जितना क्षोभ उसे मिला, वह पनघट और चरवाहों के जीवन-दृश्य को देख, भाप की तरह उड़ गया।

घर पहुंचते ही, पत्नी ने एक पत्र दिया और कहा—'पढ़ो तो, शायद कमला का है।'

रामलखन ने पत्र खोल लिया। रामकली प्रकाश ले आई। पत्र में कमला ने लिखा था कि वह जल्दी लौट आयेगी। एक दिन यहां अकस्मात ही कान्त मिल गया। वह अपने साथियों सहित मसूरी से हरिद्वार आया था। पत्र में कमला ने रामलखन और रामकली के

स्वास्थ्य के प्रति चिन्ता प्रगट की थी।

पत्र पढ़ते ही, रामलखन का मन जैसे बांसों उछल गया। उसने पत्नी से कहा—'अब जल्दी आजाएगी, कमला। हरिद्वार से पत्र लिखा है। उसे तुम्हारी चिन्ता है। कान्त भी उसे एक दिन वहां मिल गया!'

सुनते ही, रामकली ने कहा—'कान्त भी वहां था? उसे मिला था, हे राम!'

'क्यों, हुआ क्या? क्या वह हरिद्वार नहीं पहुंच सकता था?' उपेक्षा भाव से रामलखन ने कहा।

रामकली ने कहा—'पहुंच क्यों नहीं सकता था! वह तो पाताल में भी पहुंच जाता।'

रामलखन को पत्नी से इतना सुनना अच्छा न लगा। उसने छूटते ही रुक्ष भाव में कहा—'देखो, रतन की मां! तुम बुद्धि से काम लो! बुढ़ापे में इस घर को बरबाद करने की कोशिश मत करो। मुझे बेमौत मत मारो!'

रामकली ने बात सुनते ही, आंखे फाड़ दीं और माथे में हाथ मार कर बोली—'हे राम! तो मैं डायन हूं, इस घर की! ओ हो, वह लाडली ऐसी हो गयी कि उसके सभी चरित्रों पर पर्दा डाला जाय। शर्म तो नहीं आती तुम्हें यह कहते कि वह उस दूसरी जगह दूसरे आदमी के साथ फिर रही थी। मैं देख पाती, तो गला घोंट देती, चुड़ैल का! बताये देती हूं, उस साँपन को तुम दूध पिला रहे हो... उसे खिला रहे हो। किसी भी समय ऐसा डंक मारेगी कि पानी भी न मांगोगे।' इतना कहा और रामकली आंखों में आंसू भरे, तेज चाल से वहाँ से चली गयी।

चौधरी रामलखन हाथ की हथेली पर सिर रखे बैठा था। वह जैसे खो गया था। धरती घूम रही थी और वह भी घूम रहा था...

१०

शशिकान्त की प्रेरणा पर कमला के माता-पिता हरिद्वार से मसूरी चले गये। कान्त स्वयं नहीं गया। वह वहां से गांव लौट गया। यद्यपि, यदि एक बार भी कमला अथवा उसके माता-पिता द्वारा उसे साथ चलने के लिये कहा जाता, तो सम्भव है कि कान्त इन्कार न कर पाता। इसलिये न उसने इस प्रकार की अभिलाषा प्रगट की, न उससे कहा गया। लेकिन जब वह वहाँ से गांव के लिये लौटा, तो तब, जीवन में पहिली बार, कमला ने कान्त को सम्बोधित करते हुए कहा—'लगता है जीवन का सफर सरल नहीं है। इस सफर को काटना भी मेरी शक्ति से बाहर है।'

कमला से इतनी बात सुनी, तो कान्त एकाएक अपना मत नहीं दे सका। सचाई यह थी कि इधर कुछ समय से वह स्वयं अपने-आप में खो गया था। वह जब कमला को अपने समीप पाता, तो उसे लगता कि जैसे वह किसी अन्तरंग साथी के समीप आ गया था। इसलिये, उस समय भी कि जब वह कमला से विदा ले रहा था, तो कमला की उन मधुर आंखों में समाए जैसे एक अलभ्य और अनोखे संसार को देखने लगा था। यद्यपि, कान्त ने स्वयं अपने-आप में ऐसी अभिलाषा नहीं

स्वास्थ्य के प्रति चिन्ता प्रगट की थी।

पत्र पढ़ते ही, रामलखन का मन जैसे बांसों उछल गया। उसने पत्नी से कहा—'अब जल्दी आजाएगी, कमला। हरिद्वार से पत्र लिखा है। उसे तुम्हारी चिन्ता है। कान्त भी उसे एक दिन वहां मिल गया!'

सुनते ही, रामकली ने कहा—'कान्त भी वहां था? उसे मिला था, हे राम!'

'क्यों, हुआ क्या? क्या वह हरिद्वार नहीं पहुंच सकता था?' उपेक्षा भाव से रामलखन ने कहा।

रामकली ने कहा—'पहुंच क्यों नहीं सकता था! वह तो पाताल में भी पहुंच जाता।'

रामलखन को पत्नी से इतना सुनना अच्छा न लगा। उसने छूटते ही रुक्ष भाव में कहा—'देखो, रतन की मां! तुम बुद्धि से काम लो! बुढ़ापे में इस घर को बरबाद करने की कोशिश मत करो। मुझे बेमौत मत मारो!'

रामकली ने बात सुनते ही, आंखें फाड़ दीं और माथे में हाथ मार कर बोली—'हे राम! तो मैं डायन हूं, इस घर की! ओ हो, वह लाडली ऐसी हो गयी कि उसके सभी चरित्रों पर पर्दा डाला जाय। शर्म तो नहीं आती तुम्हें यह कहते कि वह उस दूसरी जगह दूसरे आदमी के साथ फिर रही थी! मैं देख पाती, तो गला घोंट देती, चुड़ैल का! बताये देती हूं, उस साँपन को तुम दूध पिला रहे हो... उसे खिला रहे हो। किसी भी समय ऐसा डंक मारेगी कि पानी भी न मांगोगे।' इतना कहा और रामकली आंखों में आंसू भरे, तेज चाल से वहाँ से चली गयी।

चौधरी रामलखन हाथ की हथेली पर सिर रखे बैठा था। वह जैसे खो गया था। धरती घूम रही थी और वह भी घूम रहा था...

१०

शशिकान्त की प्रेरणा पर कमला के माता-पिता हरिद्वार से मसूरी चले गये। कान्त स्वयं नहीं गया। वह वहां से गांव लौट गया। यद्यपि, यदि एक बार भी कमला अथवा उसके माता-पिता द्वारा उसे साथ चलने के लिये कहा जाता, तो सम्भव है कि कान्त इन्कार न कर पाता। इसलिये न उसने इस प्रकार की अभिलाषा प्रगट की, न उससे कहा गया। लेकिन जब वह वहाँ से गांव के लिये लौटा, तो तब, जीवन में पहिली बार, कमला ने कान्त को सम्बोधित करते हुए कहा—'लगता है जीवन का सफर सरल नहीं है। इस सफर को काटना भी मेरी शक्ति से बाहर है।'

कमला से इतनी बात सुनी, तो कान्त एकाएक अपना मत नहीं दे सका। सच्चाई यह थी कि इधर कुछ समय से वह स्वयं अपने-आप में खो गया था। वह जब कमला को अपने समीप पाता, तो उसे लगता कि जैसे वह किसी अन्तरंग साथी के समीप आ गया था। इसलिये, उस समय भी कि जब वह कमला से विदा ले रहा था, तो कमला की उन मधुर आंखों में समाए जैसे एक अलभ्य और अनोखे संसार को देखने लगा था। यद्यपि, कान्त ने स्वयं अपने-आप में ऐसी अभिलाषा नहीं

पाई कि वह कमला सरीखी भाभी से कुछ पाना चाहता था। कमला उसे ऐसी वस्तु प्रदान कर सकती थी कि जो उसके लिये रोचक हो और उसके मन को आनन्द करने वाली हो।

परन्तु इधर कुछ समय से जैसे निश्चय ही, कान्त विश्वास पूर्वक कमला के समीप आकर कोई वस्तु पाता था। मन को चैन और शांति पाता था। कमला उसे अनुपम सुन्दरी और मोहक लगने लगी थी।

उस समय कि जब कमला ने अपने जीवन की कठिनाई का और जीवन-पथ की दुरुहता का उल्लेख कान्त से किया, तो लगा कि कान्त स्वयं ही, इसी रूप में कमला से कुछ कहना चाहता था। मानो कमला ने उसी के मन की बात कही थी। कमला यह बताने में सफल हुई थी कि मुझे चैन नहीं मन को शान्ति नहीं। जिसका कारण भी साफ था। कान्त भी उसे समझता था। लेकिन यदि कान्त भी अपने प्रति इसी प्रकार की बात कहे, तो उसका आधार क्या? क्या वह कमला को इङ्गित करके कुछ कहे? वह यह बताये कि मैं तुम्हें प्यार करता हूं...मैं तुम्हें पाना पसन्द करता हूं!

उसी समय कमला ने फिर कहा—'कान्तबाबू, इस जीवन के पार भी कुछ है, मैं नहीं जानती। मैं नहीं समझती कि आखिर इस नारी के जीवन को पाकर मैं किस प्रकार सफल बनी ..या कि

कान्त ने कमला की बात बीच में रोक दी और वह सामने पहाड़ की ओर दृष्टि उठाकर बोला—'कमल' देवी, इस जीवन के बारे में मैं कुछ नहीं जानता। मैं यह भी नहीं समझता कि सभी लोग इसे एक ही रूप में ग्रहण करते हैं। कोई कहते हैं कि इस जीवन का शास्वत रूप ही ग्रहण करने योग्य है। कोई इसे पूर्ण रूप से भोग की वस्तु मानते हैं। बहरहाल, इस जीवन की पूजा सभी करते हैं। शराबी भी जीवन मानता है और देवता का पुजारी भी। हां, यह नहीं

कहा जा सकता कि सचाई क्या है ? वैसे, लक्ष सभी का एक है। कोई चौड़े रास्ते से जाते हैं, कोई संकरी पगडण्डी से अपना सफर तय करते हैं।'

कमला ने कहा—'बाबू, मैं सोचती हूं—पाप की बात, पुण्य की बात ! क्या यह भी कुछ है ?'

कान्त इतना सुनते ही, जैसे कड़वे भाव में मुसकरा दिया। उसने तुरन्त ही कहा—'यह तो हमारी शक्ति और सन्तुलन पर निर्भर हो सकता है। स्थिति सभी जगह लागू है। वैसे जनसाधारण जिसे पाप कहते हैं, समर्थ लोग उसे नित्य करते हैं।'

कमला आँखों से हँसी और बोली—'एक दिन ताई जी आई थीं और कह रहीं थीं कि अब जल्दी ही तुम्हारा विवाह हो जाने वाला है। एक बहुत बड़े घर की लड़की तुम्हारे लिये चुन ली गयी है।'

इतनी बात सुन कर कान्त भी स्वयं हँस दिया—'यह बात तुमने अब सुनी, पर मैं तो देर से सुनता आ रहा हूँ। रतन भाई के विवाह पर ही यह बात चली थी और तब से रुक नहीं पाई। बराबर चलती आई है।'

कमला ने कहा—'विवाह तो करना ही होगा। तुम्हारे माता-पिता को तुम्हारा यह काम भी पूरा करना पड़ेगा।'

कान्त बोला—'करना पड़ेगा, मैं इस बात की पहेली को आज तक भी नहीं समझ पाया। क्या आवश्यक है, यह ?'

कमला ने इतनी बात सुनी, तो एकाएक अपना मत नहीं दिया। जैसे उससे कुछ नहीं कहा गया।

कान्त स्वयं बोला—'भाभी, देखता हूं, यहां सभी में भेद है। सभी एक दूसरे से पृथक हैं। हर कोई अपने प्रति अलग बैठकर सोचता है, वह वही पाना पसन्द करता है। पर मैं अपने लिये क्या कहूं ? कैसे कहूं कि मैं अभी निरलक्ष हूं। अभी अबोध पथिक हूं।'

इतना सुना, तो कमला ने आंखें तरेर दीं। वे सुन्दर और मादक आंखें जब कान्त ने देखीं, तो वह जैसे एकाएक मुग्ध बन गया। उसी समय, बरबस हो, बोल पड़ा— 'पर तुम्हें देखकर, तुम्हारे पास बैठकर, मैंने समझा है कि नारी को पाना—सुन्दर नारी से सम्बन्ध स्थापित करना भी मनुष्य का एक अमिट लक्ष है। मनुष्य को उसी में सुख मिलता है। कदाचित नारी की भी यही रीति है। वह भी यही पसन्द करती है।'

बरबस ही, आतुर स्वर में, कमला ने कहा—'मानव-विज्ञान की पोथी में एक ऐसा अध्याय हो, तो हो, मैंने वह नहीं पढ़ा। नारी को क्या चाहिये, कदाचित मुझे अभी इतना समझने का अवसर भी नहीं मिला।'

कान्त स्वतः आतुर बन गया और बोला—'न, भाभी ! तुमने वह समझा है, तुम्हें मानव-विज्ञान का वह अध्याय पढ़ने का अवसर मिला है।' उसने कहा—'भाभी, तुम्हारे मन की शांति इस तीर्थ-स्थान में नहीं है। मैं समझता हूं, तुम्हारे माता-पिता इसीलिये यहां आये हैं कि उनकी बेटी को चैन मिलेगा। भगवान का दर्शन भी यहां होगा। भला कैसी कोरी कल्पना है यह ! कितना अन्ध-विश्वास !'

कमला ने जैसे आहत स्वर में कहा—'मैं जीवन के अन्धेरे पथ पर खो गयी हूं, कान्त बाबू ! मैं स्वयं मूढ़ हूं। लगता है कि जीवन की गूढ़ पहेली सुलझाने में लग गयी हूं। पर सफलता से दूर हूँ।'

कान्त ने अत्यन्त उदास और गम्भीर स्वर में कहा—'भाभी, तुम अपने अभिभावकों के हाथों में खेल गयी हो। तुम्हारे पीहर वाले और ससुराल वाले अपनी प्रतिष्ठा और अपनी इच्छा की कठोर सांकल में तुम्हें बान्ध चुके हैं। वे क्या तुम्हें यों सरलता से छोड़ सकते हैं ?'

कमला ने दूर क्षितिज की ओर देखकर कहा—'कान्त बाबू, आज कहती हूं तुमसे, मुझे अपने स्वसुर पर गर्व है। मैं आज इस प्रायश्चित

की आग में धधक रही हूं कि मैंने अपने जीवित पति का अस्तित्व नहीं समझा। मैंने अपने माता-पिता के लाड़-प्यार को ही सुसराल में पाना पसन्द किया। उसी आमोद-प्रमोद में अपने को डुबा देना चाहा कि जो मुझे पैतृक-सम्पत्ति के रूप में प्राप्त हुआ था।'

कान्त ने कहा—'मेरा विश्वास है, तुम अब भी भावना से भरी हो। पहिले यदि माता-पिता के वैभव का धुआं तुम्हारे मस्तिष्क पर छाया हुआ था, तो अब आदर्शवादी स्वसुर की कामना और इच्छाओं का तारतम्य तुम्हें अपने में बांध सका है। बोलो, इन दोनों के मध्य में तुम्हारा अस्तित्व कहां है? क्या तुम्हारे विचार भी अपना कोई महत्व रखते हैं? मेरा मत है कि तुम्हारा अभी कोई ध्येय नहीं। जानता हूँ, ऐसी परिस्थिति में कोई निश्चित मत हो भी नहीं सकता। इस ढिलमिल अवस्था में तुम्हें कुछ भी प्राप्त नहीं हो सकता।'

कमला ने कहा—'अब मुझे कुछ भी प्राप्त नहीं करना। स्वसुर के पास जितनी जमीन है, वह मेरे लिये काफी है। वैसे मेरे पिता की बड़ी जायदाद भी अब मेरे नाम हो जाने वाली है। वैसे मैं इन सबको नगण्य मानती हूँ। मैं अपने जीवन का पोषण करना जानती हूं।'

कान्त उस समय गम्भीर बना कमला की बात सुनता रहा। वह पूर्ववत् सामने ऊंचे पहाड़ की ऊंचाई को देखता रहा। उस अवस्था में ही, वह अनुभव करता रहा कि यह कमला सहज और सुप्राप्य नहीं। वह उसे नहीं खोज सकता। जैसे वह पहाड़ की ऊंचाई पर पहुँच चुकी है और वह अभी नीचे ही खड़ा है। उसमें और कमला में बड़ा अन्तर है। जैसे पूरा का पूरा हिमालय उनके मध्य खड़ा है। अतएव, वह कमला को नहीं छू सकता। नहीं पकड़ सकता।

किन्तु कान्त उस हरिद्वार में जिस उद्देश्य को लेकर आया था, वह उसे जरूर सार्थक करना चाहता था। उसने मसूरी से कमला को जो पत्र लिखा था, तो उसका अर्थ ही यह था कि कमला गांव से

चलने से पूर्व, उसे अपना हरिद्वार का पता दे। वह वहां आये। कमला से मिले। इसीलिये वह अपने मन की बात बिना कहे नहीं रह सकता था। वह उसे निश्चित रूप से कह देनी पसन्द करता था। अतएव, उसने जब कमला से भरण-पोषण की बात सुनी, तो उसने कमला को लक्ष किया और उसकी आँखों में झाँकता हुआ बोला— 'कमला जी, पोषण तो सभी करते है, जिनके पास कुछ नहीं होता, वे भी कर पाते हैं। पर क्या तुम अनुभव नहीं करती कि इन्सान पेट की रोटियों से ऊपर भी कुछ चाहता है। नारी भी चाहता है। क्या उस भूख की तृप्ति की ओर तुम्हारा ध्यान गया है? कुछ तुमने सोचा?'

कमला ने कहा—'मैं अभी अन्य किसी विषय पर नहीं सोच पाती, कान्त बाबू! न इच्छा करती हूं।'

कान्त ने कहा—'तो तुमसे कुछ कहना व्यर्थ है। अपने को हल्का बनाना है।'

कमला ने बड़ी निपुणता से आंखों से हँस दिया—'तो कहने से ही समझा जा सकता है? जो बोल नहीं पाते, सुन नहीं पाते, उनके मनोभावों को भी समझने का उपाय बन गया है। उनकी मौन भाषा को लोग समझ जाते हैं। तुम्हें जो कुछ कहना था, वह मैंने समझ लिया। मैंने तुम्हारी बात का अर्थ पा लिया, कान्त बाबू!'

इतना कहना और सुनना जैसे कान्त के लिये और कमला के लिये कम नहीं था। इसके बाद दोनों मौन बन गये। जैसे जड़ हो गये। तभी देर की चुप्पी को तोड़ कान्त ने कहा—'भाभी, देखता हूं कि मैं दोषी बन गया। तुम्हारी दृष्टि से भी गिर गया। क्षमा मांगता हूँ। सचाई यह है कि मैं तुम्हारे अभाव की पूर्ति के हेतु ही, अपने आपको इस अवस्था में ला सका। मैं अपना विवाह करने से पूर्व, तुमसे बात करनी पसन्द करता था। मैं पहिले तुम्हारे अधिकार की रक्षा

चाहता था।'

कमला ने कहा—'मैं इसे अनुभव करती हूं, कान्त बाबू ! तुम्हारे मन की अवस्था भी समझती हूँ। परन्तु देखते हो, मैं अब जीवन की दूसरी पगडण्डी पर चढ़ चुकी हूं। यद्यपि, लोगों के मन से मैं शिक्षित हूं, परन्तु फिर भी, मैं नारी हूं। दुर्बल हूं! मैं जीवन के जिस विशाल और गहरे दरिया में पड़ी हूं और बह चली हूं, उस दरिया के थपेड़ों से क्या यों सरलता से बच सकती हूं ? न, कदापि नहीं। पर देखती हूं तुम भी एक थपेड़ा मारने चले हो। तुम भी मुझे गहरे पानी में डुबो देने की बात सोचते हो। बताओ—क्या यही तुम्हारा काम था? इसी धारणा पर तुम मेरे देवर बने थे। इसी नाते से तुम अपने भाई की मृत्यु पर रोये थे। छिः कान्त बाबू ! मैं हूँ ही जन्म की दुर्बल; पर तुम मुझसे भी गये—बीते हो ... ... तुम ......'

एकाएक जैसे मर्माहत बनकर कान्त चीख पड़ा—'भाभी—'

किन्तु भाभी ने सहज और गम्भीर बनकर कहा—'कान्त बाबू, मैं अब निश्चित रूप से समझ चुकी हूं कि इस अवस्था में हम और तुम नहीं मिल सकते। शान्त नहीं रह सकते ! तुम न जलोगे, तो मैं जलूंगी। भला एक पुरुष के सम्पर्क में आकर क्या नारी अपना अस्तित्व रख सकेगी ?—न, कभी भी नहीं ! लोग कहते हैं कि नारी आग है, पर मैं कहती हूं, नहीं; पुरुष आग है। वह अपनी वासना की भट्टी में नारी को झोंक देता है ... ... नारी का अन्त कर देता है !'

कान्त बोला—'तुम वास्तविकता से दूर हो, भाभी !'

कमला ने उसी संयम और कठोर भाव में कान्त की ओर देखा और हाथ से इशारा करके कहा—'मेरी बात पर विश्वास न हो, तो देखो उस नारी की ओर ! देखो, उसके साथ कितने मेंमने सरीखे बच्चे हैं ! यह बेचारी सभी के लिये मांगती है। अक्सर स्वयं भूखी सोती है। लेकिन मदान्ध पुरुष जो इसका यौवन छीन कर भाग गया, अब सूरत

भी नहीं दिखाता। अभी कठिनाई से तीस वर्ष की होगी, यह बेचारी ! पर बुढ़िया सरीखी लगती है। निरी कंकाल बन गयी है। बच्चे भी दीन बने हैं।' यह कहते हुये कमला ने सांस भरी और बोली—'मैंने इससे बात की है। यह बेचारी भी मुझ सरीखी विधवा बनी थी। एक युवक इसे भगा लाया था। इसके अन्तःप्रदेश की आग को भड़का कर वह पुरुष अपने हाथ सेंकता रहा और जीवन का रस पाता रहा। बताओ वह निरा जंगली नहीं था ? ... ... क्रूर और मदान्ध नहीं... .. कुत्ता कहीं का !'

कान्त ने दूर से सड़क पर बैठी उस नारी को देखा। देखता रहा। वह कुछ बोल नहीं सका।

कमला ने कहा—'विवाह तो मेरा हो चुका, कान्त बाबू ! रही इच्छाओं की तृप्ति की बात, वह मैं अनुभव करूंगी। यदि मैं अपनी शक्ति से बाहर हो गयी, तो परिस्थिति के समक्ष झुक जाऊंगी'

कान्त ने कहा—भाभी, तुमने बहुत कुछ कहा। मैंने भी बहुत सुना।'

कमला बोली—'अब तुम सलोनी बहू लाओ। इसकी प्रतीक्षा करूंगी।'

कान्त मौन रहा। उसी समय उसने घड़ी देखी और चलने के लिये उद्यत हो गया।'

कमला ने कहा—'परिस्थिति ने हमें बहुत समीप ला दिया है, यह न भूलना।'

कान्त ने सुना और मुसकरा दिया। जब वह स्टेशन जाने लगा और तांगे में बैठ गया तो कमला बोली—'मैं गांव में जल्दी लौट आऊंगी, मिलोगे ना ?'

कान्त ने उदास भाव से कह दिया—'कहा नहीं जा सकता। तब तक कालेज के खुलने का समय आ जायेगा।'

'अच्छा, अच्छा, चले जावो, तो पत्र ही देना।' इतना कहा और कमला ने अपनी मधुर आँखों से मुस्करा दिया।

कान्त ने नमस्ते की और चला गया।

१३

परिस्थितियों के जिस तीव्र प्रवाह में बहती हुई कमला सहज भाव से शशिकान्त का परिचय पा गयी और उसे निकट का एक अनुपम आत्मीय समझकर, जीवन की जाने कितनी बातें उससे कह सकी थी। उसी को टका-सा जवाब देकर; और अपने पास से बिदा करके, निःसन्देह कमला अपने आप में खुशी नहीं थी। परन्तु उस समय कमला के समक्ष और कोई विकल्प नहीं था। उसके मन में इस प्रकार की एक दिन भी धारणा या इच्छा पैदा नहीं हुई कि अब वह दूसरा विवाह करेगी। यद्यपि, पिता का प्रस्ताव उसके सामने आ चुका था। उसके स्वसुर रामलखन ने भी इस बात के लिये कमला को खोजने का प्रयत्न किया था। किन्तु कमला ने न केवल अपने से, अपितु सभी से एक ही बात कही कि वह विवाह नहीं करेगी।

लेकिन दिखता यह था कि कमला की बात और थी और उसके जीवन की स्थिति और। बचपन से उसने जिस प्रकार के वातावरण में रहने के लिये अपने को ढाल लिया था, उसका प्रभाव अभी नहीं मिटा। कुमारी कमला का मन वैवाहिक जीवन में भी उसी विनोद और आमोद पूर्ण जीवन को पाने के लिये छटपटाता रहा। पति से भी उसका इसी बात पर मतभेद होता रहा।

परन्तु वैधव्य के श्राप से श्रापित कमला के मन में एक बात आ गयी थी। वह प्राय: सोचती थी कि आखिर यदि इसका विवाह भी किया और वह पति भी चला गया—साथ छोड़ गया, तो तब? तब वह किस स्थिति को स्वीकार करेगी? क्या तीसरा विवाह करेगी? फिर चौथा? इस प्रकार, अनेक रातों में, दिन के अनेक शान्त तथा एकान्त प्रहरों में कमला के समक्ष यह समस्या पैदा होती और उसे विचलित करती। जिसका परिणाम यह हुआ कि कमला के मन से पुरुष सम्पर्क का विचार मिटता गया। उस विषय में चौधरी रामलखन का उपदेश भी अपना प्रभाव स्थापित करता रहा।

किन्तु जब कमला ने अपने निकट के साथी और समाज द्वारा घोषित देवर शशिकान्त की स्पष्ट बात सुनी, तो तब, वह उसे रूखा सा जवाब देकर भी, और अपने पास से विदा करके भी, अनायास पैदा हुई अपने मानस की बेचैनी दूर नहीं कर सकी। कमला बरबस ही अशान्त बन गयी। वह बार-बार अपने से प्रश्न करती, कि क्या यह अच्छा हुआ कि कान्त बाबू को यों अपमानित कर दिया?... ... उपेक्षा के साथ उसकी बात को अनसुना कर दिया। वह अपने से कहती—न, न, कान्त बाबू को दुःख हुआ होगा। निश्चय ही, उन्हें अच्छा नहीं लगा होगा। उनका बड़े घर में विवाह होने वाला है। मुझसे भी सुन्दर पत्नी उन्हें प्राप्त हो जाने वाली है।

तब? क्या मैं उनकी बात स्वीकार कर लेती? कमला अपने से प्रश्न करती। वह स्पष्ट रूप से अपने को खोजना चाहती कि क्या अब यही मेरे लिये रह गया है? मुझे यही करना है? यही मेरा ध्येय है?

लेकिन, कान्त के जाने के देर बाद तक भी, कमला अपने बिस्तर पर पड़ी इस बात का स्पष्ट उत्तर अपने से नहीं पा सकी। उस समय पिता और माता बाजार गये थे। कमला अकेली थी। नौकर भी डेरे

पर नहीं था। जिस कमरे में कमला पड़ी थी, उसकी खुली हुई खिड़की से सामने का ऊंचा पहाड़, दिख रहा था। उस पहाड़ की हरियाली कुछ समय पूर्व कमला को अपनी ओर आकर्षित कर रही थी। कमला के मन में हरिद्वार आकर कई बार आया कि वह उस पहाड़ पर जाये। वहां की वनस्पति खाये। किन्तु उस समय, जब कि कान्त को गये कठिनाई से एक घण्टा हुआ होगा और वह गाड़ी पर चढ़ कर हरिद्वार की सीमा से दूर भी निकल गया होगा, तो कमला सोचती, इस पहाड़ की ऊंचाई के सदृश ही, हमारा जीवन है ... ... जीवन दुरूह है ... कठोर है और निर्मम है !

उस समय, निश्चय ही, यदि कान्त लौट आता, तो तब, कमला जाने कितने अपार स्नेह को अपनी वाणी में उंडेल लेती और आँखों में जीवन का समूचा मद भर कर, उससे कहती, तुम कैसे निठुर देवर हो मेरे, कि मेरी जरा सी बात पर रूठ गये ... तुम मेरी बात पर बिश्वास कर गये ... ...

इतना कह कर कमला तुरन्त चारपाई से उठ खड़ी हुई। जैसे उसके मस्तिष्क की सभी शिरायें भागी और बेचैन हो गयीं। उसका खून भी तीव्र गति से बहने लगा। छाती धड़कने लगी। तभी उसने खिड़की पर खड़ी होकर कहा—'तो ... ... तो ... ... ?' कमला ने पहाड़ की ओर घूरा और कहा—'यह पहाड़ सदियों से इसी प्रकार खड़ा है। पृथ्वी की छाती पर यह भी कितना बड़ा बोझ है। पर क्या बेकार है, यह पर्वत ! लोग इसे देखकर क्यों हर्ष का अनुभव करते हैं। क्यों अजीब सी कल्पना करते हैं। प्रकृति के इस विराट रूप के समक्ष लोग क्यों अपना सिर झुकाते हैं। इसीलिये न कि इसके पास अपनी एक विशेषता है ? इसका अपना जुदा ही अनुशासन है ? यह एक रस है। गम्भीर है। कठोर और गहन है ?'

'और तू ... ... कमला ... ...?' कमला ने अपना माथा

पकड़ लिया। उसने पहाड़ की ओर से मुंह फेर लिया और कहा—'मैं अधम हूँ। मैं अपनी इच्छाओं की दास हूं। मैं अपने आप में जल उठी हूँ। कातर हूँ। दीन हूँ।'

किन्तु उस समय, जब कि कमला एकाएक अशान्त बन गयी। तो वह छूटते ही बोली—'सब मेरा दोष है। इस कान्त को मैंने ही निमन्त्रण दिया कि वह मेरे पास आये, बैठे और बातें करे। भला क्यों? किसलिये? इसलिये न कि कान्त सुन्दर है? मेरे मन के अनुरूप बात करता है। वह मुझे प्रसन्न करने के लिये अपना वाक-चातुर्य्य व्यय करता है! किसलिये? क्यों?'

कमला ने कहा—'वह मुझे पाना चाहता है। बिल्ली के भागों छींका टूट गया है। मैं विधवा हो गई हूं। अब मुझे समाज का कोई भी व्यक्ति पाने की इच्छा कर सकता है। यह नारी पुरुष के लिये भोग्य पदार्थ है। पुरुष इस नारी को खाता है। कट-कट चबाता है, पुरुष नारी का खून पीता है, मांस खाता है!'

'हे राम!' कमला ने कहा। मानो उसका समूचा अन्तस्थल द्रवित हो गया। उसका रोम-रोम कांप गया। उसी समय उसकी दृष्टि गंगा तट की ओर गयी। एक दम्पत्ति, वह युगल जोड़ी, हाथ में हाथ डाले, अपनी ही सीमा में डूबे हुये उस गंगा तट पर घूम रहे थे। उसी समय जब कमला की उन दोनों पर दृष्टि पड़ी, तो उसने देखा कि युवक ने उस युवती का हाथ दबाया और युवती ने जिस चतुर तथा अनोखे भाव से उस युवक की ओर अपनी आंखों को तरेरा, वह निःसन्देह, कमला की आँखों में गड़ गया। चूंकि कमला की दृष्टि उसी ओर थी। तो बरबस, उस नीचे चलती युवती की दृष्टि उस पर गयी। वह कमला को देखते ही लजा गई। जैसे झेंप गयी। किन्तु उस युवती के मन की उस अवस्था को देख, कमला स्वयं ही पीछे को हट गयी। वह बोली—'मैं कहती हूं, औरत भी भूखी है ...... पुरुष की भूखी है!' और कहा

उसने—'क्या मैं नहीं ... मेरा मन नहीं ! मैं भी कातर हूँ ...... दीन और मोहताज हूँ।'

उसी समय, कमला के पिता और माँ बाजार से लौट आये। नौकर के हाथ में सामान था और खाना था, कमला को लक्ष कर माँ ने पूछा—'कान्त कहाँ है ?'

कमला ने कह दिया—'वह ला गया !'

'चला गया ?' मा ने आश्चर्य से कहा—'क्यों ? इतनी जल्दी।'

कमला न कहा—'उसे जाना था, माँ ! देर से बाहर था। वह जाने कहाँ-कहाँ अपने साथियों के साथ घूम कर लौटा था !'

माँ ने कहा—लड़का अच्छा है। शर्मीला है। इतना पढ़कर भी उसमें गरूर नहीं आया।'

पिता बाजार से आकर चारपाई पर लेट गये थे। पत्नी की बात सुनी, तो बोले—'ऐसे लड़के भाग्य भरोसें रहते हैं ! स्वयं अपना रास्ता नहीं बना सकते। उन्नति करते नहीं दीखते।'

पत्नी ने कहा—पढ़ा-लिखा है। बाप के पास जमीन है और उसे क्या चाहिये ?'

पति ने किंचित ईर्षा भाव से कहा—तो एम०ए० पास करके क्या घास खोदेगा, या हल चलायेगा ? गांव में रहकर तो पढ़ाई को बेकार कर देगा।'

पत्नी ने इस बात को स्वीकार नहीं किया। उसने तुरन्त कहा—तुम्हें तो सदा यही सूझता है। पुरखों की कमाई पर सदा गुलछर्रे उड़ाते रहे हो। हाथों से मेहनत करनी पड़ती, तो पता चलता।'

पति ने इतना सुना, तो खिलखिला कर हँस दिया। उन्होंने इतने जोर का ठहाका मारा कि कमरा बोल गया।

पत्नी बोली—'क्यों, झूठ कहती हूँ मैं ?'

पति ने कहा—'जी, नहीं, बिलकुल सच !' और कहा उन्होंने—

'पर देवीजी, अब पेट में भी चूहे लोट रहे हैं, जो सामान लायी हो, उसे दे दो।'

पत्नी ने कमला की ओर देखा—'बेटी, तू सब को दे दे। तू भी खा ले।' और कहा नौकर से—'मंगतू, पानी लाकर रख! तू भी खा ले।'

कमला ने कहा—'और माँ तुम ?'

माँ ने कहा—'बेटी, मुझे अभी भूख नहीं है। ठहर कर खा लूंगी।

खाना खाते हुये ठाकुर ने कहा—'हम कल मसूरी चल पड़ेंगे। दोपहर का भोजन वहीं करेंगे। यह अच्छा रहा कि ठाकुर सुदर्शनसिंह का पत्र मिल गया, हजरत ने हमें याद खूब किया।' वह कमल को लक्ष करके बोले—'बेटी जानती हो, उन ठाकुर साहब को कि जिन हाथी पर तुम एक बार गिरते-गिरते बची थीं। वह अपना हाथी तुम्हारे विवाह में भी ले आये थे।'

कमला की माँ बोली—इसके विवाह में तो हाथियों की भीड़ लग गयी थी। करीब दस तो आ गये थे। जितना बारती और मेहमानों ने आटा खाया, उतना वे दस खा गये। ईख अलग उजाड़ गये।'

पति ने कहा—'ब्याह-शादियों में लोग ऐसी चीज ले ही जाते हैं। शान समझते हैं। शान के लिए ही तो हाथी सरीखा खर्चीला जानवर रखते हैं।'

पत्नी बोली—'ठाकुर जाति इसी शान में मर गई, लुट गई।'

पति ने कहा—'ये ठाकुर सुदर्शनसिंह भी जिन्दादिल आदमी है। पूरा यारबाश है। खर्च भी खूब करता है। कमाता भी है। हमारी कौम में आस-पास के जिलों में इससे बड़ा ठाकुर और कोई नहीं है। पर देखो, हमसे कैसी मोहब्बत रखता है। कमला की शादी में करीब एक हजार रुपया खर्च कर गया था।'

पत्नी ने कहा—'इससे ज्यादा। एक हजार का तो वह हार होगा कि जो वह कमला के गले में डाल गया था।'

'हाँ, हाँ, इसका तो मुझे ध्यान ही नहीं रहा।'

पत्नी बोली—'मजाकिया भी खूब है। जाने मुझे भाभी क्यों कहता है ?'

पति ने कहा—'वह मुझे बड़ा भाई समझता है। वह बोला—'जब रतनलाल का देहावसान हुआ, तो ठाकुर यहाँ नहीं था। विलायत गया हुआ था। उसे बहुत देर में पता चला। पत्र दिया और अब जो उसने मसूरी जाने से पहिले पत्र दिया, उसमें यही तो लिखा है कि सब मसूरी आना, कमला को भी लाना। उसका वहाँ अपना मकान है। पत्र में बड़ा जोर दिया है।'

पत्नी ने कहा—'पर भगवान की माया कि औलाद उसके भी नहीं।'

पत्नी ने कहा—'इसी का अभाव है। वह तो अपने इस गम को शराब पीकर भुला देता है, परन्तु पत्नी बेचारी का बुरा हाल है। पिछले दिनों जब बाहर गया, तो पत्नी का इलाज कराने स्वीजरलैंड पहुंचा था। करीब पचास हजार रुपया खर्च करके आया था।'

पत्नी ने सांस भर कर कहा—'बड़ा आदमी है, बड़ी बातें हैं।'

पति ने कहा—'उसका दिल भी बड़ा है। आजकल वह एक शुगरमिल चला रहा है। जाने कितनी कम्पनियों में अपना साझा कर लिया है। जमींदारी खत्म होने पर हम लोग लुट गये, पर वह तो अपने कई गांव हाथ से निकाल कर भी पहिले से अधिक पैसे वाला बन गया।'

पत्नी ने कहा—'वह चतुर है। होशियार है।'

खाना समाप्त हो गया। ठाकुर भोजन करके फिर बिस्तर पर पड़ गया। कमला ने एक किताब उठा ली और पढ़ने लगी। जब सब खा चुके, तो पत्नी भी खाने लगी।

उस समय, ठाकुर ने पत्नी को लक्ष किया और कहा—'एक बात मैं अनुभव करता हूं कमला की मां, कि पैसा ही सब कुछ नहीं। आदमी की प्रतिष्ठा केवल पैसे से ही नहीं बनती। चौधरी रामलखन के पास तो पैसा नहीं। हालांकि कमला के विवाह से पूर्व मेरा यह अन्दाजा था कि चौधरी बिलकुल खाली नहीं। लड़के के विवाह में जेवर भी चढ़ायेगा। बारात भी शान के साथ लायेगा। पर हजरत बाजा तक लेकर नहीं गये। मुझीको अपनी प्रतिष्ठा रखने के लिये शहर से बैण्ड मंगाना पड़ा। लेकिन कमला के विवाह में जिस प्रकार के बराती हमारे यहां पहुंचे, वैसे क्या आजकल किसी राजा-महाराजा के यहां पहुंच सकेंगे? न, कभी नहीं। चोटी के चुने हुए नेता हमारे यहाँ गये थे। चौधरी की सभी कमियों पर बरातियों ने पर्दा डाल दिया। मैंने उसी समय समझा कि चौधरी का कितना सम्मान है। और अब सम्बन्ध बनाकर मैं इस परिणाम पर पहुंचा हूं कि वह इसी योग्य हैं। सचमुच देवता हैं।'

पत्नी ने कहा—'उसने जनता की सेवा की है। अपना घर बरबाद किया है।'

'हां, हां, पहले ये भी बड़े आदमी थे। सुनता हूं कि इस ठाकुर परिवार के घर पर हाथी बन्धता था। आस-पास बड़ा दबदबा था।'

कमला ने कहा—'उन्होंने अपनी जमीन बेच-बेच कर लोगों की सहायता की है। गांव का बच्चा-बच्चा उनके सामने सिर झुकाता है।'

ठाकुर ने कहा—'हां, हां, मुझे पता है। तभी तो उन्हें 'चौधरी' कहा जाता है।'

कमला बोली—'वे आज भी दूसरों के दुःख को अपना दुःख मानते हैं। वे तो रात में कभी-कभी जाग कर रो पड़ते हैं।'

'लेकिन चौधरी को पत्नी अच्छी नहीं मिली।' ठाकुर ने कहा।

कमला बोली—'न, पिता जी! वे भी स्थिति को समझ लेती हैं। बस, पढ़ी नहीं हैं। जब समझाया जाता है, तो रास्ते पर आ

जाती है।'

ठाकुर ने कहा—'सुनता हूं, लोग चौधरी को इस बार असेम्बली के लिये खड़ा करेंगे। और ठाकुर सुदर्शन भी खड़ा होना चाहता है। उसने अपने पत्र में यही सब तो लिखा है। शायद ठाकुर ने तुम्हें भी इसीलिये बुलाया है कि अपने श्वसुर को रोक दो। सुदर्शन को जाने दो। वह वहां जाकर और अधिक अपना स्वार्थ सिद्ध कर लेता। मौका मिला तो वह मिनिस्टर भी बन जायेगा।'

कमला ने कहा—'लेकिन मेरे पिताजी ऐसा कोई स्वार्थ नहीं रखते। वे ऐसे चुनावों में खड़े होना भी पसन्द नहीं करते।'

ठाकुर ने कहा—'मैंने तुम्हारे कानों में निकाल दिया है। ध्यान रखना। तुम्हारा कहना चौधरी कभी नहीं टाल सकते।'

१२

चौधरी रामलखन के मन में यह बात दृढ़ होती जा रही थी कि समाज के विषैले तत्व जब तक नष्ट नहीं होंगे, तब तक समाज शुद्ध नहीं बन सकता। इन्सान में पवित्रता नहीं आ सकती। चौधरी देखता कि प्रत्येक मनुष्य पैसे के पीछे भागता है। उस पैसे को प्राप्त करने के लिये सभी प्रकार के प्रयत्न करता है। चोरी, डाका और लूट कदाचित उस प्रयत्न का सब से विकृत रूप हैं। इस तरह का जंगली बना हुआ इन्सान, जो धर्म की महत्ता भी स्वीकार नहीं करता, समाज और सरकार के नियम तथा कानून भी नहीं मानता, तब उसका कैसे नियन्त्रण हो। वह किस प्रकार सच्चा इन्सान हो!

फलस्वरूप, जब इस प्रकार के प्रश्नों में चौधरी का मन उलझता, वह उनमें से किसी एक को भी न सुलझा पाता, तो तब, जैसे अपने को बेकार पाता। उस पंचतत्व के शरीर को व्यर्थ समझने लगता। इसका परिणाम यह हुआ कि चौधरी के मन की अवस्था दिन प्रति दिन बदलती गयी। वह बात-बात पर चिढ़ने लगा और लोगों से झगड़ने लगा। चौधरी की इस अवस्था को देख, कुछ का यह अनुमान था कि गांव के झगड़े में जो सिर में चोट लगी, तो उसी से, चौधरी की विचार करने

की शक्ति लुप्तप्राय हो गई है। परन्तु ऐसा नहीं था। चौधरी की मानसिक शक्ति बदस्तूर थी। केवल विचार करने की परिपाटी बदल गयी थी। चौधरी पहले जिन क्षुद्र व्यक्तियों को प्यार करता था, अब उन्हें फटकार देना पसन्द करता। अथवा गोली मार देना ही हितकर समझता, जिस ठाकुर के आदमी ने उसके सिर में लाठी मारी, वह आदमी चौधरी की दृष्टि से कभी भी ओझल नहीं हुआ। उस आदमी को एक बार चौधरी ने अपनी दस बीघा जमीन मुफ्त में दे दी थी। उसे लिखकर दे दिया गया था कि वह उस जमीन का मालिक है। किन्तु वही व्यक्ति दूसरे के कहने पर ऐसा भीषण कर्म करने के लिए उद्यत हो गया, यह चौधरी की कल्पना में भी नहीं आ सकता था। यद्यपि अदालत में रामलखन किसी के विरुद्ध नहीं हुआ, परन्तु जिन्होंने झगड़ा किया, वे सभी अब उसकी दृष्टि में क्षमा योग्य व्यक्ति नहीं रह गये थे। वह झगड़े के सूत्रधार ठाकुर से भी घृणा करने लगा था।

किन्तु अवसर की बात, कि जब चौधरी रामलखन का मन गांव की राजनीति और गांव के किसी व्यक्ति की सेवा से विमुख हो रहा था, तो तभी, उसने सुना कि वह ठाकुर कि जिसने उसके सिर में लाठी मारी, अत्यन्त परेशान है। उसका एक मात्र पुत्र मौत के मुंह में पड़ा है। पास में बेचारे के पैसा नहीं, इसीलिये लड़के का समुचित इलाज भी नहीं करा सकता। रामलखन ने इतना सुना, तो अनसुना कर गया। वह उस ठाकुर के घर नहीं गया।

किन्तु जब वह एक दिन संन्ध्या के समय दरिया किनारे से घूम कर लौटा, तो तभी, पत्नी रामकली ने टंकोर कर कहा—'अजी, सुना तुमने, हरपाल का लड़का सख्त बीमार है। उसका चला-चली का हाल हो गया है।'

रामलखन ने सुनकर केवल 'हूं' कर दिया और अपनी ओर से कुछ नहीं कहा।

किन्तु रामकली ने पति के उस रुख को देख कर कहा—'तुम कैसे हो गये हो जी, इतनी बड़ी बात सुनी और टाल दिया। बेचारे का लड़का चला गया, तो सच, वह पागल हो जायेगा। उसकी मां रो-रोकर अन्धी हो जायेगी। हरपाल के लड़के का अभी ही तो विवाह हुआ है। बहू के हाथों में लगी मेंहदी भी नहीं सूखी। हे राम!'

इतना सुना कि चौधरी रामलखन के दिमाग का पारा ऊपर चढ़ गया। उसने तड़प कर कहा—'लड़का मेरा भी मरा। मेरे लड़के की बहू भी रांड हो गयी। तू भी निपूति बन गयी। मेरी कमर भी टूट गयी। बोल मैं क्या करूं? जब मैं अपना लड़का नहीं रोक सका, तो हरपाल के लड़के के लिये क्या धन्वन्तरि वैद्य बन जाऊं? उसका लड़का मरे तो मर जाये! दुनिया में नित्य जाने कितने लड़के मरते हैं। कितनी जवान युवतियां विधवा बनती हैं। कितने मां-बाप अपना सिर धुनते हैं। कोई सीमा है, इसकी! जैसे दुनिया की सीमा नहीं, ऐसे दुनिया के कष्टों और पीड़ाओं का भी कोई अन्त नहीं...'

पत्नी ने इतना सु ा और अपने माथे में हाथ मार कर कहा—'रे, परमात्मा!' और वह बोली—'दिखता है, तुम आज भी किसी से लड़ आये हो। ज्यों-ज्यों बूढ़े होते जाते हो, त्यों-त्यों तुम बदलते जाते हो। जवानी में उदार बने, भले बने और दानी बने, तो अब बुढ़ापे में कठोर और संगदिल होते जा रहे हो!' उसने कहा—'कसूर हुआ मेरा, माफ करो। अब तुमसे कुछ न कहूंगी। अपनी खुशी से किसी को कुछ भी दे आओ, पर मैं कहूं, तो आग उगलते हो! आज याद करती हूं, तो रोती हूं, सिर धुनती हूं, कि मेरे बदन के जेवर तक दूसरों को दे आये। यहां तक दानी बने कि अपने बदन के कपड़े तक पहना आये, दूसरों को! पर मैं पूछती हूं, जब मरने की घड़ी आ गई है, कब्र में पैर फैलाने चले हो, तो अब माया-ममता इतनी सताने लगी! सोचा होगा, बुढ़ापे की कमाई बहू के काम आयेगी।

पर मैं कहती हूं कि अब तुम्हारी बुद्धि पर पर्दा पड़ गया है। तुमने जवानी में जितना कमाया, उसे बरबाद कर रहे हो। लोग बुढ़ापे में अपना नाम उजागर करते हैं और तुम मिटाते हो। दुनिया की रीति है कि जब लोग अपने सफर की तैयारी करते हैं, तो सभी से मिलते हैं... सभी को अपना बनाकर जाते हैं। पर तुम लोगों से बिगाड़ कर जाना चाहते हो।'

चौधरी ने तनिक हंस कर कहा—'अरी, पगली ! चुप कर अपनी जबान ! कोई सुनेगा, तो क्या कहेगा कि औरत ही अपने आदमी का मरना चाहती है ? उस घड़ी की बाट जोहती है।'

रामकली ने फिर अपने माथे में हाथ मारा—'और लो, काजी पर तो बसायी नहीं, मस्जिद पर सिर मारने लगी ! तो मैं तुम्हारा मरना चाहती हूं ? बड़ी दौलत छोड़ कर जाओगे ना, जिसे बैठ र खाऊंगी और लुटाऊंगी। और मैं तो बैठी रहूंगी न, हजार वर्ष ? राम-राम ! तुम्हें लाज भी नहीं आती, ऐसा कहते ?'

रामलखन ने शान्त स्वर में कहा—'तो क्या हरपाल आया था, इस ओर ?'

पत्नी ने कहा—वह बेचारा क्यों आता ! 'वह तो अब भगवान की प्रार्थना करता होगा। विपत्ति में पड़ा अब किस-किस के दरवाजे भटकता रहेगा। सुनती हूं, ठाकुर के पास गया था। वह रुपये दे देता, तो डाक्टर को बुला लाता। पर उसने साफ इन्कार कर दिया। कम्बख्त, हजारों रुपया दबाये बैठा है और फिर भी कुछ रुपये न दे सका, बेचारा हरपाल क्या कर लेता। वह पाई-पाई उतार देता। सुनती हूं, ठाकुर के साथ वह चेता चमार से लड़ा था। फिर भी, आंखों पर पत्थर रख बैठा।'

चौधरी बात सुनते हुए गम्भीर हो गया। उसके माथे की नसें भर गयीं। भवें भी चढ़ गयीं। उसने ऊपर काले आसमान की

ओर देखा और कहा—'रामकली इस हरपाल की लाठी से मेरा सिर फटा था। यह मैंने तुझसे भी नहीं बताया। सोचता था, तू भी हंसी करेगी। इस हरपाल की गरीबी को देख, जब दस बीघे जमीन दी थी, तो तेरा विरोध मुझे स्वीकार नहीं था। याद है, तब मैंने तुझे भी बुरा-भला कह दिया। यहां तक शायद कहा था कि नहीं रहती है, तो घर से निकल जा। रतन बीच में न पड़ता, तो शायद मेरा-तेरा झगड़ा भी बढ़ जाता। मैंने गांव में आज तक किसी को नहीं बताया कि इस हरपाल ने मेरा सिर क्या फाड़ा, मुझे मौत के रास्ते पर फेंक दिया था।'

इतना सुना, तो रामकली ने सांस भरी। वह भी मौन बनकर आसमान की ओर देखने लगी। उसी अवस्था में वह बोली—'देखो, मैं तो गंवार हूं। तुम्हारे ही पुण्य-प्रताप से कुछ सीख पढ़ गयी हूं। हरपाल ने जो-कुछ किया, अपनी समझ से किया। तुम करो, अपनी समझ से। बड़े सदा छोटों के कसूर माफ करते हैं।' और बोली वह—'रोटी लाऊं? खा लो। ठण्डी हो रही है।'

किन्तु रामलखन ने रोटी खाने की बात नहीं सुनी। रामकली ने जिन्दगी में पहली बार जो ऊंची बात कही, वह चौधरी के दिल से छू गयी। उसके सामने एकाएक ही दृश्य नाच उठा कि हरपाल का लड़का बीमार पड़ा है। वह दम तोड़ देने वाला है। हरपाल, उसकी स्त्री और लड़के की जवान बहू बीमार की ओर आतुर नयनों से निहार रहे हैं। वे सभी जैसे उस बीमार में जीवन और मृत्यु के दर्शन कर रहे हैं। वह, उस घर का एकमात्र अवलम्ब—चिराग जैसे टिमटिमा रहा है। वह हवा के साथ हिल रहा है। तूफान उस दीये को बार-बार झकझोर रहा है और उस दीये की लौ को खत्म कर देना चाहता है।

तभी रामकली ने फिर कहा—'रोटी खा लो न।' और यह

कहते हुए उसने पति को देखकर, जैसे आतुर स्वर में कहा—'अरे, तुम रो रहे हो......तुम !'

इतना सुनते ही, चौधरी बच्चे के समान बिलख पड़ा। उसने फूट कर रोते हुए कहा—'रतन की मां, हरपाल का लड़का बचा ले ! ला, कुछ हो, तो दे दे।'

रामकली खड़ी हो गयी। उसने अपनी धोती के छोर को चौधरी की बहती हुई आंखों पर रख दिया और कहा—'बस, यह बात है, तुम्हारी ! या तो किसी के दुःख-दर्द को देखोगे नहीं, और देखोगे तो रो पड़ोगे। अपना सभी-कुछ लुटा देना पसन्द करोगे। मैं कहती हूं, रोने से क्या कोई बच जायेगा। जरा जाकर देखो कि क्या हाल है। जरूरत पड़े, तो कुछ पैसे का भी इन्तजाम किया जाएगा।'

रामलखन ने कहा—'उसे पैसे की दरकार है, रामकली ! हरपाल के पास पैसा हो, तो वह लड़का बचा लेगा। जानती तो है तू, आज की दुनिया में पैसा ही पुजता है। पैसे वालों ने इसीलिये तो समूचे देश को दास बना रखा है।'

रामकली बोली—'मेरे पास गेहूं की बिक्री के सौ रुपये रखे हैं। सोचा था, बहू आयेगी, तो उसे सम्भाल दूंगी।'

चंचल बन कर, रामलखन ने कहा—'ला, वही रुपये दे दे। जल्दी कर। रोटी आकर खाऊंगा।'

रामकली ने कहा—'सब रुपये ? आधे ले जाओ।'

चौधरी ने कहा—'न, रामकली ! आधे से कुछ नहीं होगा। जरूरत पड़ी तो और भी देने पड़ेंगे। अनाज बेच देना होगा।'

रामकली ने कहा—'तो मैंने भूल की, जो तुमसे इतना कह दिया। तुम तो अब घर ही बेच दोगे।'

सुना और रामलखन मौन रह गया।

रामकली रुपये निकाल लायी। जब उसने सौ रुपये दे दिये,

तो, बोली—'देखना, कुछ बचा लेना। घर में और फूटी कौड़ी नहीं है।'

रामलखन ने रुपये जेब में रख लिये और लाठी उठा कर बोला—'हमारी तो भगवान सब पार करेगा।' कहते हुए वह चल दिया। चौधरी गांव के अंधेरे गलियारे को पार कर, एक छोटे से घर के दरवाज़े पर पहुंचा और हरपाल का नाम लेकर पुकारा।

आवाज सुनते ही, हरपाल तुरन्त बाहर निकल आया। वह सामने आते ही, चौधरी के पैरों में गिर आया और बिलख कर रो पड़ा।

चौधरी ने उसे उठा कर कहा—'अरे, कैसा आदमी है तू, विपत्ति में घबड़ाता है? क्या भगवान को भूलता है? बता तो, क्या हाल है, लड़के का? तूने तो बताया नहीं। मैंने तो अभी सुना तो चला आया।'

हरपाल ने कहा—'चौधरी जी, मैं क्या मुंह लेकर तुम्हारे सामने पहुंचता। देख लो मैं अपने कसूर का दण्ड भोग रहा हूं। भगवान का न्याय पा रहा हूं।'

चंचल बनकर चौधरी ने कहा—'चुप, चुप। ऐसी बात नहीं कहा करते। कसूर कर के भी शोर नहीं मचाया करते, पगले!'

चौधरी घर में पहुंच गया। सामने ओसारे में छप्पर के नीचे लड़का चारपाई पर पड़ा था। वह बिस्तर से लग गया था। पास में लड़के की मां और बहू बैठी थी। एक ओर दीया जल रहा था। वह बार-बार हवा का स्पर्श पाकर हिलता था और बुझना चाहता था।

चौधरी ने पूछा—'किसका इलाज है?'

हरपाल बोला—'दो दिन से अब किसी का इलाज नहीं है, चौधरी जी! घर का छल्ला-छल्ला बेच दिया। गांव के वैद्य ने जवाब दे दिया। मैं डाक्टर को बुलाऊं, इसके लिये किसी ने पैसा नहीं दिया।'

चौधरी ने उसकी बात सुनी और 'हूं' कर दिया। उसने लड़के की

अवस्था देखी और अनुभव किया कि सचमुच बीमार की अवस्था खराब है। यदि जल्दी औषधि न मिली, तो लड़का प्रातः तक भी इस घर को छोड़ सकता है। इसलिये, इतना देख पाते ही, चौधरी ने अपनी जेब से सौ रुपये निकाले और हरपाल के हाथ पर रखकर कहा—'भज्जू चौधरी की घोड़ी अभी ले जाओ और शहर जाओ। रात में ही डाक्टर को ले आओ। उस पारसी डाक्टर के पास जाना और मेरा नाम लेना, वह अपनी मोटर में आयेगा। तुम घोड़ी वहीं छोड़ना और लौट कर दवा ले, चढ़ कर दौड़ आना। भज्जू से भी मेरा नाम लेना। जाओ।' इतना कहा कि चौधरी चौंक गया। उसने देखा कि बीमार की स्त्री और मां ने उसके पैर पकड़ लिये।

चौधरी ने तुरन्त ही अपने पैर छुड़ा लिये और कहा—'यह मेरा काम था। तुम्हारे लड़के में मेरा भी कुछ हिस्सा था। जाओ, हरपाल। देर न करो। लड़के की अवस्था खराब है। डाक्टर होशियार है। भगवान भला करेगा।' यह कहते हुए चौधरी खड़ा हो गया। उसने उन दोनों घूंघट काढ़े हुए स्त्रियों से कहा—'भगवान से दुआ करो, वह जरूर, तुम्हारे बीमार को अच्छा करेगा।' यह कहते हुए चौधरी घर से बाहर निकल गया। उसके साथ हरपाल भी सिर पर चादर बांध और हाथ में लाठी ले, भज्जू चौधरी के घर की ओर चल दिया। रात काली थी, पथ शून्य, परन्तु चौधरी रामलखन ने जिस प्रकार की ज्योति उस हरपाल के जीवन में फूंक दी, उससे, वह विद्युत सरीखी शक्ति पाकर उद्देश्य-पूर्ति के लिये बढ़ा जा रहा था।

और जब प्रातः हुआ, तो चौधरी रामलखन सीधा हरपाल के घर पहुंचा। उसे वहां जाकर समाचार मिला कि रोगी अब बच जायेगा। डाक्टर ने पचास रुपये तो जरूर लिये, परन्तु मरीज को जाते-जाते रोक लिया। रात में डाक्टर करीब दो घन्टे मरीज के पास बैठा रहा। वह उस गांव में रात के समय आया ही इस बल पर था कि चौधरी

रामलखन का नाम लिया गया था।

चौधरी इस समाचार को पाकर प्रसन्न हो गया। वह हरपाल के कन्धे पर हाथ रख कर बोला—'भगवान बड़ा है। वह सभी के आंसू देखता है।' और वह वहां से इस विचार को लिये लौट पड़ा कि अभी जाकर रामकली को यह खुश खबरी सुना दे कि हरपाल का लड़का मृत्यु के पञ्जें में जाते-जाते बच गया।

१३

रामलखन की पत्नी की बहिन जब गांव आई और जल्दी ही लौट गई, तो इसका कोई और कारण हो, या न हो, कमला अवश्य थी। एक दिन कमला ने बातों-बातों में कह दिया था, मौसी, यदि यहां शांति और चैन से नहीं रहा जाता, तो ऐसा क्यों कष्ट करती हो ? तुम्हारी जब कभी आवश्यकता पड़ेगी, तो खबर भेज देंगे।

मौसी के लिए इतना सुनना कम नहीं था। उसकी दृष्टि में कमला ने उसका अपमान किया था। निदान, उसने रामकली को सुना कर कहा—'क्यों री, तू भी गूंगी हो गई है...बहरी हो गई है, क्या ? यह बहू तूने इतनी सिर पर चढ़ा ली है ! आज मुझे कहती है, तो कल तुझे भी कह सकती है। सिर के बाल पकड़ कर घर से भी निकाल सकती है, तुझे !'

रामकली अपनी बहिन के स्वभाव से परिचित थी। बड़ी बहिन का वह सम्मान भी करती थी। निदान, जब उसने कमला द्वारा बहिन का अपमान किये जाने की बात सुनी, तो तब, वह निरे उदास और याचना भरे स्वर में बोली—'जीजी, देखती तो हो, आज मेरी इस घर में क्या गति है। बत्तीस दांतों के बीच में जिस प्रकार जीभ रहती

है, उसी तरह तो इस घर में मेरी दशा बन गयी है।'

जीजी ने कहा—'बाप रे ! बहू क्या हो गयी, सांड हो गयी। कही भले की, तो लगी बुरी ! रांड क्या हुई, घर की पूरी मालकिन बन गयी !' वह बोली—'मैं कल लौट जाऊंगी, रामकली ! तेरा दुःख सुन कर आई थी। नहीं तो, मुझे क्या घर से निकलने की छूट होती है ? इतने बीच में ही जाने क्या-से-क्या हो गया होगा। बहू जी दिन छूपे ही सो जाती हैं और दिन चढ़े उठती हैं। लड़का है ही बुद्धू; उसे न घर का ध्यान, न बाहर का। मैं तो सोचती हूं, जब पैर पसार जाऊंगी, तो भगवान ही नैया पार करेगा, उस घर की।'

रामकली ने हँस कर कहा—'सभी ठीक होगा, जीजी !'

दूसरे दिन मौसी लौट गयी, किन्तु वह लौटी तो, पर कमला के विरुद्ध पड़ोस में जितना विष उगल सकती थी, उगल गयी। यहां तक कि वह शशिकांत की मां के कान भी अच्छी तरह से भर गयी। कदाचित् यही कारण था कि कान्त की मां उन दिनों विशेष रूप से इस बात के लिये चिन्तित थी कि उसके लड़के का विवाह जल्दी हो जाये। उसके घर में बहू आ जाये।

निदान, जब शशिकान्त हरिद्वार से लौटा, तो उसके बाद ही, एक बड़े घर उसकी सगाई निश्चित हो गयी। विवाह का मुहूर्त भी निश्चित कर दिया गया।

शशिकान्त इस समय नितान्त मौन था। वह नाटकीय ढंग से बदलती हुई स्थिति को देख, जैसे कुछ सोच नहीं पाता था कि आखिर वह क्या करे ! और सचाई यह थी कि वह कमला के इतने निकट पहुंच गया था कि वहां से लौट सकना, कदाचित उसके लिए सुगम नहीं रह गया। यद्यपि कमला ने अत्यन्त रुखाई और उपेक्षा के साथ उसकी बाते को टाल दिया, परन्तु उसे विश्वास था कि कमला के मन में उसके लिये जगह है। परिस्थितियों ने ही कमला से इतना भर कहला दिया।

लेकिन प्रश्न यह था कि क्या कमला अपने कथनानुसार ही चल सकेगी ? वह उस वैधव्य के बोझ को उठा सकेगी ? वह इतनी सबल बन सकेगी ?

कान्ती के मन में यह प्रश्न उठ रहे थे। वह बार-बार कमला की मनःस्थिति का अध्ययन करता और उसकी सीमा में खो जाता। निश्चय ही, वह एकान्त रूप में कमला को अपने समीप पाता। यद्यपि, जिस लड़की से उसका विवाह होने जा रहा था, वह कमला से किसी प्रकार भी कम सुन्दर नहीं थी। उसका फोटो कान्त के पास आ चुका था। वह उसके कमरे की मेज पर रखा था। उन कई दिनों में कान्त उसे अनेक बार देख चुका था। उसी मेज पर एक फोटो कमला का भी था। वह कमला ने स्वयं कान्त को दिया था। उस फोटो को देते समय कमला ने कहा था, जब मैं हूँ तो फोटो की आवश्यकता क्या ? कान्त ने कहा, फोटो से आदमी बहुत कुछ कह सकता है। शायद प्रत्यक्ष इतना नहीं।

कमला इतना सुनकर हंसी थी। उसने उसी समय फिर कहा था, जहां मन और आत्मा का संयोग हो, वहां न फोटो की जरूरत है, न साक्षात बनने की। क्या हम अभी तक अभिन्न नहीं हो गए ? उसने कहा—'अब तुम मेरे बहुत समीप आ गए हो, कान्तबाबू ! तुम पास होते हो, तो अनुभव करती हूँ कि कोई मेरा आगया है। मन की बात सुनने वाला समीप आकर बैठ गया है।'

उस समय कान्त ने कहा था—'यह सब समय की और अवसर की बात है, भाभी !'

कमला ने कहा—'हां, समय की बात है !' और वह बोली—'जब तुम 'भाभी' कहते हो, तो अनुभव करती हूँ कि जैसे मैं तुमसे बहुत बड़ी हूँ। मैं बुजुर्ग हूँ।'

सुना, तो कान्त हंस दिया—'हमारे गृहस्थी में भाभी सबसे

अधिक प्रिय और समीप वाले व्यक्ति की संज्ञा का द्योतक है। भाभी में आत्मस्फुरण है और आत्म-चेतना है।'

कमला ने हँस कर कहा—'तुम कविता करते हो !'

कान्त स्वयं हँस दिया—'जब तुम सरीखी मधुर भाभी सामने हो तो कविता अपने आप फूटती है। सामान्य शब्द ही कविता बन जाते हैं। जानती तो हो, मैं कवि नहीं हूं।'

'पर तुम बड़े मधुर हो, कान्तबाबू ! सच अनुपम, सलोने !'

जब कान्त की सगाई हो गई और शादी की बात भी पक्की हो गई, तो उसने चाहा कि कमला को खबर भेज दे। परन्तु उसने ऐसा नहीं किया। बल्कि उसके मन में अनायास ही, यह प्रश्न उठ खड़ा हुआ— तो क्या कमला को मेरा विवाह पसन्द आएगा ? कमला भी मेरे हर्ष की भागीदार बनेगी ?

अजीब बात थी कि कान्त के मन में यह विश्वास एक क्षण के लिए भी नहीं आया कि कमला सुनेगी, तो खुश होगी। वह सुनते ही, पत्र लिखेगी और बधाई देगी ! कान्त के मन में यह बात जैसे जड़ बन कर रह गई कि कमला ने जो कुछ उससे हरिद्वार में कहा, वह, उसके मन का दूध के समान एक उफान था। परिस्थिति ने ही उससे इतना कहला दिया था। अन्यथा ..हां ..''

एक दिन सन्ध्या के समय कान्त जब अपने बाग की ओर चला गया, तो वहां विविध प्रकार के पेड़ों पर अपनी दृष्टि डालता हुआ और कुछ खिलते हुए फूलों को देखता हुआ भी, दिनभर से मस्तिष्क में आई बात को नहीं भुला सका। मानों उन फूलों की डाली-डाली पर और उन पेड़ों के पत्तों-पत्तों पर उसे कमला दिखाई देती थी।

एक बार कमला ने उससे कहा था—'जीवन का संयोग भी बड़ी अद्भुत बात है, कान्तबाबू ! जाने किस जन्म के शुभसंस्कार से यह स्थिति निर्मित होती है और हम लोगों को प्राप्त होती है ?'

तब कान्त ने कहा था—'मैं इतना दार्शनिक नहीं हूं।'

कमला बोली—'यह तो सामान्य बात है, कान्त जी! देखते तो हो कि हम लोग नित-नित ही नये-नये संस्कार निर्मित करते हैं। यहाँ तक कि हम अपने को बनाते हैं, बिगाड़ते हैं। क्या तुम इस बात को नहीं मानते?'

तब कान्त ने स्वीकार किया था—'मैं इतना अवश्य मानता हूं।'

'तो बस, समझ लो कि हम लोग पिछले जीवन में भी अवश्य मिले होंगे। जो काम तब नही सम्पादित कर सके, उसे अब करेंगे। इस जीवन में पूरा करेंगे, कान्तबाबू!'

कान्त ने इतना सुना और मुस्कराकर कर रह गया। वह जैसे कमला की बात के अन्तराल में खो गया।

किन्तु उस बात में, फूल-पत्तों के उस झुरमुट में खोया हुआ कान्त जैसे सचमुच ही इतना अन्धा बन गया, ऐसा संज्ञा शून्य हो गया कि समझ नहीं सका कि कमला और वह पहले के समान आज भी दूर-दूर हैं...एक नहीं हैं! भावना के जिस दरिया में उसने और कमला ने कभी गोता मारने का प्रयत्न किया, तो वही, न उसके लिए प्राप्य है, न कमला के लिए। दोनों का मार्ग पृथक है। कहने को मनुष्य बहुत सी बातें कहता है, परन्तु जब उन्हें कार्यरूप में लाने के लिए तत्पर होता है, तो पीछे देखता है। वह अपने को बुद्धि-भ्रष्ट पाता है। उसने अपने से कहा, क्या तुम्हीं कमला से विवाह कर लोगे? तुम अपने माता-पिता का विरोध रोक दोगे? न, कान्त! तुम्हारे लिए भी कठिन है। कठोर पथ है। जब कमला स्वयं सहमत नहीं, तो तुम्हें सिरदर्द लेने की क्या आवश्यकता है? इतना तुम्हारा कर्तव्य भी था। रतनलाल तुम्हारा भाई था। प्यारा साथी था। उसकी विधवा पत्नी को तुम्हें सर्वप्रथम अवसर देना ही था। अब वह जाने ...वह जाने!

अन्धेरा होते-होते कान्त बाग से लौट आया । निश्चय ही, उसने बाग में अपने प्रति और कमला के प्रति बहुत सी बातें कह डाली थीं । विवश हो, उसने अपने मन को भी सन्तोष देने का प्रयत्न किया था; किन्तु क्या वह सफल था ? उसने अपने मन की शांति प्राप्त कर ली थी ? कदाचित नहीं । बिलकुल नहीं ।

घर में आया, तो माँ ने कहा—'आ गये, खाना खा लो, कान्त !'

कान्त ने कह दिया—'खा लूँगा ।'

माँ ने खाना परोस दिया । कान्त बैठ गया । खाने लगा ।

उसी समय कान्त की छोटी बहिन पुष्पा जो अभी अधिक बड़ी नहीं थी, कान्त के पास आकर बोली—'तो भैया मैं भी तुम्हारे ब्याह में चलूंगी । मैं भाभी देखूंगी ।'

कान्त ने इतना सुना और मां की ओर देखकर हँस दिया ।

मां ने कहा—'हाँ, हाँ ! तू भी बारात में जाना । अपनी भाभी से मिलना ।'

लेकिन बच्ची पुष्पा ने फिर कहा—'तो माँ, भाभी मुझे मारेगी तो नहीं । प्यार करेगी न ?'

माँ ने कहा—'तू कसूर करेगी, तो जरूर मारेगी, कान भी पकड़ेगी ।'

पुष्पा ने कहा—'उहुंक ! तो मैं ऐसी भाभी से नहीं बोलूँगी । मैं उसके पास नहीं जाऊँगी ।'

उसी समय मां ने कहा—'अरे, कान्त ! तूने भी सुना क्या कि रतन की बहू कमला आजकल मसूरी में घूम रही है । उसे दो महीने से ऊपर बहुत हो गये हैं । चौधरी ने जो पत्र दिये, तो उनके भी जवाब नहीं आये हैं ।' फिर बोली—'अभी पिछली पट्टी के लाला का लड़का मसूरी से आया है । वह वहां किसी दुकान पर नौकरी करता है । बताता था कि चौधरी के लड़के की बहू एक और आदमी के साथ

वहां घूमती है, होटलों में खाती-पीती है। गांव में यह बात बुरी तरह से फैल रही है।'

खाना खाते-खाते कान्त एकाएक रुक गया और बोला—'कमला अपने पिता के साथ मसूरी गयी थी, लोग मूर्ख हैं कि जो ऐसी बातें उड़ाते हैं।' यह कहते कान्त का मुंह लाल हो गया। उसे बरबस गुस्सा आ गया।

मां ने कहा—'बेटा, मुझे क्या पता। जैसा सुना, कह दिया।

कान्त उसी स्वर में बोला—'लोग दूसरों की पगड़ी उछालने में आनन्द पाते हैं। ऐसे लोग गर्व अनुभव करते हैं कि उन्होंने किसी इज्जतदार आदमी की कमजोरी पकड़ ली और वह लोगों के सामने रख दी।'

मां बोली—'यह तो गंवार-गांव है, भैया।'

कान्त ने जोर से कहा—'यहां जाहिल बसते हैं। यहां के आदमी इन्सान नहीं, जानवर हो गये हैं।'

मां ने पुत्र को गुस्से में आया देखकर शान्त स्वर में कहा—'खाना खा।'

कान्त ने कहा—'मैं खा चुका।'

मां ने कहा—'बस इतना ही ! अरे खा ! देख, सभी रखा है।'

किन्तु कान्त खड़ा हो गया। उसने मुंह साफ कर लिया और उसी समय बाहर चल दिया।

मां ने आवाज दी—'अरे, कान्त...'

किन्तु कान्त नहीं बोला। वह चला गया। वह सीधा गांव की दूसरी पट्टी में पहुंचा। लाला की दुकान पर जाकर देखा कि एक छैल चिकनिया बना लड़का बैठा था। कान्त ने समझा कि यही मसूरी से आया होगा। कान्त ने उसे इशारा किया—'जरा सुनना।'

लड़का तुरन्त दुकान से उठ आया। जब वह कान्त के पास

आया, तो कान्त ने उससे प्रश्न किया—'तुम मसूरी से आये हो ?

लड़के ने कहा—'जी।'

कान्त—'तुमने वहां क्या देखा ? क्या चौधरी के लड़के की बहू...'

लड़के ने बीच में कहा—'जी हां। मैंने वह बहू देखी थी।'

'और किसे देखा था ?' कान्त ने अपने स्वर पर जोर देकर कहा।

लड़का बोला—'तो आप गुस्से में क्यों हैं ? जब बात मालूम करते हैं, तो शान्ति से कीजिये।'

कान्त ने एकाएक उस लड़के का छाती के पास से कुरता पकड़ लिया और कहा—'अबे मैं तुझे मारूंगा, हरामजादे ! चार दिन शहर में क्या रह आया, गुण्डा बन आया है !, गांव की इज्जत उड़ाता है। बोल, वह बहू किसके साथ देखी थी ?'

कान्त को उस रूप में देखा, तो लड़का सकपका गया। उसका पिता और बड़ा भाई भी वहां आगये। वे कान्त को देख, अत्यन्त विनीत होते हुए बोले—'ठाकुर साहब, इसे माफ कर दो। अभी लड़कप्पन है। बुद्धि नहीं है, इसमें !'

कान्त ने कहा—'इसमें खूब बुद्धि है ! दूसरों की पगड़ी उछालना इसने भी सीख लिया है। हां, रे ! बता न, वह किस आदमी के साथ घूमती थी ?'

उस समय वहां पर गांव के कुछ और आदमी भी इकट्ठे हो गये थे। बड़े घर के ठाकुर के लड़के को गुस्से में देखा, तो वे सभी सकपकाए हुए थे। गांव में कान्त की बड़े घर का होने के कारण ही इज्जत नहीं थी, उसकी सभ्यता और शिक्षा-दीक्षा भी लोगों की दृष्टि में महत्वपूर्ण थी। उपस्थित लोगों ने लाला के लड़के को फटकारा 'अबे, जल में रह कर मगर से वैर ! गांव में रहना है, तो ठीक से रह। भला बन ! जो गांव की नाक है, तू उसी के मुंह पर कीचड़ उछालता

है, — जंगली, बेहूदा !'

लड़के के पिता ने हाथ जोड़ कर कहा—'ठाकुर मैं माफी मांगता हूं।'

कान्त ने लड़का छोड़ दिया। वह लौट पड़ा।

भीड़ में से एक व्यक्ति ने कहा—'इस कान्त को आज ही गुस्से में देखा। इसे कहते हैं कि अपना खून ही जोश मारता है !' वह लाला के लड़के से बोला—'जा, तेरी आज खैर थी, नहीं तो कान्त खाल नोच लेता ! देखा नहीं, कितना गुस्से में था। आंखों से आग उगल रहा था।'

दूसरा बोला—'ठाकुर का लड़का है। ठाकुरों का गांव है।'

एक ने कहा—'ठाकुर आपस में लड़ लेंगे, पर जब दूसरा सामने आयेगा, तो एक हो जायेंगे।'

किसी और एक ने कहा—'वह तो अच्छा है। उनमें संगठन है।'

तब आवाज आई—'खाक सँगठन है। अपने पुरखों की दुहाई देते हैं। कहते हैं हम राणा प्रताप के वंशज हैं। पर देखते नहीं, लौंडियां बेच कर गुजारा करते हैं। चोरी करते हैं। डाके डालते हैं। आज देश में जितने डाकू हैं, उनमें अधिकतर ठाकुर हैं। वे हत्याएं करते हैं, लूट करते हैं।'

एक वृद्ध व्यक्ति ने कहा—'भाई, नंग बड़ा परमेश्वर से ! इस लाला के लड़के ने जो कुछ कहा, वही क्या झूठ था ? वह बहू यहीं पर मुंह खोले फिरती थी। अकसर दरिया पर घूमती थी। पर कौन कहे उसे, बड़े घर की बहू ! बड़ा पाप भी करे, तो पुण्य होता है। उसे कोई कहे, तो उसके मुंह पर ताला लगाया जाता है, देखें तो आंखों को फोड़ दिया जाता है...... राम-राम ! कैसा कलियुग आ गया है, जी !'

लाला ने कहा—'भाई, हम तो बनिये हैं। दब कर रहते हैं।

कम्बखत, इस लड़के को जाने क्या सूझा ! और घूमती थी, किसी के साथ फिरती थी, तो तुझे क्या ? शहरों में तो जाने कौन-कौन घूमती है आज भले-बुरे की क्या पहिचान रह गयी है ? जिसके पास दौलत है, उसे तो ऐश परस्ती सूझती है ! जिसे रोटियों की फिक्र होती है, उसी को पाप-पुण्य की पोथी बांचनी पड़ती है । चल, बैठ दुकान पर । खबरदार जो अब मुंह से जबान निकाली ! देख लिया न, जरा-सी बात कही, और इतनी बढ़ा ली ।

एक ने कहा—'बाबूजी अकड़ कर तो आये थे । अपने खानदान की बात लेकर आये थे । शरमदार होते तो, डूब मरते ! इन ठाकुरों से तो डोम-जुलाहे अच्छे कि जिनकी बहू-बेटियां इज्जत से अपनी जिन्दगी गुजारती हैं ।

एक बोला—'चोर-चोर मौसेरे भाई ।' दूसरे ने सुना और ही-ही करके दांत निपोरता हुआ बोला—'मुंह में राम, बगल में छुरी ...यही हाल है, इन बड़ी कौम वालों का ।' और लोगों ने देखा कि कहने वाला गांव का मेहतर जुम्मा था कि जो बात कहने के साथ लाठी के बल बैठता हुआ आगे खिसक गया था...

१४

उस रात शशिकान्त ठीक से नहीं सो सका। उसके मन में यह बात बार-बार आ रही थी कि कमला का जरूर किसी नये व्यक्ति से परिचय हुआ है। और वह व्यक्ति कौन है, यह जानने के लिये उसका मन बार-बार छटपटाता रहा था। कान्त को यह भी अच्छा नहीं लगा कि वह क्यों आवेश में आकर लाला की दुकान पर गया और उसके लड़के को बुरा-भला कह आया। वहां जिस प्रकार का प्रदर्शन हो गया, उसे याद करके कान्त स्वयं अपने आप में लज्जित हो रहा था।

प्रातः होते ही कान्त अपनी चाची के पास पहुंचा। देखते ही, चाची ने कहा—'अरे, आज आया है, कान्त! इतने दिन बाद!'

कान्त ने कहा—'चाची, आ नहीं सका।' और तब उसने अपनी मुख्य बात छेड़ी, 'क्यों चाची, तुमने अभी तक भाभी को नहीं बुलाया?'

चाची ने कहा—'तेरे चाचा से दो पत्र डलवा चुकी हूं पर एक का भी जवाब नहीं आया। जाने क्या बात हुई? या पत्र ही नहीं पहुंचा।'

कान्त ने कहा—'ऐसी बात नहीं, चाची। डाकखाने का विभाग

सुस्त तो है, कुछ चोर भी हो गया है, पर इतना नहीं कि दो-दो पत्र हज्म कर जाये। सुनता हूं कि तुम्हारी बहू अभी गांव नहीं पहुंची है। मसूरी में ही है। तुम से आकर कहा था न मैंने कि वे सब हरिद्वार से मसूरी जायेंगे। सो मैं समझता हूं, अभी वहीं होंगे।'

चाची ने कहा—'सूझ नहीं पड़ता भैया कि इस घर का बेड़ा कैसे पार होगा। तेरे चाचा भी अब दूसरे बन गये हैं। वे कहते हैं कि सब यहां आकर अपना-अपना खेल खेलते हैं। बाजीगर के समान करतब दिखाते हैं और चले जाते हैं।'

कान्त ने बात सुनी, तो मुसकरा दिया—'चाचा ठीक कहते हैं।'

'वह कहते हैं कि यहां किसी का माया-मोह करना बेकार है। एक दिन सभी कुछ छोड़ जाना है।' चाची बोली—'पर भैया, ऐसा सभी सोच लें, तो कैसे काम चले? रतन क्या गया, इस घर में तो अंधेरा हो गया।' उसने कहा—'तेरे चाचा कहते नहीं, पर मैं बताये देती हूं, रतन की महायात्रा ने उनका मन बदल दिया है। कभी तो कहते हैं, जाना तो मुझे था कि रतन चला गया।'

कान्त ने सांस भरी और अपने मुंह में आया थूक निगल लिया। उसने बरबस ही अनुभव किया कि सचमुच, चाचा को पुत्र का सन्ताप अभी सता रहा है। चाची भी अभी अपनी आंखों के आंसू नहीं सुखा पाई है। उस अवस्था को देख वह एकाएक बोल नहीं सका।

लेकिन चाची ने स्वयं ही कहा—'बेटा, मेरा भाग्य तो सभी तरह से फूट गया। लड़का तो गया ही, पर उसकी बहू से भी मुझे संतोष नहीं मिला। तेरे चाचा ने जिस घर की लड़की ली, उसके लिये यह घर कभी ठीक नहीं रहा। क्यों ठीक है ना?'

चाची ने जिस प्रश्नात्मक ढंग से बात कही, उससे कान्त एकाएक कुछ नहीं कह सका। क्योंकि ऐसी बात तो कान्त के मन में भी कई बार आई थी। परन्तु जब चाची ने स्वयं सीधी बात कही

तो वह बोला—'हां, ऐसा मैं भी अनुभव करता हूं, चाची ! मैं पैसे की बात को तो महत्व नहीं देता, पर संस्कारों का भेद अवश्य है। कमला भाभी के मां-बाप जिन्दगी को जिस शीशे में देखते हैं, वह और है और यहां हमारे चाचा जी जिस आइने में अपना जीवन देखते आये हैं, वह और है। यहां सेवा, ममता और प्रेम है, तो वहां आमोद-प्रमोद और पैसे से प्राप्त होने वाले ऐश्वर्य को पाने की साध है। हमारे चाचा जी ने विलासता को लात मारी है और वहां स्वीकार की गयी है।' वह तेजी से बोला—'बड़ा अन्तर है, चाची !'

चाची ने उद्विग्न तथा कातर बन कर कहा—'तो भला, वह बहू यहां कैसे रहेगी ! मैं तो कहती हूं, वह कहीं दूसरी जगह जाना चाहती है, तो जाये। पाप तो कटे ! इस रोज की दुविधा से तो जी छूटे।'

कान्त ने कहा—'यह समस्या जटिल है, शान्त नहीं है, चाची।'

चाची ने कहा—'तू तो उसके पास बैठता है, बोलता है, उसे नहीं समझाता ?'

कान्त सूखे ढंग से मुसकरा दिया—'यह काम तो बुजुर्गों का है, चाची ! तुम्हारा है।'

चाची ने आहत भाव में कहा—'अरे, वह मुझे क्या समझती है, चुड़ैल ! तेरे चाचा ने सिर पर चढ़ा रखी है।'

कान्त ने कहा—'चाचा जी उदार हैं, भले हैं।' यह कहते हुए कान्त खड़ा हो गया।

यह देख, चाची ने कहा—'अरे चल दिया, बैठ।'

कान्त बोला—'फिर आऊंगा, चाची !'

'अच्छा, अच्छा, आया जरूर कर।'

कान्त चला गया। जब वह उस घर से चला, तो मन में इस बात को लेता गया कि सचमुच, इस घर का भाग्य ही फूट गया।

और कान्त की इस बात में कितनी सचाई थी, इसे तो राम जाने,

परन्तु उन्हीं दिनों मसूरी में बैठी हुई कमला का मन सचमुच ही चंचल और व्यग्र बना हुआ था। उसकी मां को मसूरी की ठण्ड अनुकूल नहीं पड़ी तो वह नौकर के साथ घर लौट गयी। किन्तु कमला वहीं रही। उसने इतने समय में मनुष्य के जिस नये इतिहास का अध्ययन किया। वह बिलकुल ही अजीब था। कमला उसे घृणित भी समझती थी और अस्पृश्य भी। मसूरी में आकर ही, कमला ने देखा कि उसके पिता के मित्र ठाकुर सुदर्शनसिंह मानो जीवन के रस को एक ही चुल्लू में पी जाने के लिये तत्पर थे। वे अत्यन्त चंचल और व्यग्र बने हुए थे। कमला ने मसूरी-प्रवास में ही देखा कि वह व्यक्ति शराब अधिक पीता था। जिस बंगले में वह सब ठहरे थे, उसमें एक कमरा विशेष रूप से कमला के पिता और सुदर्शनसिंह के लिये नियत था। कमला को यह देख कर भी अच्छा नहीं लगा कि सुदर्शनसिंह वहां पत्नी सहित नहीं आया, अपितु अकेला था। केवल दो नौकर उसके साथ थे।

एक दिन जब सन्ध्या के समय वे सब बाजार चले, तो कमला भी उनके साथ थी। सुदर्शनसिंह को कुछ वस्तुएं खरीदनी थीं। तभी वह एक जौहरी की दुकान पर चढ़ गया। कमला के पिता का हाथ उसके हाथ में था। वहां उसने एक गले का हार देखा। वह हार कमला को भी दिखाया गया। उससे प्रश्न किया गया कि यह कैसा है? कमला ने स्वभाववश कह दिया कि हार अच्छा है। नये डिजाइन का बना है। तब तुरन्त ही, ठाकुर सुदर्शनसिंह ने दुकानदार से उसका मूल्य पूछा। मालूम हुआ कि दो हजार। इतना सुनना था कि ठाकुर ने जेब से सौ रुपये के नोटों की एक गड्डी निकाली और दो हजार गिन दिये। दुकानदार ने हार बक्स में रख दिया। जब वे दुकान से चले, तो ठाकुर ने वह हार का डिब्बा कमला के हाथ में देते हुए कहा—'इसे तुम सम्भालो, कमला रानी!' डिब्बा ले लिया गया।

किन्तु जब वे बाजार से लौट कर अपने स्थान पर पहुंचे, तो तब

ठाकुर ने कमला को सम्बोधित करते हुए कहा—'यह हार तुम्हीं को पहनना है, कमला रानी ! तुम्हारी भेंट है ।'

कमला ने कहा चौंक कर कहा —'जी—,

तब ठाकुर ने कमला के पिता को इंगित किया और कहा—'भाई, कमला को समझा दो कि हम और तुम दो नहीं हैं—एक हैं ।'

पिता ने कहा—'पहन ले, बेटी ।'

कमला ने कहा—'हार तो मेरे पास और भी हैं, पिताजी ! अब इतना कीमती क्या करूंगी ?'

पिता ने कहा—'चलो, हार रख लो, इसे भी पहन लो ।'

ठाकुर सुदर्शन ने सुना, तो वह खिलखिला कर हँस पड़ा ।

इस बात के लगभग आध घण्टे बाद ही, जब वे दोनों ठाकुर अपने कमरे में बैठे हुए शराब पी रहे थे, तो तभी, ठाकुर सुदर्शन ने कमला के पिता को टंकोर कर कहा—'मेरा प्रस्ताव मान लो । मैं तुम्हें अपनी शूगर फैक्ट्री का मैनेजर बनाता हूं, दो हजार रुपया मासिक मिलेगा । भत्ता अलग ! शानदार कोठी ! नई मोटरकार !' उसने कहा—'जमींदारी चली गई है । जानता हूं कि तुम्हारी आमदनी भी कम हो गयी । इस जिन्दगी की इच्छाओं को मारना क्या अच्छा है ? तुम फैक्ट्री सम्भाल लोगे, तो मैं मैदान में कूदूंगा । इन बड़े-बड़े नेताओं को उल्लू बनाऊंगा । मैं अब तुम्हारे समधी साहब से भी दोस्ती बढ़ानी पसन्द करूंगा ।' यह कहते हुए ठाकुर ने शराब का एक पैग और निकाला और पी गया । वह कहने लगा—'भाई मुझे तुम्हारी कमला पर भी तरस आता है । देखते हो, यह फूल कितना कुम्हला गया है । तुम मुझे मौका दो, तो इस फूल को समूचे देश की फुलवारी में इकला बना दूंगा । यह फूल सब जगह न चमके, तो मेरा नाम बदल देना । मेरे पास क्या कुछ नहीं है । जो-कुछ है, वह तुम्हारा है, कमला का है । समझते हो न, मिल-बांट कर खाना हमारे समाज

की पुरानी परम्परा है। मैं उसी को मानता हूं।'

कमला का पिता उस समय स्वयं नशे में था। सुदर्शनसिंह जो कुछ कह रहा था, वह सिर हिलाकर उसका समर्थन करता जाता था। उस समय कमला अपने कमरे में थी। ठाकुर का कमरा उस कमरे से मिला हुआ था। दोनों कमरों के बीच में एक जॅगला था। उस जंगले से ही कमला सब बात सुन रही थी। जब ठाकुर अपनी अन्तिम बात पर आया और उसके पिता की सम्मति मांगने लगा, तो तब, कमला का कलेजा धक्-धक् करने लगा। उसकी आंखों के सामने अन्धेरा छा गया। जैसे किसी मिल की चिमनी का कड़ुवा धुंआ उसके अन्दर धंस गया और वह उसके प्राणों को घोटने लगा।

उसी समय ठाकुर सुदर्शनसिंह ने कहा—'बोलो, क्या कहते हो, भाई?'

ठाकुर ने कहा—'मुझे सब स्वीकार है।'

'तुम कमला को अब उसकी ससुराल मत भेजो। मैंने जिस बालिका विद्यालय की स्थापना की है, कमला को उसकी सेक्रेटरी बना दूँगा।'

ठाकुर ने कहा—'ठीक है, ठीक है।'

किन्तु इतना सुनना था कि कमला का माथा सामने की दीवार से टकरा गया। उसने जीवन में प्रथम बार यह अनुभव किया कि एक पिता किस प्रकार लालच के पाश में बंध कर अपने को और अपनी सन्तान को बेच सकता है। कमला जॅगले से हट कर अपने बिस्तर पर जा पड़ी। उसकी छाती देर से धड़क रही थी। कमरे का द्वार खुला था। उससे ठण्डी और बर्फीली हवा आ रही थी। दूर पर्वत की चोटी पर बर्फ जमा हुआ था। वह चांदी के समान चमक रहा था। यदि और कोई समय होता, तो कमला निश्चय ही उस स्वर्गीय दृश्य को देख आनन्द पाती। उसका रोम-रोम खिल

उठता। परन्तु उस समय तो उसके मन की स्थिति अत्यन्त दयनीय और कातर बनी थी। वह इस बात को बार-बार मन में उठाती और कहना चाहती कि सचमुच, वह बड़ी बदनसीब है। उसका पिता ही, उसका शत्रु बन रहा है। पिता को धन चाहिये। शराब चाहिये, ऐश्वर्य चाहिये, तो इन सब के लिये वह अपनी पुत्री को जीवन के अन्धेरे में फेंक सकता है। पुत्री का खून कर सकता है। वह ... वह ...'

बाहर बादल आ गये थे। वे आसमान से उतर कमला के कमरे में भी घुस आये। उस कमरे के कपड़े भिगो गये। किन्तु कमला का ध्यान उस ओर नहीं था। वह अपने बिस्तर पर सुकड़ी पड़ी थी। वह कांप रही थी। लगता था कि जैसे उसके बदन का खून भी जम गया था। वह पत्थर बन गयी थी।

उसी समय नौकर कमरे में आया और बोला—'बीबी जी ..'

कमला ने अनजाने में कह दिया—'हूं।'

'देखिये तो, बादल आये और कपड़े भिगो गये। आपके ये कपड़े—'

कमला ने कहा—'अरे, रहने दो, बादलों को भी अपने मन की करने दे।'

नौकर ने फिर कहा—'आपका खाना लाऊं ?'

कमला ने कहा—'नहीं। मैं नहीं खाऊंगी।'

नौकर चला गया। उसे अभी पांच ही मिनट हुए होंगे कि तभी कमला का पिता वहां आया और बोला—'बेटी, खाना नहीं खाओगी ?'

किन्तु कमला मौन ! जैसे अनजान !

पिता ने कहा—'कमला !'

कमला ने तब पिता की ओर देखा। उसने अपनी वे रोती हुई आंखे पिता के नशे में हुए मुंह पर और आंखों पर टिका दीं। वह

तभी बोली—'आप क्या करने जा रहे हैं, पिता जी ? क्या इतने नीचे गिरने जा रहे हैं ?'

पिता ने जैसे चौंक कर कहा—'क्यों, क्या बात बेटी ?'

कमला ने कहा—'ठाकुर सुदर्शन ने जो कुछ कहा—वह मैंने सुन लिया है। विश्वास कीजिये, वह आपकी आड़ में मेरा जीवन भ्रष्ट कर देना चाहता है।'

ठाकुर ने इतना सुना, तो बरबस उसका हाथ मूछों पर चला गया। वह बोला—'मैं भी जाति का ठाकुर हूं। मेरी बेटी को कोई ठगेगा, तो वह खुद ठगा जायेगा। मैं गोली के एक ही निशाने से शेर मारता हूं, तो यह बेचारा ठाकुर...तू उठ बेटी ? चिन्ता न कर ! चल, आ, हमारे साथ खाना खा !' यह कहते हुए ठाकुर ने कमला का हाथ पकड़ा और उठा लिया। वह कमला को साथ लिये खाने वाले कमरे में पहुंच गया।

देखते ही, सुदर्शन ने कहा—'लगता है, सो गयी थी, कमलारानी !'

उसके पिता ने कहा—'जी, जाकर जगाया। बड़ी कठिनाई से उठी।'

सुदर्शन ने कहा—'यह उम्र ही ऐसी है। मौसम भी ऐसा है, नींद आती है।'

कमला के पिता ने कहा—'पर हमें नहीं आती।'

सुदर्शन जोर का ठहाका मार कर हंस दिया—'अब भी आयेगी, क्या ? बहुत आई ! तुम बहुत सोये।'

खाना आ गया। सभी ने खाना शुरु कर दिया।

सुदर्शन ने कहा—'कमला गोश्त नहीं खाती ?'

ठाकुर ने कहा—'इसकी मां भी नहीं खाती।'

सुदर्शन ने मुंह बनाया—'मेरी स्त्री भी नहीं खाती।'

ठाकुर बोला—'हम लोगों की यही कठिनाई है। औरतें खाना

नहीं बना पातीं ।'

सुदर्शन बोला—'मैं योरुप की स्त्रियों को पसन्द करता हूं। वे घर भी ठीक रखती हैं, भोजन भी ठीक बनाती हैं। बच्चे पालना भी वही जानती हैं।'

कमला उस समय मौन थी। चूंकि वह रोयी थी, तो इसीलिये उसकी आंखें भी चढ़ी थीं। किन्तु सुदर्शन को यह अच्छा नहीं लग रहा था। यद्यपि कमला के सिर का जूड़ा भी खुला था। कुछ बाल मुंह पर भी आगये थे। यह सब उसे पसन्द था। मानों सुदर्शन ठाकुर की दृष्टि में कमला का वह यौवन से पुर रूप नैसर्गिक था,—उसमें बनावटीपन कुछ नहीं था। उस समय जब कि वह गोश्त की नली को चिचोड़ रहा था, तो कमला को कनखियों से लक्ष कर, अपने आप बोला—'भगवान की कुदरत है कि इस कमला पर इतना रूप है और इसे भोगने वाला इस भूतल से उठ गया... ..., उसने हाथ से हड्डी रकाबी में डाल दी और कहा—'यह नारी सदा ही भोगने की वस्तु है—नारी पर कभी भी किसी एक का अधिकार नहीं रहा। जहां ऐसा हुआ, झगड़े हुए, युद्ध हुए। इस नारी के लिये खून की धारायें बहीं।'

उसी समय, कमला ने अपना भोजन समाप्त कर दिया और वह खड़ी हो गयी।

सुदर्शन ने कहा—'बस ?'

कमला ने कहा—'जी, बस।'

वह बोला—'बहुत कम खाती हो। अभी तो जवान हो और पेट इतना छोटा रखती हो ?'

कमला ने एक अजीब प्रकार की हँसी से मुसकरा दिया और वह कमरा छोड़ दिया। जब वह दूसरी तरफ हाथ धोने गयी, तो नौकर ने कहा—'बीबी जी, आज बहुत कम खाया। तबीयत तो ठीक है ?'

कमला ने कहा—'ठीक है, भाई।'

वह फिर अपने कमरे में चली गयी। बिस्तर बिछ गया और वह पड़ गयी। अन्य दिन कमला अपने पिता और ठाकुर सुदर्शन के साथ ताश खेलती थी। किन्तु उस दिन वह अपने कमरे से नहीं निकली। एक बार जब नौकर बुलाने आया, तो उसने नींद आने की बात कह कर उसे टाल दिया। यों रात आ गयी थी। सोने का समय भी हो गया था। कमला देर की सो चुकी थी। कोई रात के दो का समय होगा कि तब, एकाएक कमला की आंख खुल गयी। वह उठ कर बैठ गयी। उसने तुरन्त स्विच दबाया तो देखा ठाकुर सुदर्शन उसके पलंग की पट्टी पर आकर बैठा था। वह सतृष्ण नेत्रों से कमला की ओर देख रहा था।

इतना देखते ही, कमला ने एकाएक चंचल बन कर कहा—'आप ?...ओह !'

सुदर्शन ने कहा—'मैं आज अपने को तुम्हारे समक्ष समर्पित करने आया हूं, कमला ! मैं नित्य इस द्वार पर आता हूं और लौट जाता हूं।'

कमला तुरन्त बिस्तर से खड़ी हो गयी। वह बोली—'आज मेरी भूल हुई कि दरवाजा......'

सुदर्शन भी खड़ा हो गया। बोला—'हां, दरवाजा खुला था।'

कमला बोली—'देखिये अब रात है। आप नशे में हैं। जाइये। मैं तो आपको सुबह भी मिलूंगी।'

'किन्तु मैं कुछ कहने आया हूं, कमला !'

कमला ने अत्यन्त रूक्ष स्वर में कहा—'ठाकुर साहब, इस समय चले जाइये...जाइये !' उसके स्वर में तेजी थी और क्रोध की छाया थी।

ठाकुर दरवाजे की ओर बढ़ गया और वहां से पैर बढ़ाता हुआ चला गया।

१५

किन्तु रात के उस भरे प्रहर में, निश्चय ही एक बड़ा काण्ड हो जाता कि यदि कमला बुद्धि शून्य हो जाती। उसकी चीख बराबर के कमरे में भी पहुंची थी। उसका पिता अपने पलंग के पास ही भरी हुई बन्दूक रख कर सोता था। यह उसकी पुरानी आदत थी। फलस्वरूप, उसने कमला की आवाज सुनी, उसकी चीख सुनी, तो तुरन्त जाग गया। वह बन्दूक उठा कर बाहर निकल पड़ा। कोठी के आसपास अन्धेरा था। कमला का पिता कमरे से बाहर निकला और तभी उस अन्धेरे में ठाकुर सुदर्शन अपने बिस्तर पर जाकर पड़ गया।

कमला के पिता ने जाते ही पूछा---'अरी, क्या हुआ कमला! कौन था? क्या था? तेरी आवाज थी?'

कमला उस समय जैसे सचमुच ही, मति भ्रष्ट हो चुकी थी। वह स्वयं क्रोध से भरी थी। इसलिये, पिता की बात का एकाएक उत्तर न दे सकी।

पिता ने फिर कहा---'अरी, बोलती नहीं! कुछ बता तो! कोई आया था क्या?'

तब कमला ने पिता की ओर देखा। हाथ में बन्दूक देखी, वह

परिस्थिति को एकदम समझ गयी। वह सम्भल गयी। उसने कहा—'हाँ पिता जी ! कोई आया था, ...ओह।'

पिता ने बन्दूक का कुन्दा और कस कर पकड़ लिया।

कमला ने आतुर स्वर में कहा—'पिताजी, शायद बघेरा था, या कि.....'

पिता ने जैसे आहत बन कर कहा—'बघेरा था....'

कमला जल्दी से बोली—'हां, पिताजी ! कोई भयानक जानवर ही था। ओह, मैं बत्ती न जलाती. तो वह,...वह !'

पिता को जैसे सांस आया। उसने सम्भल कर कहा—'अरी, पगली ! तो इतनी डर गयी। दरवाजा नहीं बन्द किया होगा। दिखला है कि वह खूंखार जानवर स्वयं ही डरकर भाग गया।'

कमला ने कहा—'मैं देखते ही चीख पड़ी।'

पिता ने कहा—'तभी तो ! मेरी आंख खुल गयी। अच्छा, दरवाजा बन्द कर ले।. सो जा !'

कमला ने कहा—'जी !'

ठाकुर लौट गया। वह अपने कमरे में जाकर बैठा, तो सुना ठाकुर सुदर्शन खुर्राटे भर रहा था। कमला के पिता ने बत्ती जला दी। वह सिगरेट पीने लगा।

उस प्रकाश के होने का बहाना कर सुदर्शन ने करवट ली और जाग कर कहा - 'कौन ?'

ठाकुर ने कहा—'मैं ! तुम सो रहे हो। कमला के कमरे में कोई खतरनाक जानवर पहुंच गया। शायद शेर या बघेरा। पगली ने आज दरव.जा बन्द नहीं किया था।'

इतना सुना कि सुदर्शन उठ कर बैठ गया। उसने अतिशय आश्चर्य व्यक्त करते हुए कहा—'सच ? ओह ?'

ठाकुर ने कहा—'मैंने तो चीख सुनी, तो तुरन्त बन्दूक लेकर

दौड़ पड़ा। पगली ने अपने लिये कमरा भी तो कौन सा चुना है। उसका दरवाजा भी इधर से नहीं, उधर से है।'

सुदर्शन ने कहा—'वह कमरा एकान्त में है। अच्छा है।'

ठाकुर ने कहा—'हां, उस कमरे से सामने के पर्वत का दृश्य भी खूब दीखता है। कमला को प्रकृति का यह रूप पसन्द आता है।'

सुदर्शन ने स्वयं सिगरेट सुलगा ली और उसका कश खींच कर घना सा धुंआं छोड़ता हुआ बोला—'बड़ी गहरी नींद आई। आज पी भी ज्यादा ली। खाना भी अधिक खा लिया।'

ठाकुर ने कहा—'आज गोश्त अच्छा बना था।'

सुदर्शन ने कहा—'तीतर का था। तुम्हें तीतर पसन्द आता है, मुझे इसका पता था।'

यों दोनों ने सिगरेट सुलगायी और खत्म कर दी। बत्ती फिर बुझा दी गयी। थोड़ी देर में कमला का पिता फिर खुर्राटे भरने लगा। किन्तु सुदर्शन की आंखों में नींद नहीं थी। उसे यह जानकर सन्तोष था कि कमला ने अत्यन्त बुद्धिमत्ता का प्रदर्शन किया। उसने अपने पिता को अच्छी तरह मूर्ख बनाया। उसने निपुणता के साथ सचाई छुपा ली और बहाना किया कि पिता को विश्वास करा दिया।

इतना सोचते ही, सुदर्शन ठाकुर के मन में बात आई, क्या कमला का अनुराग उसे प्राप्त हो सकेगा ? उस मन में बार-बार यह बात आई कि जो कमला आज इस प्रकार के अभिनय का प्रदर्शन कर सकती है, वह एक दिन उसका प्रस्ताव भी स्वीकार कर सकती है। निदान, सुदर्शन एक अजीब प्रकार की प्रसन्नता को लिए सो गया। वह प्रातः देर में उठा। सूरज चढ़ गया था। चारों ओर धूप फैल चुकी थी। जब वह नित्य के कार्यों से निवृत होकर चाय की टेबल पर पहुंचा, तो देखा कि कमला स्नान करके धानी रंग की साड़ी पहने हुए पिता के पास बैठी थी। वे दोनों ही सुदर्शन ठाकुर की प्रतीक्षा में थे। उस कमरे

में जाते ही, जब सुदर्शन की कमला पर दृष्टि पड़ी, तो वह स्वयं दीवार पर टंगे एक बर्फीले पहाड़ के चित्र को देख रही थी। उस पहाड़ की उपत्यका में ही एक दम्पत्ति अपने बच्चे के साथ खेल रहा था। किन्तु सुदर्शन ने कमला के उस रूप-रंग को देख, बरबस ही, मन में आई बात को लिये-लिये कहा—'सचमुच, लगता है कि बनदेवी उतर आई है! इस कमला ने गजब की सुन्दरता पाई है।'

जब सुदर्शन चाय की टेबुल पर जाकर बैठा, तो कमला ने चाय बनानी आरम्भ की। उसने एक प्याला चाय सुदर्शन के सामने रखी। उसी समय दोनों की चार आंखें हुई। जब वे सब चाय पीने लगे, तो तभी, कमला के पिता ने कहा—'कमला के ससुर का अभी पत्र आया है! इसकी सास बीमार है। यह जा रही है।'

जैसे चौंक कर, सुदर्शन ने कहा—'क्या अभी...आज ही...?' ठाकुर ने कहा—'बस, तुम्हारी प्रतीक्षा थी। सामान बंध चुका है। तैयार है।'

सुदर्शन ने कहा—'भई, कमला को कुछ यहां खरीदवाना भी था। यह आई है, तो खाली हाथ जाना था?'

ठाकुर ने कहा—'कल तुमने हार तो खरीदवा दिया, और क्या?'

सुदर्शन ने कहा—'नहीं भाई! कुछ और भी! क्या अब हमारा तुम्हारा पहनने का जमाना है? इसी का तो है।'

ठाकुर ने कहा—'अवस्था जरूर है। एक शशिकान्त है वहां पर, इसका देवर लगता है, उसका भी पत्र आया है कि कमला की सास जब अधिक बीमार हुई तो उसकी बड़ी बहिन को बुला लिया गया है। सास बुढ़िया तो है ही, बेचारी, क्या जाने,...हाँ...'

उसी समय कमला खड़ी हो गयी। वह जाने के लिये प्रस्तुत हो गयी! ठाकुर के साथ सुदर्शन भी खड़ा हो गया। मजदूर ने बिस्तर और ट्रंक उठा लिया।

सुदर्शन ने कहा—'हम मोटर तक चलें।'

कमला बोली—'जी नहीं, नहीं। आप यहीं रहें। पिताजी, आप भी। नौकर रामू तो है। अच्छा नमस्ते।' और उसने दोनों को नमस्ते किया, तदुपरान्त वह बंगला छोड़ दिया।

यह देख, सुदर्शन के मन को अच्छा नहीं लगा। वह हाथ मल कर रह गया। बात-की-बात में नाटक का जिस प्रकार परदा बदला, वह उसकी दृष्टि में निरा अकल्पनीय था और अशोभनीय भी। इसका फल यह हुआ कि उसी सप्ताह उन दोनों ठाकुरों ने भी मसूरी का प्रवास त्याग दिया।

किन्तु कमला जब अपनी सुसराल में पहुंची, तो वह यह देख कर सन्तुष्ट हुई कि उसकी सास की अवस्था सुधर रही थी। कमला ने पास बैठ कर कहा—'मैं पत्र पाते ही चली आई। आधा घन्टा भी वहां नहीं रुकी।'

मौसी ने कहा—'पत्र दिये भी कई दिन हो गये।'

कमला बोली—'पत्र गांव के पते पर गया था। मैं वहां से दूर थी।'

मौसी बोली—'अरी, तू तो घूमने पर लगी है। तुझे घर की चिन्ता कब है? तू ने तो यह घर ही गैर समझ रखा है।'

कमला उस समय स्वयं अपने को दोषी पाती थी। इसलिये मौसी या सास जो भी उसके सिर पर आरोप रखें, वह उसे मानने के लिये बाध्य थी। फलस्वरूप, वह मौन थी।

उसी समय कमला के आने की खबर पाकर पड़ौस की और स्त्रियां भी आ गयीं। वे सभी किसी न किसी रूप में कमला पर ताने कसने लगीं। कमला उन सभी के बीच में घिर गयी। मानो वह एक नयी प्रकार की दुनिया में आ गयी।

लेकिन अवसर की बात, उस समय, स्वयं रामकली ने कमला

की रक्षा की। उसने कहा—'वक्त की बात है कि बहू घर पर नहीं थी। होती तो आ जाती। और जब मुझे इतना दुःख पाना था, तो भला कौन रोक लेता।'

एक पड़ोसिन बोली—'एक दिन तो नीचे उतार लेने की बात आ गयी थी। पर भला हो डाक्टर का, बड़ी समझदारी से इलाज किया। शशिकान्त भी रात-दिन लगा रहा। वह बेचारा तो पाखाने-पेशाब तक उठाता था। रात में भी यहीं सोता था। कई-कई रात जागता रहा। सुना नहीं तूने, अब उसका भी ब्याह आ गया है। सगाई में ही बड़ा माल दिया है, लड़की वाले ने! सुनते हैं कि ब्याह में हाथी देगा।'

एक दूसरी बोली—'हाथी देगा, तो क्या ऐहसान करेगा। हमारा कान्त भी तो हजारों में एक है। ऐसा लड़का क्या उसकी लड़की को आसानी से मिलेगा? घर में भी भगवान की मौज है। इस साल ही, कान्त के बाप ने जितना गेहूं फसल से पाया है, उतना मुश्किल से आधे गांव को मिला होगा।'

एक बोली—'भले में भला होता है, जी! कान्त का बाप भला है, मां भली है।'

'और चाचा?' एक अन्य ने प्रश्न किया।

तो कहा गया—'अजी, उनकी क्या है! उनकी बराबरी तो यह गांव क्या, दूर-दूर तक कोई न करेगा, न कर सकेगा! दूर-दूर तक सरनाम हो गये हैं, चाचा तो!'

उसी समय कमला ने पास बैठी हुई एक युवा लड़की से कहा—'तो कान्तबाबू का सम्बन्ध पक्का हो गया। कहां?'

लड़की ने कहा—'मैं उस गांव का नाम तो नहीं जानती।'

दूसरी बोली—'मलिकपुर के ठाकुर हैं। सरनाम हैं।'

रामकली ने बिस्तर पर पड़े-पड़े कहा—'बहू कपड़े बदल ले। मुंह हाथ धो ले। कुछ कलेवा कर ले। कल की चली है। रात भर की

जागी है।'

कमला ने पूछा—'पिताजी कहां हैं ?'

रामकली बोली—'वे भी आते होंगे। कहीं चले गये होंगे।' उसने कहा—'इन दिनों वे भी थक गये हैं। फिक्र भी बहुत की है।'

औरतें उठ चली थीं। जो एक वृद्धा बैठी थी वह बोली—'उनकी फिक्र सच्ची है, रामकली ! तू है, तो उनका घर है, नहीं तो उनके लेखे यह स्मशान का ढेर है !'

कमला वहां से उठ चली। वह अपने कमरे में पहुंच गयी। उसने देखा कि उस कमरे में कई किताबें रखी हैं। वे कान्त की हैं। तब सोचा उसने, कान्त कई रात यहां सोया था। जरूर, इसी कमरे में सोया होगा। इसी पलंग पर।

कमला ने साड़ी बदल दी। अपना सामान भी करीने से रख दिया। वह स्नान करने के लिये गुसलखाने में चली गयी।

तभी, जब सभी औरतें चली गयीं, तो रामकली ने बिस्तर पर पड़े-पड़े अपनी बहिन से कहा—'जीजी, देखा तुमने, खबर मिलते ही दौड़ आई है। इस बहू को इस बात का ध्यान तो है कि यह घर मेरा है। पर अभी दिल की कच्ची है। ध्यान करके भी भूल जाती है।'

जीजी ने कहा—'अभी जवान है। समझ जायेगी।'

रामकली ने कहा—'जीजी, मैं अब इसके लिये और इसके श्वसुर के लिये जीना चाहती हूं। मैं चाहती हूं, कि इस बहू की जिन्दगी के ये दस-पांच साल अच्छे नहीं हैं। यही तो आंधी और तूफान दिमाग में उठाते हैं। यह इस भूचाल से निकल जाय, तो तब बला से मेरे प्राण भी निकल जायें।'

जीजी ने कहा—'भगवान सब भला करेगा, री !'

'हां जीजी ! भगवान ही मालिक है।' रामकली ने सांस भर

कर कहा ।

उसी समय चौधरी रामलखन ने घर में प्रवेश किया । उन्होंने आते ही, प्रसन्न होकर कहा—'बहू आगयी, क्या ? कब ? अभी ? कहां है ?'

रामकली की जीजी ने कहा—'गुसलखाने में !'

'अच्छा, अच्छा, अभी पत्र मिला होगा, बहू को ।'

रामकली ने कहा—'बहू मसूरी से आई है । अकेली दौड़ आई है । पत्र मिला और चल दी ।'

रामलखन ने कहा—'हां, यही तो । मैं तो तुम से कहता था, उसे पत्र नहीं मिला । मिलता, तो दौड़ आती ! भला क्यों न आती ।'

कमला गुसलखाने से निकल आई । वह रामलखन के पास जा पैर छूने के लिये नीचे झुक गयी । उसने पैर छू लिये ।

रामलखन ने कहा—'जीती रहो ! खुश रहो ।' इतना कहते रामलखन का दिल भर आया । आंखें छलछला आईं । वह आगे नहीं बोल सका । यह देख, रामकली भी रो पड़ी । उसने रोते हुए स्वर में अपनी जीजी को सुनाया—'बस, यह बात है इनकी ! देख न जीजी, बहू आई नहीं कि रो दिये ।'

रामलखन ने कठिनाई से अपने स्वर को बांध कर कहा—'अरी, मैं तुझे कैसे बताऊं, यही मेरी बहू है, यही मेरा बेटा ! जब यह दूर होती है, मेरी आंखों में अन्धेरा रहता है । और जब पास होती है, तो प्रकाश आ जाता है ।'

रामकली की जीजी ने कमला की ओर देखा और कहा—'देखो, बहू भी रो पड़ी है । रो न, मेरी बच्ची ! अब तो स्नान करके आई है, सिर गरमा जायेगा ।'

रामलखन ने बहू के सिर पर हाथ रखा और कहा—'भाग्य तेरे कि तेरी सास बच गयी ! यह बीमार तो बहुत हुई ।' यह कहते

हुए, चौधरी ने अपने पैर बाहर की ओर बढ़ा दिये। कमला अपने कमरे में चली गयी। जब वह अपने ब्लाऊज के बटन लगाकर सिर पर धोती रख रही थी कि तभी कान्त उस कमरे के द्वार पर जा खड़ा हुआ और बोला—'नमस्ते, भाभी जी।'

कमला ने चौंक कर देखा और हतप्रभ सी बन, एकाएक कान्त के नमस्ते का उत्तर भी उससे न दिया जा सका। बरबस उसका सिर एक बार उठा, तो उठा-का-उठा रह गया... ...

१६

मसूरी का वह बंगला कि जिसमें कमला के पिता आदि ठहरे हुये थे, वह सुदर्शन की निजी सम्पत्ति थी। उस बंगले में एक चौकीदार रहता था। जब मालिक नहीं रहता, तो वह समूचे बंगले पर अधिकार रखता। किन्तु मालिक के पहुंचने पर वह, परिवार सहित एक छोटी-सी कोठरी में रहने लगता। उस चौकीदार का नाम गोधू था, जो कि गोबर्द्धन का बिगड़ कर रह गया था। गोधू अब वृद्ध हो गया था। उसके कई बच्चे थे, स्त्री थी। गोधू की आयु से पत्नी की आयु कम थी। वह स्त्री मेहनती भी काफी थी। गोधू बैठा हुआ हुक्का बजाता और उसकी पत्नी इधर-से-उधर दिन भर भागी फिरती थी।

एक दिन कमला को बातों-बातों में पता चला कि वह स्त्री गोधू की चौथी थी। उसी स्त्री से सब बच्चे हुए थे। जिस दिन गोधू ने अपनी यह कथा कही, तो उसने बताया कि मेरी पहली स्त्री से एक लड़का था। वह जवान हो गया था। किन्तु भगवान ने बुला लिया। लाचार मुझे यह चौथा विवाह करना पड़ गया।

गोधू की उस स्त्री से कई लड़के थे, एक लड़की थी। एक

छोटे लड़के को छोड़ सभी के विवाह-सम्बन्ध कर दिये गये थे। गोधू के जिस मंझले लड़के का विवाह हो चुका था, वह सचमुच ही अभी विवाह योग्य नहीं था। उसकी बहू भी अभी बच्ची थी। उसे देखकर कोई यह नह कहीं सकता था कि उसका विवाह हो चुका होगा। वह भी अन्य बच्चों के साथ खेलती थी। वह बड़ी भोली और सलोनी लड़की थी।

कमला ने उसे जब प्रथम बार देखा और उसका बहू के रूप में परिचय पाया, तो उसे अपने पास बुलाया। उससे बात करते हुए, कमला को सचमुच ही आनन्द आया। जब कमला ने पूछा, 'अरी, तेरा आदमी लड़ता तो नहीं,—मारता तो नहीं!' तो वह बेचारी बरबस ही सकुचा गयी और सिर झुकाये हुए, धोती का छोर मुंह में देकर दाँतों से चबाने लगी। यह देख, कमला ने उससे आगे कोई प्रश्न नहीं किया उसने एक सेव उसे दिया और कहा—'ले, इसे खाले।' किन्तु उसने खाया नहीं। उसे धोती के छोर में छुपा लिया। जब वह वहां से लौट चली, तो उसके बाद ही, कमला ने देखा कि उस सेव का एक बड़ा हिस्सा वह लड़का खा रहा था कि जो सामाजिक रूप से उस लड़की का पति था।

इतना देखा, तो कमला का मन एकाएक, ही जाने कहां-से-कहां पहुंच गया। उसे लगा कि सचमुच संसार की समस्त नारियाँ, छोटी या बड़ी नारियां, अपने जीवन में केवल एक ही मन्त्र जपती हैं, वह एक ही आकांक्षा रखती हैं कि उनका पति स्वस्थ हो, प्रसन्न हो और उनके प्रति उदार हो। उससे पहले दिन ही कमला ने देखा था कि गोधू की स्त्री बाजार से जब लौटी, तो वह गुड़ की चासनी से खील के बने लड्डू खरीद लायी थी। निश्चय ही, उस लड्डू को खाने की उसकी इच्छा थी। परन्तु जब वह अपने डेरे पर आई तो बच्चों को देने के बाद उसके पास एक ही लड्डू बचा। गोधू भी वहीं बैठा था। उसने

वह लड्डू गोधू को दे दिया। कमला उस समय बंगले के बाहर एक पेड़ के नीचे खड़ी थी। वह उन्हें देख सकती थी। वह सब उसको नहीं। जब गोधू ने स्त्री को लड्डू देते हुए देखा, तो उसने जाने कितने अनुराग भरे स्वर में कहा—'अरी, तू खाले !'

किन्तु स्त्री ने कहा—'नहीं, तुम खाओ। तुम खाते हो, तो मुझे अच्छे लगते हो।'

गोधू ने इतना सुना, तो अपने पोपले मुंह से हँस दिया। उसने मुंह पर बढ़ी हुई सफेद बालोंदार दाढ़ी पर हाथ फेर कर कहा—'अब मैं क्या अच्छा लगूंगा . ऐसे लगूंगा ?'

किन्तु इतना सुनते ही, स्त्री ने कहा—'तो क्या मैं तुम्हारी शक्ल पर रीझती हूं ? भगवान ने हमारी-तुम्हारी जोड़ी बनायी है, तो उसी की मानता मनाती हूं।' इतना कहा—और उसने लड्डू गोधू के हाथ पर रख दिया।

उसी समय गोधू ने सांस भरी और कहा—'भाग्य की बात है कि हम गरीब ही रहे... जहां थे, वहीं खड़े रहे ! दुनिया तरक्की करती है और हम—'

उसकी स्त्री ने कहा—'हमने न सही, हमारे बच्चे तो करेंगे इसीलिये तो हम बच्चे पढ़ाते हैं।'

गोधू लड्डू खाने लगा। वह उसी अवस्था में कहने लगा—'कुछ नहीं कहा जा सकता। सोचता हूं, यदि हमारे बच्चे भाग्यवान होते, तो हमारे घर में ही क्यों पैदा होते।'

गोधू की स्त्री ने तब अपना मत नहीं दिया। वह वहां से दूसरी तरफ चली गयी। गोधू फिर अपना हुक्का बजाने लगा।'

उसी दिन को सन्ध्या में जब गोधू कमला के कमरे की ओर गया, तो तब, कमला ने उसे टंकोर कहा—'आओ बाबा बैठो। गोधू बैठ गया।

कमला ने कहा—'बाबा तुम बड़े भाग्यवान हो। तुम्हारी औरत सभी काम करती है और तुम बैठे हुक्का बजाते हो।'

गोधू ने कहा—'बीबी जी, अब मैं बूढ़ा हो गया हूं।'

कमला ने इतना सुना और हँस दिया।

गोधू बोला—'मालिक जो पैसे देते हैं, उनसे तो गुजर होती नहीं। गांव की जमीन से जो अन्न मिलता है, वही हमारा पेट भरता है।'

कमला ने कहा—'तुम्हारे यहां विवाह बड़ी जल्दी हो जाते हैं। बच्चे ब्याहे जाते हैं?'

गोधू ने कहा—'यहां ऐसा ही रिवाज है। हम गरीब आदमियों में जब जैसा-कुछ हो जाये, वही अच्छा है।'

कमला ने कहा—'विवाह करना तो पेट भरों का सौदा है बाबा!'

बाबा ने सुना और जैसे जिज्ञासा भाव में कमला की ओर देखता रह गया। तदनन्तर ही वह मालिक की आवाज सुनकर उठ कर चला गया।

किन्तु एक दिन जब कमला स्वयं गोधू की कोठरी में पहुंच गयी तो उसने देखा कि उस गृहस्थ में इतने कपड़े नहीं थे कि जिससे रात में सभी अपना बदन ढक सकें। निश्चय ही, वे सब एक जगह सुकड़ कर पड़ जाते होंगे। गोधू की स्त्री से कमला ने यह भी जान लिया कि उनके यहां कभी घी इस्तेमाल नहीं होता। बहुत मन करा, तो तेल व्यवहार में ले लिया गया। यह इसलिए कि उनके पास खाने की सुविधा नहीं थी। किन्तु उस दिन जब गोधू द्वारा अपनी स्त्री को पीटते देखा, तो यह भी कमला के लिए जैसे न देखने योग्य दृश्य था। वह कमला को देखकर चुप तो हो गया, परन्तु गरम साँस तब भी लेता रहा।

कमला ने पास जाकर कहा—'तो तुम ऐसा भी करते हो गोधू!'

गोधू नहीं बोला। लेकिन उसकी स्त्री ने कहा—'बीबी जी,

यह ऐसा ही करता है। जब भी चार पैसे इसके पास आ जाते हैं, तो नशा कर आता है। जानवर बन जाता है।'

कमला ने देखा कि गोधू उस समय भी दूर बैठा हुआ क्रोध से होंठ चबा रहा था। गरम सांसें ले रहा था। वह दोनों को शान्त रहने की बात कहकर लौट आई। उस समय उसके पिता और सुदर्शनसिंह बंगले पर नहीं थे। वे घूमने गए हुए थे। किन्तु अपने कमरे में आकर बिस्तर पर पड़ती हुई कमला के मन में एकाएक ही, बात आई कि आह ! यह मनुष्य भी निर्दय है...क्रूर है...अहमन्य है ! कमला के मन में उस समय सचमुच ही जहरीला धुंआ घुट गया। वह बेचैन होने लगी। ऐसा लगा कि जैसे कोई उसके प्राण घोंटने लगा। क्योंकि वह गोधू की जिस दयनीय दशा को देख आई, वह वस्तुतः उसके लिए न देखने योग्य ही थी। उस समय कमला को मसूरी में आए एक मास से अधिक हो चुका था। उस स्थान पर वह दोनों प्रकार के व्यक्ति देख सकी थी। समाज का मजदूर और समाज का धनिक ! मध्यम वर्ग का व्यक्ति वहां उसे कम दिखाई देता था। धनिक वर्ग का पैसा प्राप्त करने के लिए इन्सान का वह मजदूर वर्ग अपना खून-पसीना एक कर रहा था...फिर भी उसके बदन पर न ठीक से कपड़ा था, न पेट के लिए रोटी ! गोधू भी उसी कोटि का एक अङ्ग था। उसके बच्चे-बीबी रोटी-कपड़े के लिए तरसते थे। उसी बंगले में शराब का दरिया बहता था, सोने-चांदी की बौछार होती थी। कई-कई रुपए की सिगरेट के पैकेट नित्य धुंआ बना कर उड़ा दिए जाते थे। मेहमानों की खातिरी के लिए आए दिन मिठाई, फल लुटते थे। चाय के प्याले खड़कते थे। गोधू मालिक की जूठी रकाबी में यदि किसी हड्डी पर गोश्त का गूदा लगा पा जाता, तो उसे चिचोड़ता था। उसके बच्चे खाने की उन प्यालियों की ओर तरसती निगाहों से देखते थे।

लेकिन, वह गोधू उस अवस्था को प्राप्त होकर भी नशेबाज था... अपनी पत्नी के लिए क्रूर और मदान्ध बना था...।

कमला के मन में बार-बार यह बात आती कि इन धनिकों ने सचमुच ही, आदमी को आदमी नहीं रहने दिया है। जानवर बना दिया है। जब मालिक रोज शराब की बोतलें खाली करता है, तो नौकरों के मन में भी आता है। वह रोज न पी सकें, तो कभी-कभी दो बूंद गले के नीचे उतार लेना, सचमुच उन्हें भी पसन्द आता है...इन नौकरों को यदि गोश्त खाने को न मिले, तो मालिक की जूठी हड्डियां चूसना ही इन्हें अच्छा लगता है ..पाप ने पाप को बढ़ाया है... इन धनपतियों की दुर्गन्ध ने सभी ओर तो जहरीला धुंआ फैला दिया है...कमला इस बात को भुलाए न भूल पाती कि यदि यह धनिक वर्ग अपने-आप में ईमानदार हो, सच्चरित्र हो, तो निश्चय ही देश में न कोई भूखा हो, न कोई याचक हो। उसका यह भी मत था कि सब देश में न चोर होगा, न कोई डाकू होगा। उस अवस्था में सर्वत्र शान्ति होगी। कहीं कोई हत्या भी न होती हुई सुनी जाएगी।

किन्तु, उसी समय दोनों ठाकुर घूम कर लौट आए। उन दोनों के हाथों में बन्दूकें थीं। कमला के पिता के हाथ में एक सुन्दर पन्छी था। वह मरा हुआ था। उससे खून टपक रहा था। वह कमला के पिता ने अपनी गोली से मारा था।

देखते ही कमला ने कहा—'हाय ! हाय !'

ठाकुर ने कहा—'यह पहाड़ी पन्छी है। इसका गोश्त बड़ा लजीज होता है। स्वास्थ्य के लिए भी लाभकारी सिद्ध होता है। यह कम मिलता है। आज भाग्य से मिल गया। एक पेड़ की डाल पर बैठा दिख गया।'

कमला ने तब भी तड़प कर कहा—'पिता जी, किसी की जान

लेना भी क्या अच्छा है ?' वह बोली—'मैं देर से जिस समस्या में उलझी हुई थी, उसका अब परिणाम दिखाई दिया। आप जिस प्रकार अपनी जबान का स्वाद पूरा करने के लिए उड़ते हुए पन्छी और जंगलों में फिरते हुए जानवरों को मारते हैं, उसी प्रकार आपके समाज का शिरोमणि पूंजीवादी-वर्ग निम्न वर्ग को हलाल करता है ... स्वार्थ के लिए उसका खून करता है...'

उस समय ठाकुर सुदर्शनसिंह भी अपने कपड़े उतार कर वहां आ गए थे। उन्होंने कमला की बात सुनी, तो ठहाका मारकर हँस दिया। सुदर्शनसिंह ने तुरन्त ही कहा—'कमलारानी ! इस दुनिया में सदा से ही यही होता आया है। आदमी भी एक जानवर है। बलवान जानवर छोटे को मारता है और अपना पेट भरता है।'

कमला ने जैसे फिर भी विचलित बन कर कहा—'तो फिर इन्सान आदर्श, धर्म और त्याग का क्यों नारा लगाता है ? क्यों इस प्रकार समाज को धोखे में डालता है।'

सुदर्शनसिंह बोले—'यह भी एक पहेली है ! मजेदार किस्सा है ! आदमी बुद्धिवादी है न, तो बुद्धि का विकास करके, आदि-युग से आज तक आदर्श और धर्म की आड़ में शोषण के मार्ग ही प्रशस्त करता आया है। जन साधारण से लेकर साम्राज्यों तक में, तुम इसी रीति-नीति को पाओगी। आज भी इस विज्ञान के युग में, जब कि संसार एक अजीब प्रकार की करवट ले रहा है, तो नयी साज-सज्जा से सजा हुआ संसार एक-दूसरे के नाश करने के हेतु अणुबम और आटोबम का आविष्कार करने में लगा है। संसार जिस तेजी से चल रहा है, प्रगति कर रहा है, उसे देखकर क्या कोई कह सकता है कि इस सजे हुये विश्व को खण्डहर बना देने की कोई सामग्री जुटा रहा है। पर सचाई यही है। विश्व के सभी राज्य आज इसी प्रयत्न में लगे हैं। देखती हो, विज्ञान ने विश्व-बन्धुत्व बढ़ाया है। एक-दूसरे से अपरिचित

दूर-दूर और एक दूसरे से टूटे हुए संसार को इस विज्ञान ने जोड़ दिया है। सभी एक-दूसरे की सहायता कर रहे हैं। लेकिन इसके उपरान्त ....? संसार फिर भी मूढ़ है! जड़ है! अविवेक चारों ओर फैला है। संसार विद्युत के प्रकाश में जगमगा रहा है, लेकिन संसार के सभी वर्गों, सभी सम्प्रदायों और सभी जाति के लोगों का मन अन्धेरे में पड़ा है...वह स्वार्थरूपी जहरीले धुएं में तिलमिला रहा है, छटपटा रहा है...'

कमला ने कहा—'तो क्या इस अवस्था का कहीं अन्त नहीं... अशान्त मनुष्य के टिकने योग्य कोई स्थान नहीं ?'

सुदर्शनसिंह ने कहा—'स्थान तो है। इन्सान टिक सकता है, शान्ति पा सकता है। परन्तु उस धर्म को, शांति के उपासक उस देवता को, लोगों ने हाथ अवश्य जोड़े हैं। उसकी पूजा भी की है। उसके अनुयायी बने हैं। उसे अपना भगवान माना है। लेकिन इन्सान तो सदा की तरह आज भी अपने स्वार्थ को प्रमुखता देता है। विश्व को खौलता हुआ कड़ाह देखना ही इस इन्सान की इच्छा रही है। वह अपने स्वार्थ के लिए दूसरे को झुकाता है। खून करता है। खून के दरिया बहाता है। इन्सान सदा ही, इस संसार को युद्ध-भूमि मानता आया है।'

कमला बोली—'यह तो बड़ी विषम अवस्था है!'

सुदर्शनसिंह ने कहा—'इस विश्व में बुद्धि का सबसे बड़ा चमत्कारिक प्रभाव ईसा, मुहम्मद, राम और कृष्ण ने स्थापित किय.। महात्मा बुद्ध ने भी उस परिपाटी का अनुसरण किया। कदाचित, यही कारण है कि ये महान आत्मायें सहस्रों वर्ष के बाद भी, आज भगवान के रूप में पूजे जाते हैं। भिक्षुक से लेकर सम्राट तक उनके चरणों में सिर झुकाते हैं।'

कमला बोली—'लेकिन हुआ क्या...इससे मिला क्या ? इससे

तो जनसाधारण और ठगा गया ! उसके समक्ष भगवान का प्रभाव स्थापित किया गया...धर्म का झण्डा उसके हाथ में देकर इसी का सिर उतार दिया गया ..जनसाधारण को भेड़-बकरियों की तरह से कटा दिया गया !'

सुदर्शनसिंह ने कहा—'तुम ठीक कहती हो ! तुमने समझ लिया है, मुझे हर्ष है कि तुमने इन्सान के इतिहास को पढ़ा है।'

कमला के पिता ने कहा—'कमला को आज भी पढ़ने का शौक है।'

सुदर्शनसिंह बोले—'यह अच्छा है ! पढ़ना मुझे भी भला लगता है। पर अब समय नहीं मिलता। वैसे विश्व का बड़ा भाग मैंने घूम कर देखा है। इन्सान की वास्तविकता को पाया है।' यह कहते हुए सुदर्शनसिंह अपने कमरे में चला गया। उसके पीछे कमला का पिता भी चला गया।

कमला के मन में आया, यह सुदर्शनसिंह भाग्यवान है। इसने संसार का इतिहास पढ़ा है, आंखों से देखा है। निश्चय ही इसके विचारों में प्रौढ़ता है।

१७

उस दिन कान्त जब कमला के आने का समाचार पाकर उससे भेंट करने पहुंचा, तो वह कमला का अपने समक्ष अप्रत्याशित रूप देखकर किंचित अवाक् रह गया। हरिद्वार में जिस कमला ने उसे अत्यन्त रुक्ष भाव में विदा दी, वही, कान्त को एकाएक अपने समक्ष देख, कितनी लजा गयी, कितनी विनीत हो गयी, यह सचमुच ही कान्त सरीखे भावुक युवक के लिए भी अकल्पित और अनहोनी बात थी। कमला को उस अनजाने रूप में देख, वह बोला—'क्या देख रही हो, भाभी! रामभली हो न, मैं कान्त हूं! सुना कि तुम आई हो, तो मिलने चला आया हूं। इस कमरे में मैं कुछ पुस्तकें भी छोड़ गया था, उन्हें भी लेने आया हूं।'

कमला ने कहा—'सो जानती हूं कि तुम मेरे नाम का केवल बहाना करते हो। अपनी पुस्तकें ही लेने आए हो। ले लो, वह रखी हैं।'

कान्त ने आगे बढ़कर किताबें उठा लीं। किन्तु तभी कमला उन किताबों में से एक को लक्ष करती हुई बोली—'मैं नहीं सोच पाती कि इस किताब में रखा मेरा फोटो तुम्हें कब प्राप्त हो गया?

बताओगे ?'

कान्त ने उस किताब की ओर देख, कुछ याद सी करते हुए कहा—'शायद रतन भाई ने दिया होगा। यह किताब भी उन्हीं की है। बहुत दिन हुए तब मैंने चाचा जी से पढ़ने के लिये ली थी। इसे पढ़ने का अवसर ही नहीं मिला। अब आधी पढ़ पाया हूं। एक-दो दिन में पढ़कर लौटा जाऊंगा। कहोगी, तो फोटो भी इस किताब के साथ ही—'

'हां, फोटो भी लौटा जाओगे, यही ना!' कमला ने आतुर बनकर कहा—'मैं समझी! सभी पुरुषों के समान तुम भी निठुर हो। पलभर में आंख बदलनी जानते हो।'

कान्त उस समय बाहर की ओर देख रहा था। मौसी रसोई घर में जाकर चूल्हे में आग सुलगा रही थी। उसी ओर देखते हुए, जब उसने झटका सा खाकर, फिर कमला की ओर देखा, तो बोला—'भाभी, इस दुनिया में सभी सम्भव है। कैसे कहूं कि मैं उदार हूं। विनीत हूं। न, मैं भी कठोर हो सकता हूं।' उसने कहा—'परन्तु तुम्हारे प्रति मेरी ओर से कोई अशुभ बात हुई हो तो मैं उसे जरूर सुनूंगा। वैसे, अपने एक दोष को मैं जानता हूं। सोच नहीं पाता कि वह मेरी कैसी निर्बलता थी। मैंने हरिद्वार में तुमसे जो कुछ कह दिया और उससे तुम्हें जिस प्रकार का सन्ताप मिला, उसका खेद मुझे अभी देर तक रहेगा। लेकिन विश्वास रखो, अब ऐसी धृष्टता तुम मेरी ओर से न पाओगी!'

उस समय कदाचित कान्त देख नहीं पाया कि कमला जिस प्रकार सिर झुकाये खड़ी थी और कमरे की खिड़की से बार-बार देखती थी, तो उस अवस्था में ही, उसकी आंखों में आँसू आ गये थे। जाने उसके मन को कान्त की कौनसी बात छू गयी कि वह फर्र-फर्र करती हुई आंखों से रोने लगी। कदाचित कान्त समझा नहीं कि जब वह

आया, तो कमला अपने स्वसुर के पैर छूने और उनकी रोती हुई आंखों को देखने के साथ स्वयं भी रो पड़ी थी। आंसुओं का वही उद्वेग तब भी उसकी आंखों के द्वार पर रुका हुआ था। कान्त ने जब अपनी बात कही, तो कमला चेष्टा करके भी अपने को नहीं सहार सकी। वह उस रोने को और बहते हुए आंसुओं को कान्त से छुपाने की भी चेष्टा करने लगी।

किन्तु तभी कान्त ने जमींन पर टप-टप आंसूओं को गिरते देखा। उसने छूटते ही कहा—'तुम रो रही हो, भाभी! बताओ, तुम अपने मन में क्या लिये हो?'

इतना सुना कि कमला ने अपनी वे द्रवित और आंसूओं से पुर आंखें कान्त की ओर उठा दीं। वह नितान्त चांचल और उद्वेग भरे स्वर में बोली—'कान्तबाबू, रोने के अतिरिक्त और मेरे जीवन में क्या है? क्या तुम समझते हो कि मैं हँसूंगी?'

कान्त मौन खड़ा रहा...जैसे पत्थर।

कमला फिर बोली—'मैंने इस नारी के जीवन को पाकर ही समझा है कि इस जीवन से हल्का, इससे अधिक सन्दिग्ध और इससे ऊपर दोषपूर्ण जीवन और कोई नहीं! पुरुष सदा ही इस नारी के प्रति निर्दय रहा... जैसे पत्थर!'

कान्त बोला—'भाभी, यह तो नारी की अपनी स्वयं की दुर्बलता है। भला, दूसरे का इसमें क्या दोष है।'

'कान्तबाबू'—कमला ने जैसे अत्यन्त विषमता भरे स्वर में कहा—'सभी पुरुष ऐसा कहते हैं। परन्तु जब समय आता है, तो वे आदर्श के पुतले, नारी को कट-कट और कच करके चबा जाना चाहते हैं।'

कान्त ने स्वयं भी उसी स्वर में कहा—'भाभी, यह बात दोनों तरफ की है। नारी भी दोषहीन नहीं है। समर्पण की भावना

उसमें पहिले पैदा होती है । नारी भी पुरुष की भूखी है । पुरुष की दारा है .. एक तुम्हीं लो न अपनी बात, रतन भाई क्या गये, तुमने बरबस ही अपने को अकेला मान लिया । भला पहिले भी कभी तुम्हारी आंखों में आंसू देखे गये ? मैंने तुम्हें सदा हँसती पाया । चेतना से भरी पाया । परन्तु पति से छूटते ही, तुमने अपने को एकाकी समझ लिया...निरी दुर्बल और अबला मान लिया, तुमने । जब कि तुम पढ़ी लिखी हो । समाज और देश की अवस्था भी समझती हो । तुम पूर्ण रूप से जागरूक हो । बताओ, अब तुम्हारा वह बल क्या हुआ ? तुम्हें क्यों रोना आता है ? तुम्हारे पास किस का वस्तु अभाव है ?'

कमला बोली—'तुम वस्तुस्थिति के विपरीत जा रहे हो, कान्तबाबू !'

कान्त बोला—'मैं इसे नहीं मानता । सभी की तरह, तुमने भी, आदि युग की नारी के समान अपने को पाया है । तुमने अपना पढ़ना भी बेकार किया । तुमने नवयुग की ओर नहीं देख पाया । आज नारी क्या नहीं करती ? नारी क्या नहीं सोचती ? आज नारी तो सबल है । पूर्ण है । वह पुरुष के कन्धे-से-कन्धा मिला कर चलती है । जीवन के सभी क्षेत्रों में नारियां प्रतिष्ठापित हैं, मैं कहता हूं तुम भी वही क्यों न बनो । अपने जीवन को उजागर करने के लिये तुम चाहो तो यह गांव छोड़ दो । सास-स्वसुर छोड़ दो ।'

कमला ने कहा—'यह कहना सुगम है । मेरी स्थिति में होते, तो समझते ।'

कान्त हँस दिया—'मैं समझा, तुम सब ओर से छूट कर नारी हो, कोमल हो ।' उसने इतना कहा और चल दिया ।

कमला ने पीठ पीछे से कहा—'आना ।'

कान्त कहता गया—'हां, हां, आऊंगा ।'

किन्तु उसी समय, रसोई घर में चूल्हे के पास बैठी हुई मौसी

बड़बड़ायी—'बेशर्म कहीं की ! यह भी नहीं देखती कि सारा क्या कहेगी ....स्वसुर क्या ? और उसने कहा—'आजकल की ये छोकरियां हवा में उड़ती है...हवा में किले बनाती है।'

और जब कमला स्वयं रसोई घर में पहुंची तो मौसी ने कहा—' अरी, क्या खायेगी, बहू !'

कमला बोली—'तुम उठो, मौसी ! मैं रोटी बनाती हूं।'

मौसी ने उसकी ओर देखा, जैसे समझना चाहा कि सच, यह रोटी बनायेगी ! बना लेगी !! वह बोली—'आज तू आयी है, आराम कर, मैं बना लूँगी।'

कमला ने कहा—'न मौसी ? यह मेरा ही काम है। तुम बैठो।

निदान, मौसी खड़ी हो गयी। कमला रसोई के काम पर लग गयी।

उसी समय, कमला की उस मौसी ने अपनी बहिन से जाकर कहा—'रामकली, तेरी बहू में तो कोई खोट नहीं। पर जमाने की हवा न लगे, बस, यही भगवान खैर करे !'

रामकली ने कहा—'जीजी, बंधी मुट्ठी और औरत का दिल भला कौन जानता है ? अब जैसे इसकी इच्छा।'

जीजी बोली—'अभी रतन को गये ही कितने दिन हुए हैं। देखना आगे का है ? अभी तो इसके सास स्वसुर बैठे हैं।'

रामकली बोली—'अब हमारा तो डेरा उखड़ रहा है, जीजी इस बार ही मामला समाप्त था। मैं गयी, तो क्या वे अधिक दिन जीयेंगे। न, वे भी जल्दी अपने रास्ते पर चढ़ लेंगे।'

जीजी ने कहा—'अरी, मेरे सामने तो बैठी रह ! मां-बाप की एक तू ही निशानी रह गयी है। तुझे देख लेती हूं, तो अपना बचपन भी याद कर लेती हूं।'

उसी समय कमला वहां आई और बोली—'अम्मा जी, तुम

क्या खाओगी ?'

रामकली ने कहा—'बहू, मैं तो जरा-सा दलिया खा लूंगी जीजी दे देगी। (बस आधी छटांक बना देना।')

कमला लौट गयी।

रामकली ने कहा—'इस गर्मी में चूल्हे पर बैठना क्या अच्छा है, इस बहू का ?'

जीजी ने तुनक कर कहा—'क्यों, तो बुरा इसमें क्या है ? और भी घरों की बहुएं हैं। वे क्या पलंगों पर बैठी रहती हैं ?'

रामकली ने कहा—'जीजी, यह बहू तो पलंग पर ही बैठती है। मैंने क्या कभी चूल्हे पर चढ़ने दी है। मैंने इसे बुरा-भला तो बहुत कहा—पर जितना आराम मैं इसे दे सकती थी, उसके लिये कभी पीछे नहीं रही !'

जीजी ने कहा—'तो तूने ही इस बहू का मिजाज बिगाड़ दिया है। अब भी आध घन्टे में शशिकान्त इसके कमरे से निकला। मैं पूछती हूं, तू अन्धी हो गयी है, क्या ? देख कर भी नहीं देखती ? मेरा घर होता, तो उससे साफ कह देती, बहू-बेटी से अकेले में बात नहीं किया करते, भैया ? पर तू है कि न हाथों में ली जाती है, न उठा कर धरी जाती है। जरूर, तू इस बहू को हाथों से निकाल देगी। तेरा सिर पर चढ़ाना ही, तेरे दुःख का कारण बन जायेगा।

रामकली बोली—जीजी, बस तू ही एक ऐसी है, जो रोज कहती है। नहीं तो सभी की-एक बात है कि कमला की सास बहू को प्रेम से नहीं रखती। इसीलिये तो कमला यहां रहना नहीं चाहती। और जीजी, यह तो भाग्य की बात है कि इसी घर में कई-कई नौकर रहते थे। पर अब एक भी नहीं। मिलते हैं तो इतने मंहगे कि लाये नहीं जा सकते।'

जीजी ने कहा—'अरी, तुम लोगों के तो दिमाग बिगड़ गये हैं।

कहीं घर के काम के लिए भी नौकर रखा जाता है। दो–तीन तो प्राणी हो। ऐसा बड़ा तो काम नहीं। जो लोग हाथ से काम नहीं करते, उन्हें तो रोटी पचाने के लिये वैद्य-डाक्टर का दरवाजा खोलना पड़ता है।'

उसी समय कान्त की मां वहां आई। वह कमला के आने की खबर सुनकर आई थी। जब वह आकर बैठी, तो कमला तुरन्त पास आकर बोली–'ताई जी नमस्ते।'

'नमस्ते, बहू। आ गयी, मुझे अभी कान्त ने जाकर कहा। अच्छी आई। भाग्य तेरे कि सास बच गयी। नहीं तो क्या इसको पाती ?'

कमला ने हँस कहा—'मैं अम्मा जी को अभी नहीं मरने दूंगी, ताई जी।'

ताई ने कहा—'और तूने बात तो सुन ली होगी कि कान्त की सगाई हो गयी। उसकी बहू भी पढ़ी-लिखी है।'

कमला बोली—'इतना तो सुन लिया। अब विवाह कब होगा। हमें मिठाई तो खाने को मिलेगी ?'

ताई बोली—'अरी, तू मिठाई की बात करती है। तू ही तो घर भर में उसकी एक भाभी है। तुझे तो रुपये मिलेंगे।'

रामकली की जीजी ने कहा—'रुपये या अशर्फी !'

ताई ने कहा—'यह तो समय की बात है, बहिन ! और बहू का भाग्य।'

कमला बोली—'मैं अशर्फी से नीचे बात नहीं करूंगी, ताई।'

ताई ने कहा—'अच्छा, अच्छा।'

उस समय मौसी के मन में बात थी कि बताये कि कान्त यहां आकर गया है। बात कर गया है। निदान, उसने अवसर पाकर कहा—'और कान्त तो सभी-कुछ बता गया होगा। यहां देर तक रहा।

कमरे में बहू से बात करता रहा।'

ताई ने कहा—'हां वह आया था। उसी ने मुझे बताया कि कमला अभी आ गयी है।' उसने इतना कहा और रामकली की जीजी की ओर देख कर हल्का-सा हँस दिया।

किन्तु कमला को मौसी के मन का और वाणी का वह प्रदर्शन रुचिकर नहीं लगा। उसका हँसता हुआ चेहरा एकाएक गिर गया। कदाचित रामकली ने इसे समझ लिया। उसने तुरन्त कहा—'एक कान्त है कि जिससे कमला दो बात कर लेती है। वही घर भर में देवर है। ये पढ़े-लिखे लड़के और लड़कियां हम बेपढ़ों से बात भी क्या करें। हम क्या समझें।'

कान्त की मां ने कहा—'यह तो ठीक है।'

मौसी ने कहा—'जहां मुर्गा बांग नहीं देता, तो क्या वहां भोर नहीं होता? जहां पढ़े-लिखे नहीं, क्या वहां आदमी नहीं रहते?'

रामकली बोली—'जीजी, यह बात नहीं। गेहूं में गेहूं का बोरा मिलता है, उड़द की दाल का नहीं। बेपढ़े, पढ़ों से नहीं मिल सकते। यही तुम्हारी बात है।'

कान्त की मां बोली—'अभी तक तो ऐसा ही है। कान्त हमीं से क्या बोलता है? बस, रोटी खाने घर में जाता है। कभी तो वह भी बाहर बैठक खाने में मंगा लेता है।'

मौसी ने कहा—'तो ऐसी पढ़ाई से क्या बहिन कि जो अपनों को भी गैर समझने लगें। पढ़ाई का मतलब यही तो है कि समझदारी अधिक आये। पर आजकल के पढ़े-लिखे तो माँ-बापों से ही नफरत करते हैं। पढ़ा-लिखा लड़का ऊंचे ओहदे पर पहुंच जाये तो लोगों से अपने किसान बाप की जान-पहचान भी नहीं कराता। वह उस बाप से भी नफरत करता है।'

रामकली ने कहा—'पर हमारा कान्त ऐसा नहीं है। रतन भी

नहीं था। रतन तो रोज सुबह होते ही मेरे और अपने पिता के पैर छूता था। वह काम यह कमला भी करती है।'

कमला उस समय रसोई में थी।

ताई ने कहा—'यह बहू सयानी है, समझदार है। कान्त तो इसकी बड़ी तारीफ करता है। कोई इस कमला की जरा भी बुराई करदे, तो फाड़ खाने को दौड़ता है।'

मौसी ने फिर चुटकी ली—'गूंगे की भाषा गूंगा जाने? मैं तो देखती हूं कि बहूजी का चुल्हे पर बैठते भी सिर दुखता है। घर के काम की सुध तो तब लें, अपने बनाव शृंगार से ही समय नहीं मिलता। कान्त जानता होगा और इस बहू की अच्छाई समझता होगा।' उसने कहा—'अब तुम्हारे घर में भी पढ़ी-लिखी आ रही है, देख लेना। अच्छी तरह समझ लेना।'

कान्त की मां ने सांस भर कर कहा—'जैसी पड़ेगी, सही जायेगी। हमारे कहने से अब कुछ होगा भी नहीं...अब हमसे यह जमाना नहीं बदला जायेगा...'

उस समय रामकली खामोश थी। उसे जीजी द्वारा उठाया गया प्रकरण पसन्द नहीं आ रहा था। परन्तु उसकी यह विशेषता थी कि यदि वह कुछ कहती, बहू का पक्ष लेती, तो जीजी लाल बन जाती। फिर वह घर को सिर पर उठा लेती। इसलिये वह चुप ही रही।

किन्तु जब जीजी ने कान्त की माँ से भी उत्साहप्रद बात नहीं पाई तो वह फिर बोली—'बहिन, मैं नहीं समझती कि हम किसानों के घर में ये पढ़ी-लिखी बहुएं क्या करेंगी? यहां कोई दफ्तर तो चलता नहीं। यहां तो खेती का काम है। मेहनत कर के खाना ही यहां के स्त्री-पुरुषों को शोभता है। बता तो क्या कान्त गांव में नहीं रहेगा?'

कान्त की मां ने कहा—'मैं कुछ नहीं जानती। उस घर की

चाबी जरूर मेरे हाथ में है, पर मेरी नहीं चलती ! बेटा नहीं मानता, बाप नहीं मानता। कान्त तो अपनी बहिन को भी शहर ले जाकर पढ़ाने की बात कहता है।'

जीजी ने कहा—'ठीक तो है, जब उसकी बहू मेम साहब बन कर आयेगी, तो बहिन क्यों न बनेगी।'

रामकली ने कहा—'अरी जीजी ! आज कल बे-पढ़ी लड़कियों के विवाह भी अच्छे घर नहीं हो पाते। और बे-पढ़े लड़के भी अच्छे घर नहीं ब्याहे जाते ?'

जीजी ने कहा—'पढ़े-लिखे लड़कों के मां-बाप मुंह फाड़ कर रुपया मांगते हैं। देखती नहीं, कर्जा लेकर लोग लड़की का दहेज भरते हैं।'

रामकली बोली—'आज तो सभी पैसे के पीछे भाग रहे हैं। कुछ मां-बाप तो ऐसे जल्लाद हैं कि लड़के की बहू को भूखी-प्यासी करके मार देते हैं। लड़के का दूसरा विवाह करते हैं। वह एक लड़का पढ़ा लिए। बनाकर उसी की कमाई की दुकान बना लेते हैं।'

उसी समय कमला वहां आई और रामकली की ओर देख कर बोली—'अम्मा, तुम्हारा दलिया लाऊं ?'

रामकली ने कहा—'बहू अभी नहीं। तू रोटी बनाले। अपने पिताजी को बुलाकर खिला दे। मौसी को भी दे दे।'

मौसी ने कहा—'मैं अभी नहीं खाती।'

कान्त की मां उठ खड़ी हुई। रामकली ने कहा—'बैठो न !'

वह बोली—'न, अब जाऊंगी। मैं चुल्हा देखूंगी। कान्त को दूध दे आई थी। दाल चूल्हे पर रख आई थी। लड़की से कह आई थी। अब फिर जाऊंगी।'

उसी समय रामलखन चौधरी घर में आये और बोले—'भूख लगी है।'

रामकली ने कहा—'रोटी तैयार है। खा लो।'

१८

रामलखन चौधरी का आरम्भ से ही जन-कार्य की ओर विशेष ध्यान था। उसका वह कार्य-क्षेत्र कभी छोटा होता, कभी विस्तृत हो जाता। पिछले दुष्काल और महामारी में उनका सेवा-कार्य का क्षेत्र काफी विस्तृत हो गया था। उस समय, सचमुच ही चौधरी ने अपने आपको जनता—जनार्दन की झोली में डाल दिया था। घर में जब भी रामकली ने इसका विरोध किया, तो उन्होंने सदा कहा, मेरे पास जो कुछ है, वह मेरा नहीं, समाज और देश का है। मैं अपना सभी कुछ लुटा दूंगा। आवश्यकता पड़ी, तो अपने को भी बेंच दूंगा। फलस्वरूप, उन्होंने अपने भरण-पोषण के लिये एक बाग पचास बीघे जमीन रख ली थी। उसके पास पूरे दो गांव थे। बड़े भाई ने पहिले ही अपना हिस्सा अलग कर लिया था। यद्यपि, बड़े भाई, कान्त के पिता ने कुछ हिस्सा अपनी ओर अधिक कर लिया था, लेकिन चौधरी रामलखन ने इसका कोई प्रतिवाद नहीं किया। रामकली के बार-बार टकोरने पर भी भाई से कुछ नहीं कहा।

परिणामस्वरुप, उन दोनों गांवों की जमीन, कुछ उन किसानों को दे दी गयी कि जो लगान देकर जोतते थे और बाकी उनको भेंट

की गयी कि जिनके पास एक खूड़ नहीं थी और रोटियों के भूखे थे। इस प्रकार उस गांव में कुछ व्यक्ति बाहर के भी आकर बसे थे। ये चौधरी की जमीन जोत कर निर्वाह कर रहे थे। वह गांव, जो किसी समय अधिक बड़ा नहीं था, अब विशाल बन गया था। चौधरी रामलखन के प्रयत्न से वहां सरकारी अस्पताल था और लड़के लड़कियों का स्कूल खुल गया था। पास के शहर से और गांव तक पक्की सड़क निकल गयी थी। चौधरी के पैसे से एक भवन निर्मित किया गया कि जहां प्रायः गांव के लोग एकत्र होते और अनेक विषयों की चर्चा किया करते। उसी भवन के एक पार्श्व में अब 'रतन पुस्तकालय' खोला गया था। प्रान्त के एक मिनिस्टर ने गांव में आकर उस पुस्तकालय का उद्घाटन किया।

इस प्रकार चौधरी के कार्य की गति चल रही थी। जब रतन लाल का देहावसान हुआ, तो लोगों में यह शंका पैदा हुई कि अब चौधरी के कार्य की गति मन्द पड़ जायगी। परन्तु ऐसा नहीं हुआ। चौधरी का जन-सेवा-कार्य बराबर चलता रहा। उसने खेती के लिये एक आदमी रखा हुआ था। चौधरी के पास दो बैल थे, एक गाय और एक भैंस। इस प्रकार घर में दूध चले जाता। खेती से निर्वाह भी होता रहता।

परन्तु जब चौधरी ने रतन के नाम पर पुस्तकालय खुलवा दिया, उसमें पुस्तकें भी आ गयीं, कुछ अखबार आने लगे, तो चौधरी अपने दिन का समय अधिकांश वहीं बिताता। पुस्तकालय में कुछ धार्मिक पुस्तकें भी थीं, चौधरी उन्हीं को पढ़ने में समय देता। वैसे पुस्तकालय में कुछ जीवन-चरित्र, कुछ इतिहास और कुछ सामाजिक पुस्तकें विशेष रूप से थीं।

लेकिन लगता यह था कि चौधरी उन दिनों अपने काम में प्रसन्न नहीं था। वह कुछ मन में लिये था। लोग अनुभव करते

कि रतन का शोक चौधरी को दीमक की तरह चाट रहा है। यह सोचना स्वाभाविक भी था। परन्तु सचाई कुछ और थी। चौधरी के मन को जो बात कील रही थी, वह थी, कमला। चौधरी इतने समय में भी यह निश्चय नहीं कर सका कि इस बेचारी के जीवन का क्या उपयोग हो? वह ऐसा क्या उपाय करे कि जिससे कमला को चैन मिले, उसे शांति प्राप्त हो? और बात यह थी कि चौधरी इस बात को पूर्णरूप से अनुभव कर रहा था कि उसकी बहू कमला गांव के जिस समाज में बस रही है, वह स्वयं इस बात का दोषी है कि कमला को यह न भूलने दे कि वह विधवा है......वह निरालम्ब है ....इस जगत में उसका कोई नहीं है। किन्तु चौधरी के मन में यह बात थी कि गांव का मूर्ख समाज उसकी फूल जैसी कोमल बहू को असमय ही मार देगा...इसे झिझोड़ कर तोड़ देगा! निदान, चौधरी रामलखन इस अवस्था को दूर करने की टोह में था। वह चाहता था कि रास्ता दिखाई दे और बहू का हाथ पकड़ कर उसी दिशा की ओर बढ़ जाये... आवश्यकता पड़े तो वह गांव से दूर हो जाये।

दैव की बात कि उन्हीं दिनों अपने प्रान्त से दूर, दूसरे प्रान्त में भयंकर बाढ़ आ गई। हजारों गांव बह गये। लाखों व्यक्ति बे-घर-बार के बन गये। चौधरी ने सुना, तो तुरन्त ही प्रान्त की सरकार को लिखा और अपनी सेवा अर्पित की। फलस्वरूप, चौधरी को वहां जाने का आदेश दिया गया। सरकार ने अपने पत्र में यह भी लिखा कि आपकी सेवाएं उन दीन व्यक्तियों के लिए अमर आशीष होंगी।

जब सरकार का वह पत्र चौधरी रामलखन को प्राप्त हो गया, तो वह प्रसन्न भाव में उसे लिये घर में गये। उस समय कमला अपनी सास के पास बैठी हुई थी। एक और स्त्री वहां थी कि जो चौधरी को आया देख, उठ कर चली गयी।

तभी चौधरी ने सास-बहू को सम्बोधित किया और कहा—'मैं

कल ही बाहर चला जाऊंगा। दूसरे प्रान्त में मेरी सेवा की आवश्यकता है, वहां पहुंचूंगा। हमारे प्रान्त की सरकार ने भी मुझे अनुमति के रूप में लिख दिया है।' वह बोले—'बेटी, कमला! सेवा करना ही, इस मनुष्य का पहिला कर्तव्य है। इसीलिये तो यह शरीर मिलता है। भगवान ने मुझे एक और अवसर दिया कि मैं दूर के प्रान्तवासियों को अपने मानस का प्रेम, अपने हृदय की अर्चना भेंट कर सकूंगा। वहां लाखों व्यक्ति मुसीबत में हैं। जिस जल से मनुष्य को प्राण प्राप्त होते हैं, प्यास बुझती है, वही जल वहां के वासियों का काल बन गया है। कई नदियां एक साथ चढ़ आई हैं। हजारों गांव बरबाद हो चुके हैं।'

कमला ने कहा—'पिता जी, मैं भी चलूंगी!'

चौधरी ने कहा—'तुम—तुम बेटी! शौक से चलो। सोच लो, कष्ट बहुत होगा। मुझे तो भूखा-प्यासा रहने की आदत पड़ गयी है। पर तुम,—तुम्हें ऐसी आदत अभी कहां पड़ी है।'

कमला ने चंचल तथा आतुर बन कर कहा—'न, पिताजी जो आदत नहीं पड़ी है, वह पड़ जायेगी? मुसीबतजदों को देख, मुझे भी उस कष्ट को सहन करने की आदत पड़ेगी।'

चौधरी ने रामकली की ओर देखा और मुसकराया। उसने कहा—'पहिले अपनी सास से तो आज्ञा ले लो। इनसे पूछ लो, इन्हें भी तुम्हारा यह प्रस्ताव स्वीकार है, या नहीं!'

रामकली ने कहा—'मेरा तो यहां कोई काम है नहीं। कमला जाये, तो क्या मैं रोक लूंगी?'

कमला ने कहा—'न, अम्मा! मुझे जाने दो! मुझे भी उस पवित्र गँगा में गोता मारने दो।'

चौधरी ने कहा—'हां, रतन की मां! बहू को आज्ञा दो। इसे कुन्दन बनने दो। अब तक इसने अपने पिता का वैभव देखा है, विलास-सामग्रियों से अपना नाता जोड़ा है। पर वहां देखेगी कि इन्सान किस

प्रकार सिसक रहा है... .. वह इन्सान किस तरह पेट के लिए दो दाने-पाने में भी असमर्थ बन गया है ...... भगवान की फुलवाड़ी का फूल बे खिले ही मुरझा रहा है। उसे प्रकृति और इन्सान दोनों ही अपने पैरों तले मसल रहे हैं देखने दो बहू को कि इस इन्सान के प्राण बर बस ही नीचे जा रहे हैं और उसे गीद्ध तथा चील-कौवे खा रहे हैं वह .. वह .'

रामकली ने झटके से ऊपर मुंह उठाया और कहा—'वाह-वाह ! जैसे वहीं पहुंच गये, तुम। तुम्हारा यह हाल क्या हो गया है कि बात पीछे करो कि आंसू पहिले। इतनी-सी बात पर रो पड़े। जब यह हाल है, तो वहां सेवा का काम क्या खाक करोगे ? तुम तो वहां जगह-जगह रोते फिरोगे। भला तुम किसको क्या ढाढस दोगे !' उसने कमला की ओर देखा और कहा—'तू जा, बहू ! साथ रहेगी, तो इनका ध्यान तो रखेगी ! तू जरूर जा ! अपनी तैयारी कर ले।'

चौधरी ने आंखें पोंछ लीं और कहा—'रतन की मां, अब तो मैं दरिद्रों की झोली में खो जाना चाहता हूं।'

रामकली ने कहा—'तुम जो कुछ हो, वही रहोगे। मुझसे क्या बदलोगे।'

चौधरी सूखे भाव में मुसकरा दिया—'अब तो यह चोला ही बदलूंगा रतन की मां ! मैं भी तेरे रतन के पास पहुंच जाऊंगा। उस से जा मिलूंगा।'

रामलखन ने इतना कह तो दिया, परन्तु वह तुरन्त ही समझ गया कि यह अच्छा नहीं किया। उसने रतन की मां की शांति को बरबस ही झिझोड़ दिया। इसलिये वह तुरन्त मौन हो गया। परन्तु जब उसने अपनी आंखें रामकली के मुंह पर कीं, तो देखा, उसकी दोनों आंखें भरी थीं। कोई उसके रतन के पास जाये और उसे न ले जाये, यह उस रामकली को कदापि अभीष्ट नहीं था। इसलिये, जब चौधरी ने बेटे से

मिलने की बात कही, तो उस बेटे की मां की छाती पर जैसे घूंसा पड़ा हो। वह छटपटा गयी। उसके मन का उद्वेग तुरन्त ही आंखों में उतर आया। उसी समय, उसने बिलख कर कहा—'तो तुम्हें यह भी कहना था...इतना भी कहना था...'

चौधरी ने कहा—'पगली मत बनो। जो यहाँ नहीं, वह कहीं नहीं। अब उससे हमारा सम्बन्ध क्या? जाने वह कौन हो, किस योनि में हो?'

रामकली बोली—'तो मुझसे ऐसी बात मत कहा करो। मुझे मत सुनाया करो।'

चौधरी ने कहा—'भूल हुई। ऐसा तुमने पहिले भी कहा था, पर वह बात दिमाग से दूर हो गयी। अच्छा, तुम शान्त बनो। कहती मुझको हो कि मैं दिल का कमजोर हूं। पर मैं कहता हूं, तुम मुझसे अधिक दुर्बल हो। उसने कमला की ओर देखा और कहा—'तो बेटी, तुम अपने जरूरी कपड़े और बिस्तरा बांध लेना। मेरा बिस्तरा भी। मेरे दो कुरते धोती रख लेना। बोझ अधिक न करना, खुद ही उठाना पड़ेगा। जाने किस-किस रास्ते से जाना पड़े। गाड़ी सुबह आठ बजे मिलेगी। हमें यहां से सुबह छः बजे चलना जरूरी होगा।'

रामकली बोली—'फसल पक कर आ रही है। वह काटनी है। खलिहान में जानी है। फिर अनाज उठना है, मैं क्या-क्या देखूंगी। घर की करूँगी, या बाहर की।'

बाहर जाते-जाते रामलखन ने कहा—'जैसा तुम जानो, करना। काम यह भी जरूरी है। बहू न जाना चाहे, तो रुक सकती है।'

चौधरी के बाहर जाते ही, रामकली ने कहा—'तू क्या करेगी, बहू? यह काम का मौका है।'

कमला ने कहा—'न, अम्मा, मुझे जाने दो। मुझे भी अपना

एक रास्ता देखने दो।' वह बोली—'पिताजी से जो कुछ मैं यहां नहीं पा सकती, वह बाहर पा लूंगी। मुझे भी इन्हीं के रास्ते की राहगीर बनने दो अम्मा !'

अम्मा ने कहा—'तू जान ?'

कमला बोली—'अम्मा, तुम जानती हो, अब मेरा कुछ और महत्व नहीं रहा। तुमने तो सुना है, पिताजी अनेक बार कह चुके हैं, दुखियों की सेवा करना ही भगवान की सेवा करना है। तो क्यों न तुम मुझे ऐसा अवसर दो।'

रामकली बोली—'अच्छा, बहू ! जा, जल्दी लौटना। देख, इनका ध्यान रखना। रतन इन्हें खोखला कर गया है। अब इनमें कुछ नहीं रहा है। पहिले से खूराक भी आधी नहीं रही।'

यह कहते हुए रामकली उठ चली। वह घर से बाहर चली गयी।

उसी समय कान्त वहां आया। वह आते ही बोला—'अरे वाह, भाभी ! बड़ी दूर के मन्सूबे बांध लिए। मुझे तो अभी चाचा जी से मालूम हुआ।'

कमला ने कहा—'हां, कान्तबाबू ? मेरा भी वहां जाना अच्छा है। जन-सेवा में लगना मुझे श्रेयस्कर दीखता है।'

कान्त बोला—'लेकिन मार्ग कठिन है। हर कोई क्या उस पथ पर टिका रहता है ?'

कमला बोली—'यह मानती हूं। कुछ अनुभव भी करती हूं। लेकिन मेरे सामने तो इसके अतिरिक्त विकल्प ही नहीं रहा।'

कान्त ने इतनी बात सुनी, तो अपना मत नहीं दिया। वह मौन रह गया।

कमला बोली—'कान्त जी ! मेरा यहां भी रहना दूभर हो गया है। जब मैं मसूरी से आई थी, तो तब भी, मौसी ने मेरी नाक में

दम कर दिया था। अब वह नहीं, तो गांव तो है। पड़ोस तो है। जिसके जो मुंह में आता है, वह कहता है।

कान्त ने कहा—'तो यों कहो, तुम सेवा करने नहीं, इस गांव की बातों से बचने जा रही हो। भाभी, यह तो सबसे बुरा है। तुम सचमुच में निर्बल हो। तेजोमयी नहीं। तुम चाहो, तो लोगों को फटकार दो। कहने वाले के मुंह पर तमाचा मार दो।'

कमला ने कहा—मुझ में अभी ऐसी शक्ति नहीं आई है। यदि वह होती, तो मैं यह गांव और घर कभी का छोड़ देती। लेकिन नहीं जानती मैं कि किस प्रेरणा से मैं शिथिल बनी हूं। कोई मेरे कपड़ों की आलोचना करती है और कहती है, मैं विधवा बनकर भी कैसी बढ़िया धोती पहनती हूं। कोई बालों को देखकर कहती है कि मैं रंडोपा काट रही हूं या कि बाल को काढ़ कर किसी को रिझाने की बात सोचती हूं। कान्तबाबू! मुझे तो लगता है कि मेरा खाना भी यहां की औरतों की आंखों में खटकता है! निःसन्देह, वह सब मेरे मरने की कल्पना करती हैं ..पर मैं मरती नहीं, तो वे इसे भी मेरा ढीठपन और निन्दनीय काम समझती हैं।'

कान्त उस समय एक चौखट के सहारे खड़ा था। जब उसने कमला की बात सुनी, उस चौखट में जूते की ठोकर मारता हुआ बोला—'तुम्हारी इस विषम अवस्था की कल्पना तो करता हूं। परन्तु मैं तुम्हारे समक्ष हार चुका। तो भला अब क्या कहूं! यह गांव तो गंवारों की आबादी है। यहां पुरानी तरह की बात ही सूझती है। मैंने तुम से आज तक नहीं कहा, किसी ने मेरी मां से भी कहा था। पिताजी के कानों में भी यह बात आई कि मैं तुम्हारे पास आता हूं। बैठता हूं। तब मैंने परिस्थिति से लड़ने की इच्छा की। समाज के समक्ष तुम्हारा और अपना एक प्रखर रूप रख देना पसन्द किया।'

कमला ने जल्दी से अपने मुंह का थूक सटक कर कहा—'कान्त बाबू ! समस्या का वह हल भी उचित नहीं था। वह तुम्हारे लिए अशोभनीय था। लोग कहते, तुम्हारे माता-पिता ही कहते, इस औरत ने हमारे लड़के को ठग लिया...और जब मैं इस घर पर विवाहित बन कर आई, तो मुझे इस घर की प्रतिष्ठा भी रखनी थी। मैं तुम्हारे चाचाजी की जीवन भर की उपासना और प्राप्त हुई प्रतिष्ठा को भी सुरक्षित रखना चाहती थी। अब यह घर मेरा है। मेरा जीवन इससे बंधा है। अपनी इच्छाओं से मैं अपरिचित नहीं हूं। दुर्बल भी हूं। परन्तु सहारे की खोज भी करती हूं। देखती हूं, पिता ी मेरा बड़ा सहारा हैं। मुझे तो लगा कि मुझे जन्म देने वाले पिता भी उनके समक्ष हेच हैं। दोनों के जीवन-लक्ष में अन्तर है...जीवन को देखने में अन्तर है। एक दरिद्र और दीनों का शोषण करके जीवन के वैभव पाना चाहता है और दूसरा अपना सर्वस्व देकर, उन दीनों की सेवा में अर्पित होना पसन्द करता है। बताइये, कितना महान अन्तर है, यह !'

चौखट से अपना पैर हटाकर कान्त ने कहा—'दिखता है, तुमने चाचाजी को समझ लिया है। तुमने जीवन की वास्तविकता भी देखनी आरम्भ कर दी है। बधाई, भाभी !' वह बोला—'जब तुम उस बाढ़-क्षेत्र से लौटोगी, तो मैं तुम्हारा स्वागत करने के लिए सबसे आगे हूंगा। सुबह की पहली ट्रेन से जाओगी न ! मैं स्टेशन चलूंगा। अच्छा, अब जाऊंगा।' कान्त चला गया।

उसी समय कमला वहां से उठी और वह अपने कमरे की तरफ जाती हुई बोली—'यह समझा नहीं जा सकता कि इस जीवन का मोड़ किधर है...मुझे अब किस-किस ओर मुड़कर जीवन के अन्तिम छोर पर पहुंचना है...और उसी छोर का नाम तो है अन्त,...जीवन की मौत !'

निढाल बन, कमला पलंग पर पड़ गई। वह खिड़की से दीखते नीलाकार आसमान की ओर ऐसे देखने लगी कि जैसे, उस समय वह सचमुच ही निरलक्ष थी...उसका कोई ध्येय नहीं था।

१६

गांव से जिस समय चौधरी रामलखन ने प्रस्थान किया, तो जैसे गांव में अजीब प्रकार की लहर दौड़ गई। मानो गांव के प्रत्येक व्यक्ति के मन में यह विचार पहले से आया था कि उसे अपने चौधरी को कि जो सचमुच ही उस गांव के जन-जन का राजा बन गया था, बिदा करना पड़ेगा। प्रातः होते ही, चौधरी के द्वार पर लोगों की भीड़ लग गई। लोग टोकरियों में फूल भर लाए और माला गूंथ लाए। चौधरी ने इतना सब देखा, तो उसे स्वयं अचरज हुआ। परन्तु बात तो रात-रात में गांव में फैल गई थी। सभी लोग जान गए थे कि चौधरी और उनके लड़के की बहू दूर देश जा रहे हैं .....वे विपत्ति में पड़े इन्सान की सेवा करने जा रहे हैं।

किन्तु जब लोग और गांव की नारियां चौधरी के द्वार पर आ एकत्र हुए, तो वहां से विदा के लिए प्रस्तुत हुए चौधरी ने गांव के उस समाज को सम्बोधित करके कहा---'आप मुझे वह वस्तु दें कि जिससे उसी दुःखी और त्रस्त समाज का उद्धार हो...उसे अन्न और वस्त्र प्राप्त हो!'

निदान चौधरी की इस अपील का परिणाम यह हुआ कि स्त्रियों

ने अपने जेवर दिए, पुरुषों ने पैसा। यों सुगमता से चौधरी को आशा से अधिक धन प्राप्त हो गया। चौधरी और कमला को लोगों ने फूलों से लाद दिया। गांववालों ने उन्हें दूर तक विदा किया। ढोल-ताशों के साथ उनको विदा किया गया। बहुत से व्यक्ति स्टेशन तक भी गए। रामकली घर ही रही।

जब चौधरी और कमला रेल पर सवार हो गए, तो उस समय कान्त भी वहां था। उसने कमला को सम्बोधित कर कहा—'लोगों ने पैसा दिया, स्त्रियों ने आभूषण, पर मैं क्या दूं ?'

कमला ने कहा—'अपनी सद्भावना !'

कान्त बोला—'वह तो तुम्हें सुलभ है और प्राप्त है।'

कमला ने कहा—'अपने विवाह की सूचना देना। कब होगा, यह बताना !'

कान्त ने कहा—'तब तक तो तुम आजाओगी। विवाह पर तुम्हीं तो मुझे आशीष दोगी !'

कमला ने हंसकर कहा—'आशीष बड़े देते हैं, मैं तो अकिंचन हूं।'

कान्त उस समय जैसे अपने मन की किसी बात को बरबस रोके हुए था। वह उसे कहना नहीं चाहता था। किन्तु जब कमला ने अपने को अकिंचन बताया, तो वह तुरन्त ही बोला—'भाभी, तुम मेरे लिए क्या हो, वह मैं इस स्थान पर नहीं बता सकता। देखता हूं तुम जबरदस्ती दूसरे मार्ग पर फेंकी जा रही हो। मुझे स्पष्ट लगता है कि अपने साथ तुम मुझे भी भ्रान्त बना रही हो !' उसने कहा—'चाचा जी का तो जीवन ही इस दिशा पर कट गया। उन्होंने इन्सान की सेवा करके पुरस्कार भी प्राप्त कर लिया। पर तुम बताओ, तुम वहां जाकर क्या लोगी ? क्या पाओगी ? क्या तुम वहां ज़ाकर अपने इस सुन्दर शरीर को भद्दा और कठोर न बना दोगी ? मैं कहता हूं, तुम लौटोगी, तो इस रूप को उसी प्रान्त की भेंट कर आओगी ! मुझे

इसका भी भय है कि तुम वहां इस शरीर को कोई बीमारी न लगा बैठो।'

कमला ने हँस कर कहा—'यह भी हुआ तो क्या मेरे लिए अहितकर होगा ? मुझे देर तक इस धरती पर रहकर भला क्या करना होगा ?'

कान्त ने उसे घूर कर कहा—'तो क्या आत्महत्या करने जा रही हो ? मरना चाहती हो ?'

कमला ने इतना सुना और अपनी सुन्दर आंखों से मुस्करा दिया। उस अवस्था में ही उसने कहा—'कान्तबाबू ! मैं भी वहाँ के मनुष्यों का आशीष प्राप्त करूंगी ! आज तुम्हारे चाचा जी को लोगों ने जिस उत्साह से विदा किया, वह तुमने देखा ? पिता जी गांव के हृदय पर कितनी गहराई से समाधिस्थ हैं, यह मैंने भी आज देखा !'

कान्त ने कहा—'चाचा जी गांव के देवता हैं।'

उसी समय गाड़ी ने सीटी दी। गांव के जो व्यक्ति चौधरी रामलखन से बातें कर रहे थे, वे रेल के डिब्बे से अलग हो गए। चौधरी ने अपने बड़े भाई को सम्बोधित करके कहा—'कान्त के विवाह की तिथि निश्चित हो जाए, तो खबर देना।'

भाई ने कहा—'मैं पत्र दूंगा, तुम तुरन्त आ जाना। तुम न आओगे तो विवाह टाल दूंगा।'

चौधरी ने हँस कर कहा—'अच्छा, अच्छा।'

गाड़ी छूट गयी। चौधरी ने सबको अभिवादन किया। कमला ने कान्त से कहा—'भूलना नहीं, तुमने अपनी इस भाभी से कुछ कहा था, उसे याद रखना।'

कान्त ने डिब्बे के साथ चलते-चलते कहा—'पर तुमने स्वीकार कहां किया ! मुझे ठुकरा दिया।'

कमला ने कहा—'अब रुक जाओ। आगे तक न आओ। जो कुछ कहा तुमने, उसे लौट आकर बताने का विषय है।'

कान्त रुक गया। गाड़ी ने प्लेटफार्म छोड़ दिया। चौधरी कमला के पास आ बैठा। उसने कहा—'बहू, अपने सामान का ध्यान रखना। गांव वालों ने कुछ आभूषण और धन देकर कुछ बोझ और बढ़ा दिया। अब तुम्हें सचेत रहना होगा। हम यहां से पटना पहुंचेंगे। वहां से दूसरी गाड़ी में बैठेंगे। कल संध्या समय तक अपने गन्तव्य स्थान पर पहुंच सकेंगे।' यह कहते हुए चौधरी ने अपने सिर से पगड़ी उतार दी। उसने अपना मुँह खिड़की पर रख दिया और सिर को हवा लगने के साथ, जैसे उसे चैन मिला। वह कुछ ही देर में सो गया।

परन्तु कमला अपनी जगह बैठी थी। गाड़ी तेज हो गयी थी। वह बड़ी तीव्रता के साथ जँगल के पेड़, खेत और खलिहानों को पीछे छोड़ती जा रही थी। इस बीच में कमला ने डिब्बे में बैठे हुए मुसाफिरों पर भी दृष्टि डाल ली। एक जवान मुसाफिर जो देर से उसकी ओर देख रहा था और अपने एक हाथ से मूछें भी मरोड़ रहा था, उसी को लक्ष कर कमला बोली—'आदमी की यही आदत है.. औरत को देखता है ... औरत को पाना और खा जाना ही पसन्द करता है.'

लेकिन, उस डिब्बे में, कुछ ऐसे भी मुसाफिर थे कि जिन्हें देख कर, कमला को न कौतूहल हुआ, न जिज्ञासा का भाव। अपितु, हुआ यह कि उनमें कुछ को देखकर तो उसे लगा कि जाने भगवान ने क्यों इस सृष्टि का निर्माण किया...क्यों इस मनुष्य को धरती पर पटक दिया। एक स्त्री, जो कमला के सामने की सीट पर बैठी हुई थी, शरीर से अत्यन्त निर्बल और निस्तेज थी। उसके पास दो बच्चे बैठे हुए थे। उसका पुरुष भी बैठा हुआ था। वह पुरुष शरीर से पूर्ण पुष्ट था। परन्तु बच्चे और मां निर्बल थे। यही देखकर कमला ने एकाएक मन में आई हुई बात को लेकर कहा—'नारी का सौन्दर्य, नारी का तेज

सब इस पुरुष ने सोख लिया ... नारी को निर्जीव बना दिया... हाड़ मांस की सुन्दर नारी थी कि अब मक्खी भिनकने वाली, जैसे भद्दे पत्थर की मूरत, बना कर रख दिया....

उस समय कमला का मुंह बाहर की ओर था। उसकी दृष्टि के समक्ष विविध प्रकार के दृश्य आ रहे थे। यौवन से भरी, उछलती, कूदती नदी आ रही थी और कहीं दूर पर ऊंचो-ऊंचो पहाड़। कमला प्रकृति के उस खुले यौवन को देख, मन में प्रफुल्लित थी और शान्त थी।

तभी चौधरी की आंख खुली। उसने कहा—'बहू, अभी कोई स्टेशन नहीं आया ?'

कमला ने कहा—'स्टेशन कई आये और निकल गये।'

चौधरी ने कहा—'ओह, तो मैं बहुत सो लिया।' वह बोला—'मैं रात कम सोया था। लोग पास से जाते ही नहीं थे। रोक रहे थे। मेरे जीवन के प्रति आशंकित थे। मेरे बगैर वे सब गांव को सूना समझ रहे थे।'

कमला ने कहा—'उनका कहना भी ठीक था।'

चौधरी ने कहा—'न, बेटी ! मेरे बगैर कोई काम न रुकेगा ! किसी के बिना नहीं रुकता। यह गांव क्या, देश और संसार का नहीं रुकता।'

कमला बोली—'पिता जी, कुछ व्यक्ति इस धरती पर केवल दूसरों का उपकार करने के लिये आते हैं। वे देवता, ऋषि और भगवान कहलाते हैं। लोग उनके अस्तित्व की अधिक कीमत आंकते हैं। बताइये, क्या आप भी एक ऐसे नहीं ?'

चौधरी ने कहा—'न, बहू ! मैं ऐसा बिलकुल नहीं। मैं तो यह भी नहीं जानता कि भगवान को कैसे प्रसन्न किया जाता है।'

कमला बोली—'भगवान न सही, आप मनुष्य को तो प्रसन्न करना समझते हैं। यह ज्ञान तो आप अपने जन्म के साथ लाये हैं।'

चौधरी ने हँस दिया—'बहू, तू भी मेरी तारीफ करती है।' उसने कहा—'अरी पगली ! किसी के साथ सहयोग देना इन्सान का पहिला काम है। आज के इन्सान ने यह भुला दिया है। बहुत कम लोगों को अब यह सबक याद रहा है। इसलिये, मैं जो कुछ करता हूं, वह कोई ऐहसान की बात नही करता। अपने कर्तव्य का पालन करता हूं।'

कमला ने सांस भरी और कहा—'लेकिन ऐसा सोचते कितने हैं ? सब अपना ही स्वार्थ देखते हैं।'

उसी समय एक स्टेशन आया। चौधरी ने कहा—'बहू मुझे लोटा निकाल कर दे, पानी ले आऊं। दोपहर भी हो गया है। कुछ खा लेना चाहिए।'

कमला बोली—'अम्मा ने खाना बना कर दिया है। कुछ लड्डू भी बना दिये हैं। घर में जितना घी रखा था, अम्मा ने सभी लगा दिया।'

चौधरी ने कहा—'वह बड़ी समझदार है। कर्कश स्वभाव की तो है, परन्तु घर के आदमियों का अभाव भी खूब समझती है।'

कमला ने लोटा और गिलास निकाला। चौधरी खड़ा हो गया।

कमला बोली—'आप बैठें, मैं लाती हूं।' यह कहते हुए वह स्वयं उठ खड़ी हुई। चौधरी न, न, करता रहा, परन्तु वह प्लेटफार्म पर उतर गयी। गाड़ी ने सीटी दी कि उसके साथ कमला भी लौट आई।

चौधरी ने हँस कर कहा—'अब समझा मैं कि तू परदेश में अपने बोझ के साथ मेरा भी बोझ सम्भाल लेगी।'

कमला बात सुनकर मुसकरा दी। उसने चौधरी को खाना निकाल कर दिया।

चौधरी ने कहा—'तू भी खा ले, बहू।'

कमला ने कहा—'मैं खा लूंगी।'

उसी समय सामने की सीट पर बैठा बच्चा चौधरी के हाथ की

पूरी-साग को देखने लगा। जैसे वह ललचाने लगा। तब कमला ने एक पूरी उसे दी। यह देखकर, चौधरी ने कहा—'ठीक है बहू! दूसरे को भी दो।'

लड़के के बाप ने कहा—'नहीं, नहीं, आप खाइये।'

चौधरी बोला—'बच्चे को भी खाने दो, भाई! खाओ।' जब चौधरी खा चुका, तो वह कमला को लक्ष करके बोला—'मैं मन के उत्साह को लेकर चल तो दिया, पर अब अधिक काम नहीं किया जाता शरीर थक गया। पंगु हो गया।'

कमला बोली—'वृद्धावस्था में ऐसा ही होता है। शरीर अशक्त बन जाता है।'

चौधरी बोला—'पहले मुझ में बड़ा उत्साह था। काम भी खूब करता था। एक एक दिन में कई-कई गांव जाता था। मेरा रतन भी काम करने से जी नहीं चुराता था।' उसने कहा—'जब गांव में बीमारी फैली, तो रतन कई मुर्दों को अकेला ही कन्धे पर उठा स्मशान रख आता था। अकेला ही फूंक आता था। सुना कि एक बार तू भी लड़ी थी।' चौधरी ने सांस भरी और कहा—'भाग्य की बात कि उसे इतने दिन ही हमारे साथ रहना था। यदि वह और कुछ दिन रहता, तो उसका नाम दूर, दूर तक फैल जाता। लोग तो उसे असेम्बली में भेजना चाहते थे।'

'तो वहां जाना आप भी पसन्द करते थे?' कमला ने एकाएक प्रश्न किया। उसे ठाकुर सुदर्शनसिंह के विचारों का ध्यान हो आया।

किन्तु चौधरी ने कहा—'मैं इस प्रकार के चुनाव में खड़ा होना पसन्द नहीं करता।'

कमला ने फिर प्रश्न किया—'आप ठाकुर सुदर्शनसिंह को जानते हैं?'

चौधरी ने कहा—'हां, हां! क्यों नहीं! वह भी पैसे वाला

है। हमारी बिरादरी में बड़ा आदमी है। क्यों, तुम्हें उसका कैसे ध्यान आया ?'

कमला ने कहा—'वह मेरे पिता के दोस्त हैं। आते-जाते हैं।'

चौधरी ने कहा—'सुदर्शनसिंह पैसे का दुरुपयोग करता है। बाप की दौलत उड़ाता है। पहले उनके पास जमींदारी कम थी। बाप ने बढ़ाई थी। सुनता हूं, उसने बेइमानी भी की थी। एक सेठानी की जायदाद और रुपया उसे प्राप्त हो गया था।'

कमला ने कहा—'पिताजी, यह दौलत भी भागती रहती है।'

चौधरी ने कहा—'लक्ष्मी का चंचल स्वभाव होता है।'

उसी समय, डिब्बे में दूसरी तरफ शोर उठा। एक मुसाफिर लेटा हुआ था। दूसरा खड़ा हुआ, उसे बैठने के लिए कह रहा था। किन्तु वह लेटा हुआ मुसाफिर शहजोर था। उसने घुड़क दिया। कहने वाले को फटकार भी दिया। लेकिन इस पर भी उसने प्रतिरोध किया, तो बलिष्ठ व्यक्ति ने उठकर, इतने जोर से तमाचा मारा कि खड़ा हुआ व्यक्ति तिलमिला गया। उसकी आंखों से आंसू निकल आये। कमला ने देखा कि डिब्बे के किसी एक व्यक्ति ने भी विरोध नहीं किया......निर्बल व्यक्ति का किसी ने भी साथ नहीं दिया। उसने तुरन्त चौधरी से कहा—'पिता जी...'

चौधरी ने कहा—'यही अन्याय है। समाज का यही पाप है।'

किन्तु कमला मौन नहीं रह सकी। उसने तुरन्त डिब्बे के सभी व्यक्तियों को सम्बोधित करते हुए कहा—'आपको शर्म आनी चाहिए। क्या निर्बल इन्सान का आपको साथ नहीं देना चाहिए ?'

एक वृद्ध ने कहा—'बेटी, ये सभी नपुन्सक हैं........आदमी नहीं, जनखे हैं !'

किन्तु कमला ने कहा—'हमें निर्बल का साथ देना चाहिए।

उसी समय, वह जवान व्यक्ति जो बड़ी देर से कमला को देखता और मूछें मरोड़ता हुआ बैठा था, उस लेटे हुए व्यक्ति के पास गया और बोला—'जनाब उठ जाइये।'

वह बोला—'नहीं उठूंगा।'

इतना सुना कि उस व्यक्ति ने पड़े व्यक्ति का गरेबान पकड़ लिया। उसे एक ही झटके में खड़ा कर दिया। तब कुछ और व्यक्ति भी खड़े हो गये और उसके विरोधी बन कर अपना क्रोध प्रदर्शित करने लगे। जिस व्यक्ति के तमाचा लगा था, वह बैठा दिया गया। कुछ और व्यक्ति जो नीचे बैठे हुए थे, वे भी ऊपर बैठ गये। फल यह हुआ कि वह पड़ा हुआ व्यक्ति खड़ा हो गया। उसे जगह नहीं मिली। वह अपनी आंखों में क्रोध भरे, उस मूछें मरोड़ते व्यक्ति को घूरता रहा।

कमला ने कहा—'धन्यवाद, भाई।'

उसने कहा—'नहीं, बहिन। यह मेरा कर्तव्य था। मैं दोषी हूं कि पहिले देखकर भी इतना नहीं देख सका। मैं कायर बना रहा। अब तो यह महाशय कुछ बोलते, तो दो टुकड़े कर देता।'

उस व्यक्ति ने कहा—'आगे देख लूंगा। तुझे समझ लूंगा।'

वह हॅस दिया—'अरे, आगे क्या, तू अभी देखले। बोल, उठ? दो-दो हाथ कर ले। यह समझ ले, कि इस खिड़की के दरवाजे से तुझे बाहर फेंक दूंगा।'

चौधरी ने कहा—'बस खामोश रहो, भाई! तुमने निर्बल की मदद की, इसने उसे बैठने की जगह न देकर भूल की, उसकी सजा भी मिल गयी।' और चौधरी ने उससे कहा—'मेरे पास बैठ जा।'

उसने कहा—'नहीं, नहीं, शुक्रिया। मैं अगले स्टेशन पर उतर जाऊंगा।'

चौधरी ने कहा—'बस, इतनी दूर के लिये पूरी जगह घेर ली थी।' वह बोला—'हां, भाई ! तेरा क्या कसूर, आदमी दो दिन जीने के लिये जाने क्या-क्या कर बैठता है... जमाने भर के पाप समेट लेता है...जन्म भर अन्धा ही बना रहता है .'

२०

कमला का पिता जन्म काल से ही लालची और धन-लोलुप था। परन्तु जो आदतें उसे लग गयी थीं, उन्हें भी नहीं छोड़ सकता था। शराब पीने का शौक उस व्यक्ति को भी देर से था। जब सरकार ने जमींदारा समाप्त किया, उस व्यक्ति के पास कुछ नहीं रहा। वह रात-दिन इसी चिन्ता में लगा रहता था। भाग्य से उसी समय उसका पुराना मित्र सुदर्शनसिंह उसके समक्ष आ गया। सुदर्शन के धन पर उसकी देर से निगाह थी। फलस्वरूप, महत्वाकांक्षी व्यक्ति की इच्छाएं जाग उठीं। वे चंचल बन गयीं। मसूरी की उस रात में जब ठाकुर पुत्री कमला का स्वर सुन कर उसके कमरे में गया, तो तब वापिस लौट कर उसके मन में यह बात एकाएक नहीं आ सकी कि कमला के पास सुदर्शनसिंह गया था ... वह स्वयं ही उसकी पुत्री के रूप का खरीदार बन कर पहुंच गया ...

लेकिन जब सुदर्शनसिंह और ठाकुर का सम्बन्ध स्थापित हो गया, ठाकुर उसकी फैक्टरी का मैनेजर बन गया, तो तब, आये दिन किसी न किसी बात के प्रसंग में सुदर्शनसिंह ठाकुर से अपनी यह इच्छा व्यक्त करता कि वह कमला को बुला ले... कमला को बालिका विद्यालय

का सैक्रेटरी नियुक्त कर दे।

परन्तु अवस्था यह थी, कि उन दिनों ठाकुर को स्वयं कमला के विषय में कोई ज्ञान नहीं था। कमला को जो एक दो पत्र दिये गये, तो उनका भी उत्तर प्राप्त नहीं हुआ। उसीसमय, एकाएक उसने समाचार पत्र में चौधरी रामलखन और कमला का दूर प्रान्त के बाढ़ पीढ़ितों की सहायतार्थ जाने का समाचार पढ़ा। चौधरी रामलखन का वह समाचार प्रायः सभी पत्रों में छपा। चौधरी और कमला के फोटो भी छपे। स्वसुर के साथ पुत्री के उस छपे फोटो और समाचार को पढ़ कर ठाकुर का मन बांसों उछल गया। अवसर की बात कि उसी दिन ठाकुर सुदर्शनसिंह भी वहां आगया। ठाकुर ने उसे अखबार दिखाया। परन्तु उस समाचार को देखते ही वह बोला—'मैंने देख लिया। कल पढ़ लिया था।'

ठाकुर ने देखा कि सुदर्शनसिंह के कहने में उपेक्षा थी। उदासीनता थी। यह उसे अच्छा नहीं लगा। उसने कहा—'चौधरी ने कमला को भी अपनी चेली बना लिया। अपने मार्ग पर घसीट लिया

सुदर्शनसिंह ने कहा—'यह तो समय की बरबादी है। जहां चौधरी गया है। वहां क्या कार्य-कर्ताओं की कमी है।'

किन्तु ठाकुर ने सुदर्शनसिंह की इस बात पर ध्यान नहीं दिया। उसने कहा—'लेकिन यह भी जादू सरीखी बात हुई कि चौधरी के गांव के लोगों और लुगाईयों ने रुपया दिया, जेवर उतार कर दे दिया।'

सुदर्शनसिंह ने कहा—'जब इन्सान भावना के दरिया में बहता है, तो रुकता नहीं है। आदमी जलती हुई भट्टी में भी कूद पड़ता है। तेल के जलते हुए कड़ाहे में अपने को भून देता है...अपने बच्चों को दीवार में चिनवा देता है। सुना नहीं, इस देश में ऐसा हुआ है।'

ठाकुर ने कहा—'ऐसा सभी जगह होता है। आदमी धर्म और आदर्श के लिये अपना सर्वस्व दे देता है।'

सुदर्शनसिंह ने फिर भी उपेक्षा और ईर्षा युक्त भाव में कहा—'कदाचित इस देश में अधिक हुआ ? यहां महलों की रानियां धर्म की रक्षा के लिये तलवार लेकर मैदान में लड़ीं। हजारों-की-हजारों जलती हुई चिता में सो गए। राजपूताने की एक नव-वधु ने अपने पति को धर्म-युद्ध में लड़ने से उदासीन देख, अपना सिर काट कर दासी के हाथ पति के पास भेज दिया था .. अरे, ठाकुर ! इस देश में सदा ही रक्त बहे... सदा बलिदान ही होते रहे ! वह अपने स्वर पर झटका-सा खाकर बोला—'लेकिन फिर भी हुआ क्या ? यह देश सदियों तक दास बना रहा ... आज भी दासता ऊपर नहीं दिखाई देती, तो मन और आत्मा की दासता से क्या इस देश का समाज छूट गया?...न, शोषण आज भी है। आज भी भ्रूण हत्याएं होती हैं। स्वार्थ के लिये आदमी ही आदमी का खून करता है ... झूट फरेब और छल यहां के जन साधारण की खूराक बन गया है...'

ठाकुर ने सांस भर कर कहा—'भाई यह तो इस देश की पुरानी प्रथा है !'

सुदर्शनसिंह ने चंचल बन कर कहा—'जब यह है, तब किसी भी प्रकार के सुधार का नारा लगाना वृथा है। देखते नहीं, कल के सेवक आज राजा बन गये हैं। राज्य की कुर्सियों पर बैठते ही, उनके दिमाग आंधी में उड़ने लगे हैं।'

ठाकुर बोला—'सचमुच, यह कमजोरी है। देश के दुर्दिनों की सूचक है।'

सुदर्शनसिंह ने फिर कहा—'चना-चबेना खाने वाले महलों में बैठकर और सोने चांदी के थालों में खाना खाकर उन्मादी बन गये हैं। ...वे भूल गये हैं कि उनके सिर पर कितना बोझ है। देश रसातल को जा रहा है। राख के ढेर के नीचे आग सुलग रही है। वह किसी दिन भी हवा का रुख पाकर ऊपर आ सकती है। देश को भस्म

कर सकती है, भाई ! उसने कहा—'शासन करने के लिये भी शक्ति चाहिये । बुद्धि चाहिये ।'

ठाकुर ने कहा—'निःसन्देह !'

'तब भला चौधरी का वहां जाना और बहू को भी साथ ले जाना क्या शोभनीय रहा ?' सुदर्शन ने कहा—'वह आदर्श का पुतला अपनी बहू के मन की स्थिति नहीं समझता । वह यह भी नहीं जानता कि उसकी सभी आशाओं पर भगवान ने तुषार डाल दिया है । उस बेचारी कमला को भला जीवन का प्रकाश देखने का कहां अवसर मिला । जब समय आया, तो यों उसका भाग्य फूट गया !'

ठाकुर ने उदास स्वर में कहा—'भाई मैं इसीलिये परेशान हूं । कभी सोचता हूं कि मैं कहीं पागल न बन जाऊं । कमला की मां तो तभी से न शऊर से खाती है, न किसी बात में मन लगाती है ।'

सुदर्शनसिंह ने कहा—'तुम अब भी भूल में हो । चित्र का एक पहलू देखते हो, दूसरा नहीं । कितनी बार कहा कि उसे बुला लो । यहां रखो । मैं तो चाहता हूं कि कमला हमारा प्राइवेट काम सम्भाल ले । उसे पैसा भी अच्छा मिलेगा और उसका मन भी लगेगा । जब उसके मन के अनुरूप काम सौंप दिया जायेगा, तो जरूर, उसे अपना यह जीवन भी पसन्द आयेगा ।'

ठाकुर ने कहा—'वह, वहां से लौटे, तो निश्चय किया जाय ।'

'और देखो, मुझे इस बार असेम्बली की सीट के लिये अवश्य खड़ा होना है । मेरी दृष्टि में इस फैक्टरी का स्वार्थ सर्वोपरि है । वहां जाकर मैं इसकी रक्षा कर सकूंगा ।'

ठाकुर ने कहा—'जैसी इच्छा ।'

सुदर्शनसिंह—'तुम अभी से इलाके में कन्वेसिंग आरम्भ कर दो । उचित समझो तो कुछ लोगों की सहायता भी करते रहो ।'

ठाकुर ने कहा —'ऐसे व्यक्तियों की लिस्ट बनानी होगी, जो हमारे सहायक बन सकें। वोट दे सकें और दूसरों पर अपना प्रभाव डाल सकें।' यह कहते हुए सुदर्शनसिंह उठ खड़ा हुआ। वह बोला —'मुझे आज शहर जाना है। कुछ काम न हो तो चलो। वहां नया कलक्टर बदल कर आया है। मेरा पुराना परिचित है। उसी ने आज शाम को भोजन पर बुलाया है। चाहता मैं था कि उसे बुलाऊं इस फैक्टरी के जंगलों में जानवर खूब मिलते हैं। कभी-कभी शेर भी आ जाता है।'

ठाकुर ने कहा —'सुना है, बघेरे और चीते आ गये हैं। गांव वाले उनका स्वर सुनते हैं।'

सुदर्शनसिंह—'तो तुम भी चलो। फैक्टरी मैनेजर की हैसियत से कलक्टर को दावत देना। फिर उससे अपना स्वार्थ पूरा करना।'

ठाकुर हंस दिया—'इस दुनिया का यही तरीका है।'

दोनों उठ लिये। बाहर कार खड़ी थी, दोनों बैठ कर चल दिये। जब संध्या समय तक वे दोनों शहर पहुंचे तो सूरज डूब चुका था। कार ने कलक्टर के बंगले में प्रवेश किया था कि उसके हार्न की आवाज सुनकर, कलक्टर स्वयं बंगले से बाहर निकल आया। वह सुदर्शनसिंह से हाथ मिलाता हुआ बोला—'आज मिले तुम,...कई वर्ष बाद ?'

सुदर्शनसिंह ने कहा—'क्या पता था कि तुम यहां भी हमारे आफिसर बन कर आओगे।'

कलक्टर हंस दिया—'विश्वास रखो, मैं तुम्हारा आफीसर नहीं बनूंगा।'

तभी सुदर्शनसिंह ने नरेन्द्रसिंह ठाकुर का परिचय दिया और कहा—'फैक्टरी मैनेजर के साथ बचपन के साथी भी हैं।'

ठाकुर नरेन्द्रसिंह ने हाथ मिलाया और कहा—'मैं अपने को

धन्य मानता हूं कि जो दो दोस्तों के बीच में भी आपका दर्शन पाने का अवसर पा गया।'

सुदर्शनसिंह ने कहा—'ये बड़े खुशदिल हैं। पूरे शिकारी।'

कलक्टर ने कहा—'आपसे मिल कर खुशी हुई। मुझे यह देख कर प्रसन्नता हुई कि आप अकेले नहीं आये। अपने मित्र फैक्टरी मैनेजर ठाकुर साहब को भी साथ ले आये।' वह बोला—'किसी समय शिकार का मुझे भी शौक था। एक दो बार शेर का शिकार करने का भी मौका मिला। पर अब तो बहुत दिन हो गये कि किसी जानवर पर गोली चलाने का अवसर भी नहीं मिला। दो जिलों की कलक्टरी ने जीवन ही बदल दिया।'

ठाकुर ने कहा—'मैं आपको शिकार पर चलने की दावत देता हूं। हमारी फैक्टरी पहाड़ की तराई में है। बड़ा लम्बा जंगल है। शेर, चीते और बघेरे अक्सर आ जाते हैं।'

कलक्टर ने कहा—'आपकी यह दावत सिर-माथे। जरूर आऊंगा।'

ठाकुर ने अवसर देखकर कहा—'तो अगले हफ्ते रविवार को?'

कलक्टर ने मेज से डायरी उठायी और देख कर कहा—'हां, मन्जूर! अगले रविवार को। वह दिन खाली है।' वह बोला—'जनाब, आजकल तो तबीयत परेशान रहती है, इन मिनिस्टरों के आने-जाने से! रोज ही कोई-न-कोई आता रहता है। इनके सामने रहना भी इस नौकरी में जरूरी हो जाता है।'

ठाकुर ने चुटकी ली—'हां, साहब! वे अन्नदाता हैं।'

सुदर्शनसिंह ने खुल कर कहा—'कौआ चला हँस की चाल' और वह अपने-आप ही ठहाका मार कर हँस दिया।

कलक्टर के आदेश पर नौकर गिलास और शराब मेज पर रख गया था। जब उसने सुदर्शनसिंह की बात सुनी, तो बोला—'हां, भाई

जमाना ही दूसरा आ गया। जिन्हें कल हमने पकड़ कर जेलों में बन्द किया था, उन्हीं को आज सलाम झुकानी पड़ती है। उनके आदेश भगवान के वाक्यों की तरह माने जाते हैं।'

सुदर्शनसिंह ने शराब के दो पैग एक साथ पी लिये थे। अब वह सिगरेट में कश लगा रहा था। कलक्टर की बात सुनी, तो वह बोला—'यह हालत अच्छी नहीं है, बदलने वाली है। इन कमबख्तों ने हमारी कमर तोड़ दी है। पर कहे देता हूं कि हम इनकी कमर तोड़ देंगे।'

ठाकुर ने कहा--'इनमें भी फूट पड़ गयी है। कई दल हो गये हैं।'

कलक्टर हँस कर बोला—'अरे, छोड़ो, किस दकियानुसी बात को ले बैठे। यह देखो कि अब भी कुछ यार लोग मजे ले रहे हैं...इन्हें उल्लू बना रहे हैं।'

सुदर्शनसिंह ने कहा—'बेशक ! बेशक !'

उस कमरे में शराब का दौर चल रहा था और सिगरेट का धुवां उड़ रहा था। उसी समय की बात है कि कलक्टर की कोठी के द्वार पर एक महिला आई। वह जोर से चीखती हुई बोली—'सरकार ! बाहर निकलो ! मेरी बात सुनो !' किन्तु कलक्टर का अरदली उसे कोठी के अन्दर नहीं घुसने देरहा था। वह उसे फटकार रहाथा। जिसका परिणाम यह हुआ कि वह औरत और अधिक जोर से शोर मचा रही थी। उसका वह शोर उस कमरे में भी पहुंचा कि जो शराब खाना बना था। उस समय कलक्टर अपने साथियों सहित शराब के नशे में था। उसने बाहर आवाज सुनी, तो तुरन्त खड़ा हो गया। कमरे के बाहर आते ही, चीखकर बोला—क्या है....'क्या बदतमीजी है ?'

अर्दली कांप गया। उसे पता था, साहब मेहमानों के साथ बैठा हुआ शराब पी रहा है। उसने तुरन्त आगे बढ़, कांपते हुए स्वर में

कहा—'हुजूर, यह औरत...'

'हां, कौन है, यह औरत ? यहां बुलाओ ।'

हुकम हुआ कि औरत तुरन्त सामने आ गयी। कलक्टर ने देखा कि वह औरत अभी मुश्किल से बीस या पच्चीस वर्ष की आयु से अधिक न होगी। गोरी, सुडौल। उसे देखते ही, कलक्टर ने कहा—'क्या है ? क्यों आई है ?'

वह हाथ जोड़ कर बोली—'हुजूर, मेरा आदमी...'

कलक्टर ने अपने स्वर में और अधिक तेजी लाकर कहा—'हां क्या हुआ तेरे आदमी का ? भाग गया ! तुझे छोड़ गया ?'

औरत ने कहा—'नहीं हजुर, उसे गांव के मुखिया ने इतना मारा कि खाट पर पड़ गया। अब मुझे उसके बचने का भी आसरा नहीं रहा। थाने में रिपोर्ट करने गयी, तो थानेदार मुखिया से रिश्वत खा गया। मुझे फटकार दिया। सिपाही ने थाने से बाहर निकाल दिया।'

कलक्टर ने इतना सुना और ठहाका मार कर हँस दिया। उसने कहा—'वह सिपाही समझदार था। तू खुश होती कि वह तुझे हवालात में बन्द कर देता ! सरकार के सिर पर बोझ बढ़ाता। तुझे खाना दिया जाता !' उसने पूछा—'मुखिया ने क्यों मारा तेरा आदमी ? क्या कसूर किया था ?'

'साहब उसकी नौकरी छोड़ दी थी। कम पैसे देता था।' औरत ने कहा।

कलक्टर ने तेज स्वर में कहा—'तो ठीक किया, उस मुखिया ने ! यहां भी मजदूर पीटा जाता है। गोली से मार दिया जाता है। वह मालिक की मन्शा के खिलाफ हड़ताल करता है और प्रदर्शन करता है। तेरे आदमी ने भी यही किया। बेचारे मुखिया का काम छोड़ कर घर बैठ गया।' कलक्टर ने इतना कहा और अर्दली को आदेश दिया, इसके गांव का और आदमी का नाम लिख लो और इसे विदा कर दो।' यह

कहते हुए वह फिर कमरे में पहुंच गया। वहां जाते ही, उसने सुदर्शनसिंह को सम्बोधित करते हुए कहा—'यह हाल है, इस देश का ... इस नौकरी का ? मैं दो मिनट दोस्तों के पास भी नहीं बैठ सका। मन में तो आया कि उस औरत को ठोकर मार दूं। पर सोचा कि जमाना उलटा आ गया है। जो औरत यहां तक आ सकती है, वह ऊपर भी जा सकती है। बस, मैंने भी उसके गांव का और आदमी का नाम लिख लेने को कह दिया है। यों उसे चरका बता दिया।'

सुदर्शनसिंह हँस दिया—'मानते हैं! पुराने लटके याद हैं।'

कलक्टर ने कहा—'अंग्रेजों के सामने के दांव-पेच आज काम आते हैं। हम भी आदर्श का नारा लगा देते हैं। वैसे, रोज ही उसे शराब के प्याले में डाल कर पी जाते हैं।' इतना सुना कि सभी हँस दिये। कमरा हँसी से गूंज उठा।

उसी समय कलक्टर ने नौकर को खाना लाने का आदेश दिया उस समय उन तीनों पर नशा भरपूर था।

२१

चौधरी रामलखन और कमला को लगभग एक मास उस बाढ़-ग्रस्त क्षेत्र में हो गया था। इतने बीच में कमला ने जिस साहसिकता और अदम्य उत्साह का परिचय दिया, वह सचमुच ही प्रशंसनीय था। स्वय चौधरी रामलखन कमला के लिए इतनी ऊंची धारणा नहीं बना सकता था। नित्य का क्रम था कि चौधरी रामलखन और कमला बाढ़-पीढ़ित क्षेत्रों में जाते और जिस प्रकार का कार्य भी उन्हें सौंपा जाता, वे उसे करते। उन दिनों दोनों के ऊपर यह भार था कि लोगों को अन्न वितरण कराएं तथा चिकित्सा आदि की जिन गृहस्थों को आवश्यकता हो, वह उन्हें उपलब्ध कराने का प्रयत्न करें। एक प्रकार से रामलखन और कमला को उस प्रान्त की सरकार ने अपने सभी कार्यकर्ताओं के कार्य का निरीक्षण करने का कार्य उन दोनों को सौंप दिया था। क्योंकि रामलखन के प्रान्त की सरकार ने उस प्रान्त की सरकार को लिखा था कि चौधरी साहब हमारे प्रान्त के प्रसिद्ध जन-सेवी हैं। ईमानदार हैं। इनके संरक्षण में किया जाने वाला कार्य निश्चित रूप से सफल होगा। इसका परिणाम यह हुआ कि समाज के कार्यकर्ताओं के अतिरिक्त सरकार की ओर से नियुक्त

हजारों सरकारी कर्मचारी भी चौधरी रामलखन की कमान में कार्य कर रहे थे।

किन्तु चौधरी और कमला यहां आदेश करने नहीं पहुंचे थे। वे स्वयं कठोर परिश्रम कर रहे थे। प्रातः से सन्ध्या तक दोनों कार्य में रत रहते। उनका नित्य का नियम था कि प्रातः ही अपने स्थान से चाय पीकर निकलते। वे पहले रोगियों को देखते, फिर भूखों को। जब चौधरी किसी युवा अथवा युवती को बाढ़ का शिकार पाते, तो तब, वह उस सुन्दर शरीर को केवल बचा पाकर, कमला को सम्बोधित करता और कहता—"देखा, बहू ! यह है, इस जीवन का अन्त ! ..भला कितना तुच्छ...कितना हेय !' वह तभी मानो आतुर बन कर कमला को सुनाता – 'तुम्हारा और हमारा भी ऐसा ही अन्त होगा...यह पानी में बह कर मर गया...तो हमारा बिस्तर पर पड़े-पड़े हो जाएगा...'

एक बार जब चौधरी एक युवा नारी की खबर लेने उसके डेरे पर पहुंचा, तो तब, कमला भी साथ थी। वह स्त्री किसी सम्भ्रान्त परिवार की थी। उसका समूचा परिवार बाढ़ का शिकार बन गया था। केवल वही एक बची थी। वह एक पेड़ से अटक कर रह गई थी। बाद में फौज के सिपाहियों ने उसे निकाल लिया था। उस स्त्री के विषय में जो अघट घटना प्रसिद्ध थी, वह यह कि जिस विशाल पेड़ से टकरा कर वह बच गई, तो उसी पेड़ पर दो-तीन काले सर्प भी चिपके हुए थे। सर्प और उस नारी में अधिक अन्तर नहीं था। परन्तु न सर्प उसकी ओर बढ़ा और न वह सर्प की ओर। और वह बराबर तीन दिन तक उस पेड़ से उलझी रही थी। किन्तु जब वह फौज की किश्ती द्वारा बाहर निकाल ली गई, तो मानो उसका प्राण पहले ही चला गया था। केवल उसका शरीर ही, बचा था। निदान, जिस दिन से वह बाढ़ के पानी से निकाली गई, तो तभी से अशक्त थी।

वह बिस्तर पर पड़ी थी। डाक्टर का मत था कि उसके मन पर भय था। वह बोलती भी कम थी। कदाचित कमला ने इतनी सुन्दर नारी अपने जीवनकाल में नहीं देखी थी।

चौधरी नित्य ही उसके पास पहुंचता था। वह कुछ देर उसके पास बैठ, उसे 'बेटी' शब्द से सम्बोधित करता था। कमला का समय भी उस नारी के पास अधिक बीतता।

एक दिन जब चौधरी और कमला उस नारी के कक्ष में पहुंचे, तो देखा कि वह रो रही थी। उसकी आंखें उसके गोरे गालों पर प्रवाहित थीं।

यह देख, कमला ने चौधरी की ओर देखा। कमला ने उस सुन्दरी को लक्ष किया और उसके बहते हुए आंसुओं पर अपना रूमाल रखकर बोली—'आज कोई याद आया होगा...बोल—पति, भाई या माता-पिता ?'

वह नारी अब बोलने लगी थी। स्वस्थ भी हो रही थी।

उसने कहा—'भला यह कैसी विडम्बना है कि सब गये और मुझे छोड़ गए! क्या यह भगवान का मेरे साथ अन्याय नहीं है ?'

उसी समय चौधरी ने कहा—'कमला बेटी, एक दिन तुम भी ऐसे ही रोती थीं। याद है! सभी रोते हैं। अब रोने वाले को कैसे समझाया जाय कि वासना की दलदल में पड़े हुए इन्सान जब माया और मोह के शिकार बनते है, तो 'अपने' से नाता टूटता देख, इसी प्रकार रोते हैं। प्रलाप करते हैं।'

कमला बोली—'पिताजी, इस जगत का यही स्वभाव है।'

पिता ने कहा—'यही दुर्बलता है।'

कमला बोली—'न, पिताजी, इस जगत के जीवन का आधार ही यह है...जैसे आधारभूत सिद्धान्त ही यह! भला रोना क्या बुरा है ? मन भी हलका हो जाता है। जब अपना याद आता है तो किसको

रोना नहीं आता है। इस जगत की यही तो शाश्वत परम्परा है! इस बेचारी का संसार उजड़ गया. सभी कुछ चला गया।'

चौधरी ने कहा—'बेटी, सभी के साथ ऐसा होता है। बस, देखने का अन्तर होता है। मैं तो तुझसे भी कहता हूं कि अब भी तू अपने मन की आंखें खोलकर देख ले। कैसा यह जगत है—कैसी इसकी परम्परा है। तू बलवान बनेगी, तो इस बिटिया को भी समझा सकेगी। डाक्टर का कहना है कि अब यह स्वस्थ है। यहां से जा सकती है। पर मुझे सूझता नहीं कि यह कहां जाएगी?'

उस नारी ने कहा—'बाबा, मैं चली जाऊंगी। मेरे और भी रिश्तेदार हैं।'

कमला ने कहा—'तुम परेशान न बनना। चिन्ता न करना।'

उसने कहा—'जीवन के जिस चौराहे पर मैं आगई हूं, उस पर अब भय नहीं दिखाई देता।'

चौधरी ने जैसे कड़वे भाव में मुस्करा दिया—'जिस घर में तुम थीं, उसी में क्या भय था। सुनता हूं, तुम्हारा निवास स्थान तो नदी तट से बहुत दूर था।' उसने कहा—'बेटी इस जीवन में सभी रास्तों पर संकट है भय है!'

कमला बोली—'पिताजी, इन्हें अभी और यहां रहने दिया जाय। इनके किसी सम्बन्धी को ही यहां बुला लिया जाय।'

किन्तु जब चौधरी और कमला उस नारी के पास से एक और स्थान पर पहुंचे, तो वहां उन लोगों का जमघट था कि जो बाढ़-ग्रस्त होकर दाने-दाने को मोहताज थे। उनमें ही एक परिवार को इङ्गित कर, चौधरी ने कहा—'मुझे बताया गया है कि यह परिवार पहले बड़ा भारी अमीर था। इनके यहां अनाज की खत्तियां पड़ती थीं। लेकिन बाढ़ ने इनका सभी-कुछ नष्ट कर दिया। खत्तियों में पानी भर गया और यह आज दाने-दाने को मोहताज बन गया।' चौधरी

ने कहा—'सुना है कि यह परिवार कई दिन तक शर्म के मारे हाथ नहीं फैला सका। परन्तु जब बच्चे भूख से बिलबिलाने लगे, तो यह भी भिक्षुओं की टोली में मिल गया। यह सूम भी अधिक था। समाज का शोषण करके लाखों के धन का और खत्तियों का मालिक बना था।'

कमला ने चिढ़ कर कहा—'ऐसे व्यक्ति को कुछ न मिलना चाहिए।'

चौधरी ने विनीत बन कर कहा—'न, बेटी! हमारी स्थिति ऐसी नहीं है। हमें न्याय करना चाहिए। क्रूर व्यक्ति में भी भगवान का स्थान होता है।'

कमला चिढ़ गयी—'आप भगवान का बहुत ध्यान करते हैं। पर वह है कहां? न, इस जगत में उसका अस्तित्व भी नहीं दीखता! मैं समझती हूं, पांच तत्वों से निर्मित यह मनुष्य स्वयं ही अपना व्यापार चलाता है।'

इतना सुनते ही चौधरी ने जैसे विस्मय के साथ कमला की ओर देखा। उसने कमला से प्रश्न किया—'भला यह तुमको किसने बताया? तुम्हारे दिमाग में कैसे समा गया? क्या तुम्हारे पिता ने बताया? वह शराबी और विलासी है, जरूर ऐसी भावना रखता होगा।'

कमला ने अपने स्वर पर जोर देकर कहा—'नहीं! नहीं!! यहां आकर मैंने यही देखा है! समझा है!'

'न, बेटी! भगवान यहां भी है। इस स्थान पर आकर मनुष्य को इस बात की सीख मिलती है कि प्रकृति और ईश्वर के समक्ष मनुष्य अन्ततः पराजित है। मनुष्य की शक्ति फिर भी सीमित है। प्रकृति की असीमित शक्ति पर क्या विजय प्राप्त की गई है?'

लेकिन उस दिन जब फौज के सिपाहियों ने कुछ स्थानों से बाढ़

का पानी उतरने पर कुछ ल.शें एकत्र कीं, तो उन कई सौ लाशों के ढेर में बच्चे, बूढ़े, जवान---स्त्री पुरुष सभी थे। उनमें कुछ इतने सुन्दर मुखड़े थे कि मर कर जाने कब के पानी में पड़े सड़कर और फूल कर भी भले लग रहे थे। मानो वे सभी सो रहे थे।

जब अपने स्वसुर के साथ कमला उस स्थान पर गई, तो वह मौत के उस विशाल ढेर को देख, एकाएक चीख पड़ी। यदि चौधरी उसे सम्भाल न लेता, तो निःसन्देह कमला गिर जाती। तभी फौज के एक अफसर ने चौधरी से कहा --'इस देवी को आप यहां क्यों ले आये ? यह न देखने वाला दृश्य है...वीभत्स और क्रूर है !'

चौधरी ने कहा-- 'भाई, सेवक को सभी-कुछ करना चाहिए और देखना चाहिए ?'

कमला बोली—'पिताजी ! तो इतने मर गए...इस मदान्ध बाढ़ ने इतने प्राण ले लिए !'

चौधरी ने कहा—'इतने क्यों ? यह तो एक छोटे से हिस्से की कहानी है ! सभी मरे हुए नहीं प्राप्त हो सकते। कुछ बाढ़ के पानी में बह गए, कुछ दरिया की रेती में दब गए।' वह बोला--'बेटी ! अभी तो तुम केवल मनुष्य जाति की बात सोचती हो। पर जीव-जगत के जानवर जितने मरे हैं, क्या उनकी गणना कर सकती हो ? तुम तो केवल निर्बुद्धि मनुष्य की कहानी सुनती हो और उसी की लाश तथा जीवित मनुष्य की पीड़ा देख पाती हो।'

कमला ने सांस भर कर कहा—'तो सचमुच ही भगवान निर्मम है ?'

चौधरी ने हँस कर कहा—'नहीं दयामय है। उसकी कृपा अपार है। यह दृश्य जो-कुछ देख रही हो, उसकी एक विशेष कृपा का सूचक है। वह बता रहा है, ऐ मनुष्य ! तू अब भी चेत। तेरी लड़-खड़ाती हुई जिन्दगी मेरे लिये तिनका है। तू अब भी अपने शास्वत धर्म

का पालन कर ! सच्चा इन्सान बन ! किन्तु देखती हो, मनुष्य फिर भी दम्भी है। क्रूर है। अविवेकी है। हाड़ मांस का पुतला पत्थर से भी अधिक कठोर है ... यह नारी को ठगता है ... नर को ठगता है...'

कमला सांस भरती हुई बोली --'पिताजी, मैं कुछ नहीं समझ पाती। इस जगत की क्या वास्तविकता है, मैं नहीं देख पाती।'

चौधरी ने अपनी आंखों में अपार स्नेह लेकर कहा—'मैं जानता हूं। आओ, चलें। अब मुर्दे जला दिये जायेंगे। फौज के अफसर का कहना था कि इन्हें पैट्रोल डालकर जलाया जाय। पर मैंने कहा है, नहीं, इन्हें विधिवत लकड़ी की चिता में रख कर फूंका जाय।'

कमला बोली—'आपकी यह भावना है, जितने मरे हैं, क्या सभी जलेंगे। उन्हें चील कौवे खायेंगे।' उसने कहा—'युद्ध-क्षेत्र में लाखों मर जाते हैं, तो क्या उनके संस्कार किये जाते हैं ?'

चौधरी ने अपने डेरे की ओर चलते हुए कहा - 'बेटी, भावना जीवन का प्राण है ... आदर्श है। भावना हीन जीवन तो कोरा लोथड़ा है,—माँस पिण्ड ?' यह कहते हुए चौधरी ने कमला के हाथ पर एक पत्र रखा और कहा, तुम्हारे पिता का पत्र लगता है। बताओ तो क्या लिखा है ?'

कमला ने पत्र ले लिया। लिफाफा खोला और पढ़ा। जब वह पूरे पत्र को पढ़ चुकी, तो उसने चाहा कि पत्र को फाड़ दे अथवा रख ले। किन्तु उसने दोनों बातों में से एक बात भी नहीं की। वह पत्र को हाथ में लिये-लिये चौधरी के साथ डेरे पर आ गयी।

चौधरी ने फिर कहा—'हां, सुनाया नहीं, क्या लिखा है, तुम्हारे पिताने ? वे अच्छे तो हैं ? तुम्हारी माता भी ?'

कमला ने सांस भर कर कहा—'जी, हां, सभी अच्छे हैं। प्रसन्न हैं।'

चौधरी चारपाई पर बैठ गया, वह बोली—'चलो, यह खुशी की

बात । पर यह शूगर फैक्टरी का नाम तो ठाकुर जसवन्तसिंह की फैक्टरी का है। क्या पत्र वहीं से लिखा है ?'

कमला ने कहा—'जी, पत्र वहीं से लिखा है। पिताजी उस फैक्टरी के मैनेजर हो गये हैं। दो हजार रुपया मासिक पाते हैं।'

चौधरी ने कहा—'वाह, वाह ! तो ठाकुर ने खूब हाथ मारा, पुराने दोस्त से काम निकाल लिया। तो पत्र में और क्या लिखा है ?'

कमला ने कहा—'मुझे बुलाया है।'

'क्यों क्या मिलने के लिये ? अथवा '

कमला बोली—'जसवन्तसिंह मुझे भी नौकर रखना चाहता है। मुझे भी बड़ा वेतन देना पसन्द करता है।'

इतना सुना कि चौधरी एकाएक जैसे आसमान से पृथ्वी पर गिर पड़ा। वह तुरन्त ही, कमला की बात पर अपनी सम्मति नहीं दे सका। चौधरी चारपायी से उठ कर बैठ गया और बाहर की तरफ देखने लगा। उस समय कमला की दृष्टि उसी के चेहरे पर थी। उसने देखा कि तभी उसके वृद्ध स्वसुर के मुंह पर पसीना आ गया है। चौधरी के हाथों की मुट्ठी बार-बार बंधती है और खुलती है।

यह देख, कमला ने कहा—आप कुछ परेशान हो गये हैं, पिता जी !'

तो तुरन्त ही, चौधरी ने जैसे अपने को छिपाने की कोशिश करते हुए कहा—'न, न, बेटी ! मैं परेशान क्यों ... मैं ... मैं .'

कमला ने कहा—'मैं जसवन्तसिंह को पहचानती हूं, पिताजी ! उसकी महत्वाकांक्षा भी समझती हूं। मुझे स्वयं दुःख है कि मेरे पिताजी—'

चौधरी ने आतुर बन कर कहा—'अरे, तो तुम्हें क्या कहना है, बेटी ?'

कमला ने अपने स्वर में खिन्नता लेते हुए कहा—'वे लोग जिस

जीवन की बात सोचते हैं, आप उसे जानते हैं ? वे क्या कभी इन्सान की पीड़ा समझ पाये हैं ?'

किन्तु चौधरी इच्छा करके भी नहीं बोल सका। उसके मन में केवल एक बात थी और वह यह कि स्वयं कमला के पिता को ही, वह आस्तीन का सांप समझ रहा था। चौधरी के लिये चिन्ता की बात यह और हुई कि वह सांप स्वयं अपनी बेटी को डसने के लिये अपनी जीभ लपलपा रहा था ..

२२

वह दिन बरबस ही, चौधरी और कमला के लिये विषाद पूर्ण बन गया। कमला ने अनुभव किया कि जैसी दारुण और असहनीय व्यथा चौधरी को उस दिन प्राप्त हुई, वैसी, उन्हें देर से नहीं मिली। कदाचित जब रतनलाल मरा था, तो तभी चौधरी के मुँह पर, मन और आत्मा की पीड़ा व्यक्त हो सकी थी। अन्यथा, चौधरी सदा प्रसन्न रहता। वह क्रोधी व्यक्ति से भी मीठी और सरस बातें करनी पसन्द करता।

कमला ने सहज ही अनुभव कर लिया था कि उसका स्वसुर आज पीड़ित है। परन्तु उस पीड़ा को वह व्यक्त नहीं कर पा रहा है। अथवा उसका स्वसुर इस बात की चेष्टा कर रहा है कि उस दूर प्रान्त के स्थान में कमला को इस बात का भान न हो कि उसी के पिता का पत्र देखकर, उस पत्र की आत्मा का दर्शन कर उसे दुःख हुआ। मानो कमला की दृष्टि में, उसके स्वसुर ने पत्र की आत्मा को नितान्त वीभत्स, करुण और चीत्कारमयी पाया।

निदान, स्वसुर के मन की उसी अवस्था को लक्ष कर, कमला ने अपनी ओर से कुछ नहीं कहा। दिन निकल गया। संध्या समय का

भोजन चौधरी ने किया तो, परन्तु भरपेट नहीं, अन्य दिनों की अपेक्षा आधा ही खाया।

तब कमला ने पूछा—'आज क्या बात है, पिताजी। खाना नहीं खाया ?'

वृद्ध ने कहा—'भूख कम थी, बेटी ? खाया नहीं गया।'

कमला बोली—'आज मैंने यह सब्जी शहर से मँगवायी थी। जानती थी कि आप पसन्द करते हैं।'

चौधरी इतनी बात सुन कर मुसकरा दिया—'बेटी, पसन्द तो आदमी जाने क्या-क्या करता है। सभी कुछ क्या निभ पाता है ?'

कमला ने कहा—'आप ही ने मुझे कहा था कि आदमी की यदि सच्ची लगन हो, तो वह अपनी इच्छा भी पूरी करता है। सब से दुर्बोध भगवान को भी प्राप्त कर लेता है।'

चौधरी थाली से खड़ा हो गया। वह बोला—'हां, कहा तो था। मैंने जीवन भर ऐसा ही अनुभव किया। पर सभी तपस्याएं क्या सार्थक होती हैं। कुछ बीच में ही भ्रष्ट हो जाती हे।'

कमला बोली—'पर आप तो सदा कहते है कि—

कर्मण्येऽवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचनः

चौधरी ने जैसे बरबस ही प्रसन्न बनकर कहा—'हां, हां, बेटी ! भगवान कृष्ण ने यही कहा। पौरुष हीन जीवन क्या कभी स्वीकार किया गया ?'

वहां से चल कर चौधरी अपने बिस्तर पर जाकर पड़ गया। कमला स्वयं भोजन करने बैठ गयी। जब वह अपने सभी कामों से निवृत्त हो गयी, तो उसने स्वसुर की चारपाई के पास आकर देखा कि वह सो गये हैं। खुराटे ले रहे हैं। कमला लौट आई। वहां से कुछ दूर पर उसकी चारपाई थी। उसने अपने तकिये के नीचे से एक और पत्र निकाला और उसके लिफाफे को फाड़ा। वह पत्र कान्त का था।

संध्या समय ही, बाढ़-पीड़ित सहायक संघ के कार्यालय का चपरासी वह पत्र दे गया था। चौधरी उस समय डेरे से बाहर था। कमला कार्य में लगी थी, पत्र लिया और तकिये के नीचे रख दिया गया। वैसे इस बीच में कान्त के कई पत्र आये थे। वे सब कमला द्वारा चौधरी को सुना दिये गये थे।

जब कमला ने उस पत्र को खोल कर पढ़ा, तो बरबस वह पत्र उसके हाथ से छूट गया। देर तक वह कागज का टुकड़ा नीचे जमीन पर पड़ा रहा। जब कमला को अपनी स्थिति का ध्यान आया, तो उसने वह पत्र उठा लिया और पुनः लिफाफे में बन्द कर, तकिये के नीचे रख दिया। उस अवस्था में ही, उसने सांस भर कर कहा—'तो कान्त भी पागल बना है ... वह मुझे भी पागल बना देना चाहता है.. '

और कान्त के पत्र की बात यह थी कि जिस स्थान पर उसका विवाह निश्चित हुआ, वह अभी नहीं होगा। कान्त जल्दी ही घर से दूर चला जायेगा।

कमला निढाल बन कर बिस्तर पर गिर पड़ी और बोली—'जरूर, कान्त ने स्वयं यह विवाह सम्बन्ध तोड़ दिया। आगे बढ़ा दिया।'

'पर क्यों ? किसलिये ?' एकाएक ही कमला ने अपने से प्रश्न किया। वह बोली—'तो क्या कान्त मुझसे ही विवाह करेगा ? वह मुझको ही अपनी पत्नी बनायेगा ?'

कमला बार-बार करवट बदल रही थी। उसके मन में बेचैनी बढ़ रही थी। उसे लगा कि वह सचमुच ही, जीवन की गहराई में डूब गयी है। उसका स्वांस टूट रहा है। प्राण निकल जाने वाला है।'

उस समय रात काफी निकल गयी थी। आस-पास के डेरों में रहने वाले स्वयं-सेवक और अन्य कार्य-कर्ता सो चुके थे। चूंकि वह जंगल था। पहाड़ की ऊंचाई पर वह स्थान स्थित था, इसलिये जंगली

जानवरों से रक्षा पाने के लिये फौज के बन्दूक धारी सिपाही पहरा दे रहे थे। बाहर चांद निकल आया था। पहाड़ की चोटी पर स्थित वह चांद अपूर्व लग रहा था। उसका प्रकाश चारों ओर फैला हुआ था।

उसी समय, कमला ने देखा कि उसके स्वसुर ने जाग कर लाठी उठायी है। वह डेरे से बाहर चल दिये हैं। इतना देख, कमला स्वयं भी उठ बैठी। उसने डेरे के द्वार पर खड़े होकर देखा कि स्वसुर वहां से आगे बढ़ एक पथरीली शिला पर जाकर बैठे हैं। निदान, कमला स्वयं उसी ओर चल पड़ी। जब वह वहां पहुंची तो देखती है कि चौधरी रामलखन की आंखों में आंसू हैं और वह कह रहे हैं—'मेरी तपस्या नष्ट हो गयी। जब बाप ही बेटी का अपकार करने पर तुला है, तो भला मैं क्या कर सकता हूं?'

उस समय चौधरी का मुंह चांद की ओर उठा था। उसके सिर के श्वेत बाल और श्वेत दाढ़ी को देख लगता था कि जैसे उस विशाल वन का कोई ऋषि उस रात के समय अपनी तपस्या से उठकर उस पथरीली शिला पर आ बैठा था। वह विह्वल मानव तब सचमुच ही, एक श्वेत सन्यासी के रूप में वहां बैठा दीखता था।

इसके विपरीत कमला जिस धीमी चाल से चलकर वहां तक पहुंची, तो यह भी चौधरी के मन की व्यथा को प्रकट करती थी कि वह कमला के आने की आहट तनिक भी नहीं पा सका। यद्यपि उसी समय एक जंगली जानवर जो कदाचित गीदड़ था, चौधरी से कुछ ही दूर पर आकर खड़ा हुआ और वह उसे क्षण भर निहार फिर जंगल की ओट में छिप गया। उस समय कमला ने चाहा कि वह अपने उस पिता को टंकोर दे। वह उसकी समाधि को भंग कर दे। किन्तु उस समय वह भी ऐसा साहस नहीं कर सकी।

तभी चौधरी ने कहा—'पुत्र गया, तो पुत्रवधू भी चली जाएगी ?

इस प्रकार क्या यह कमला रुकेगी ? इसीलिए मैं इस कमला को लाया ! इसी के लिए मैं यहां आया ! मैं चाहता था कि यह कमला सेवा का अर्थ समझे। जन-कार्य में ही अपने को लगाए। लेकिन...हां...'

उसी समय, कमला ने आगे बढ़कर कहा—'पिताजी, आप...'

इतना सुनते ही, चौधरी एकाएक बच्चे की तरह रो पड़ा। वह बोला—'हां, बेटी ! मैं बड़ा दुर्भागी हूं। मैंने बड़ी याचना की थी अपने रतन को अच्छा आदमी बनाने की ! वह बना भी। मेरे दिखाए गए मार्ग पर चला भी। परन्तु भगवान ने उसे उठा लिया। अब मैं तुझे लेकर इस दूर प्रान्त के वीरान पथ पर आ पड़ा, तो देखता हूं कि तू भी...हां, तू भी मेरे पास से जाना चाहती है बेटी !'

कमला स्वसुर के चरणों में बैठ गई और बोली—'आप ऐसी शंका न करें, पिताजी ! मुझ पर विश्वास करें।'

वृद्ध ने तब अत्यन्त कातर हुए स्वर में कहा—'बेटी, मैं विश्वास इसलिए करता हूं कि तेरा ही स्वयं तेरा पिता शत्रु बन रहा है। वह तुझे बुला रहा है। मैं समझता हूं ठाकुर सुदर्शनसिंह ने तुझे प्राप्त करने के लिए यह दस्यु रूप धारण किया है।'

कमला ने कहा—'पिताजी, मुझे भी इसका पता है।'

'और तुम्हें इस बात का भी पता है कि जसवन्तसिंह पैसा पाकर तुम सरीखी जाने कितनी नारियों को भ्रष्ट कर चुका है। वह द्वार-द्वार फिरने वाला कुत्ता बना है।'

कमला ने अत्यन्त रुक्ष भाव में कहा—'हां, हां, मुझे इस बात का भी पता है, पिताजी !'

किन्तु इतना सुनकर भी चौधरी ने कहा—'बेटी, मैं सदा ही मानता आया हूं कि मेरी बात व्यवहारिक नहीं। परन्तु मैं क्या करूं इससे निचले स्वर की बात मैं नहीं कर सकता। मुझे नहीं शोभता।

अपने रतन की बहू को पाकर मैं ऐसी कल्पना नहीं कर सकता कि वह बहू वासना की सडांद में डूब जाये ... वह गंगा के जल को छोड़, किसी गन्दे पतनाले के नीचे खड़ी हो जाये .'

कमला ने कहा—'देखिये, आपकी आंखों में अब भी आंसू हैं। आप विह्वल हैं। उठिये।'

चौधरी ने अपनी आंखें पोंछ लीं और कहा—'देखती हो, प्रकृति के इस विराट सौन्दर्य में कैसी शांति है। कैसा तेज है। मैं चाहता हूं कि तुम भी ऐसी ही तेजोमयी बनो। प्रफुल्ल बनो। आत्मा की चेतना का दर्शन करो।'

उस समय स्वयं कमला की आंखों में आंसू आ गये। वह उसके गालों पर निकल आये। वह चौधरी को नहीं दिखायी दिये। परन्तु कमला ने अत्यन्त आतुर बन कर अपनी वे भरी आंखें चौधरी के पैरों पर रख दीं, तो वह चौंक गया। उसने तुरन्त ही, कमला को ऊपर उठा लिया। वह उसकी उन आंखों पर अपने हाथ की गरम हथेली रखता हुआ बोला—'मेरी बेटी ... मेरी बहू !'

कमला ने रोते हुए कहा—'पिताजी, आप मेरी रक्षा करें।'

चौधरी ने कहा—'तेरी रक्षा तो भगवान करेगा। वह अवश्य ही तेरे मन की वाणी सुनेगा।' वह बोला—'तू कहती है कि भगवान नहीं। देख तो, इस रात के प्रहर में, कैसी शांति है। इस विशाल जगत में कैसी अपूर्वता है। लगता है कि भगवान मुसकरा रहा है। अपनी कला-कृति पर स्वयं ही हँस रहा है।'

दोनों उठ लिये और डेरे की ओर चल दिये। जब वह दोनों डेरे के द्वार पर पहुंचे, तो पहरा देता हुआ सन्तरी वहां आ गया था। वह देख कर बोला—'बाबाजी, इस रात में आप पहाड़ पर गये थे ? वहां शेर लगता है। इन देवीजी को भी ले गये थे ?'

बाबा मुसकरा दिया—'भाई, शेर मुझे खायेगा, तो उसका पेट

भी नहीं भरेगा ।'

कमला अपने बिस्तर पर पड़ चुकी थी। उसके मन में बात थी कि वह स्वसुर को कान्त के पत्र की बात कह दे । परन्तु उस समय वह मौन रह गयी । चौधरी भी अपने बिस्तर पर पड़ गया । कुछ देर में दोनों सो गये ।

प्रातः दोनों समय पर उठ गये। जब वह अपने नित्य कर्म से निवृत्त हुए, तो चौधरी ने कमला को सुनाकर कहा—'अब हमारा यहां काम नहीं रहा । बाढ़ का पानी उतर गया। बहुत से लोग घरों को लौट गये । जो शेष काम है, वह सरकार के आदमी कर रहे हैं।'

कमला ने बात सुनी और मत नहीं दिया ।

चौधरी ने कहा—'हमें यहां दो मास हो गये। हम मन और शरीर दोनों से गांव से दूर हो गये ।'

उसी समय कमला बोली—'कल संध्या समय कान्त का पत्र आया था। उसका विवाह स्थगित हो गया ।'

चौधरी ने इस बात को सुन कर तनिक भी असमञ्जस नहीं दिखाया । वह मौन रह गया ।

कमला फिर बोली—'कान्त कहीं दूर जा रहा है ।'

चौधरी ने कहा—'लगता है कि कान्त अपनी दिशा बना रहा है। पथ खोज रहा है ।'

कमला बोली—'अभी उसका कोई लक्ष नहीं है। पिता के समान पैसा उपार्जित करना वह भी पसन्द करता है ।'

चौधरी ने हँस कर कहा—'तो क्या यह बुरा है ? इस दुनिया में यह काम सभी को पसन्द आता है ।'

कमला ने रूखे भाव में कहा—'इस पैसे ने आदमी को तोड़ दिया है। याचक बना दिया है ।'

चौधरी ने इतनी बात सुनी और जैसे कुछ समझाने के भाव में

कमला को देखते हुए कहा—'यह जगत भौतिक तत्वों से भरा है, बहू ! सभी को भोग के साधन चाहियें। कान्त क्या जीवन से ऊब गया है। अभी तो वह जीवन के किनारे आकर खड़ा हुआ है। उसके मन में क्या डोलता है, मुझे पता है। मैंने उसे समझा है।'

कमला ने पूछा—'वह क्या, पिताजी ?'

पिता ने कहा—'कान्त तुमको प्राप्त करना चाहता था। क्यों, ठीक न था ? बताओ, मैंने गलत तो नहीं समझा ?'

कमला ने इतना सुना और बरबस अपना सिर झुका दिया।

चौधरी ने कहा—'लेकिन पुरुष के समान स्त्री प्रायः निर्लज नहीं बन पाती। इसलिये कान्त की इच्छा पूर्ण नहीं हो सकी। लोक-लाज की भावना तुम्हारे रास्ते में खड़ी रही।'

कमला फिर भी मौन थी। सिर झुकाये हुये थी।

चौधरी ने जल्दी से कहा—'आखिर प्रकृति-प्रदत्त यह शरीर अपनी कुछ कामनायें रखता है। उन्हें भोगना चाहता है। वही तुम भी। भला तुम्हारा क्या दोष ! यौवन का वैधव्य भला श्राप नहीं क्या ? सो मैंने तो तुमसे पहिले भीकहा। मुझे पता है कि कान्त तुम्हें बराबर पत्र लिखता है। वह अब भी तुम्हारे प्रति अपने मन में इच्छा रखता है। सो, तुम जानो बहू ? अब तुम अपना रास्ता बनाओ। मैंने तुम्हें यहां लाकर समझ लिया कि वह मार्ग तुम्हारे लिये प्राप्य नहीं ... तुम्हें सुगम नहीं ! सामान बांध लेना। कल यहां से चल देंगे। हम जल्दी ही घर पहुंच जायेंगे।'

२३

यह एक अजीब बात थी कि कमला का स्वसुर अपनी विधवा बहू को समुद्र के जिस झंझावात से दूर ले जाना चाहता था, उसे शांति और सुख के स्थान में बैठाना पसन्द करता था, स्वयं कमला का पिता पुत्री को उसी समुद्र के कोलाहल तथा गहन जल में डुबो देना चाहता था। ठाकुर को जब इस बात का पता चला कि उसकी पुत्री गांव वापिस आ गयी है, तो वह उसे फिर अपने पास बुलाने के लिये चंचल हो उठा। उन दिनों सुदर्शनसिंह बहुत ऊंचाई पर उड़ रहा था। उसके यहां आये दिन प्रान्त तथा केन्द्र के मन्त्री-गण आते। उन्हें दावतें दी जातीं। उन सभी कार्यों में कमला का पिता अपना प्रमुख पार्ट अदा करता। सुदर्शन सिंह के पास जिस द्रुतगति से पैसा आ रहा था, उसी प्रकार तीव्रता के साथ जा भी रहा था। इसलिये जीवन की उस तेज धारा में बहते हुए सुदर्शनसिंह ने जब समाचार पत्रों द्वारा यह समाचार पढ़ा कि चौधरी रामलखन और कमला का सेवा - क्षेत्र से लौटने पर न केवल जिले के ग्रामवासियों द्वारा, अपितु प्रान्त के मन्त्रियों द्वारा अपूर्व स्वागत किया गया, स्वसुर और बहू की भूरि-भूरि प्रशंसा की गयी, तो निःसन्देह, उस महत्वाकांक्षी व्यक्ति की छाती पर जैसे जोर का घूँसा पड़ गया।

सुदर्शनसिंह को अब कदापि प्रिय नहीं लग रहा था कि रामलखन सरीखा सामान्य व्यक्ति उससे अधिक यश का भागीदार बने सचमुच वह ईर्षालु व्यक्ति रामलखन का पतन चाहता था और स्वयं यश प्राप्त करने की इच्छा लिये था।

नि न, अपनी उस इच्छा के साथ ही, वह कमला को अपनी पत्नी बनाने के लिये तत्पर था। यद्यपि वह ठाकुर से कमला को अपनी सेक्रेटरी बनाने की बात कहता था। लेकिन, कमला सरीखी सुन्दर और शिक्षित नारी को पाकर न केवल वह वासना की प्यास बुझानी चाहता था, वह उसके द्वारा अपना मार्ग प्रशस्त करने की बात भी सोचता था।

फलस्वरूप, जब चौधरी रामलखन और कमला की चर्चा पत्रों में एक बार फिर जोर से चली, उनके ऊपर अग्रलेख तक लिखे गये, तो अपने मन की उसी दुर्भावना से प्लावित बन, सुदर्शनसिंह ने एक दिन अत्यन्त आतुर हो कर ठाकुर से कहा—'आज तुम मुझे बताओ, तुम्हारे मन में क्या है? क्या निश्चय ही, तुम्हें कमला को नहीं बुलाना? मैं तुमसे आज यह कहना भी पसन्द करता हूं कि अपने मन की साधना को पूर्ण करने के लिये मैं बड़े-से-बड़ा त्याग कर सकता हूं। तुमने तो समझ लिया है कि मैं देश में और अपने प्रान्त में प्रमुख स्थान पाना चाहता हूं। मेरा यह विश्वास है, अपने मन की यह इच्छा मैं तुमसे और कमला से ही पूरी कर सकता हूं। तुम यदि चाहो, तो मैं कमला के नाम अपनी सम्पत्ति का बड़ा भाग लिख सकता हूं। समाज में उसे अपनी पत्नी घोषित कर सकता हूं।'

ठाकुर ने इतना सुना, तो एकाएक उत्तर नहीं दिया। वह मौन बना रहा। यह निश्चित था कि सुदर्शनसिंह के पैसे ने और वैभव ने उस ठाकुर का सम्मान नष्ट कर दिया था। उसकी आत्मा बिक चुकी थी। उसने जिन्दगी के जिस नये अध्याय को पढ़ना आरम्भ

सुदर्शनसिंह ने कहा— नहीं ! आदमी भेज दें । पत्र में लिख दो, खाना वहां खाओ, तो पानी यहां आकर पीओ। तुम्हारी मां बीमार हैं । वह तभी आएगी । मैं तुम्हें फैक्टरी के लिए नयी मशीन लाने विलायत भेजने की बात सोचता हूं। तुम्हें मालूम है न, मैं एक कपड़ा मिल खोलने की स्कीम बना चुका हूं। इस उद्देश्य से तुम्हें कई देशों में जाना है . लंकाशायर के कारखानों का भी अध्ययन करना है। तुम्हारे सिर पर मैंने बड़ा बोझ डाल रखा है। मैंने इसी मास तुम्हारा एक हजार रुपया और वेतन बढ़ा दिया। एलाउन्स भी दूना कर दिया। मैं चाहता हूं कि चुनाव-आन्दोलन का समय आने से पूर्व, तुम योरोप से लौट आओ। कमला आजाये, तो कुछ काम मैं उसके सुपुर्द करूंगा। देखते हो, मेरे दिमाग में कितनी स्कीमें हैं। तुम मुझे अवसर दो, तो मैं वह करिश्मा दिखाऊं कि दांत तले उंगली दबा लो। मुझे इस एक वर्ष में ही एक करोड़ रुपया प्राप्त करना है। मैंने यह भी निश्चय किया है कि जब कमला हम दोनों के मध्य में होगी, तो तुम्हारा भी इस विस्तृत व्यापार में हिस्सा कर दिया जावेगा। क्योंकि अन्तर तो कुछ रहेगा नहीं, तो क्यों न कानूनन भी उस अधिकार को स्वीकार कर लिया जाय।'

इतनी देर में ठाकुर अनेक प्रकार की बातें सोच चुका था। उसके मुंह में जिस प्रकार का पानी आ रहा था, निश्चय ही, वह उसे थूक देने के लिए तैयार नहीं था। उसी समय उसके मन में बात आई कि जब उसकी कमला दिन के उजियारे में भी रास्ता नहीं देख पाती, तो क्यों न, उसकी साधना पूरी की जाय? उसकी दृष्टि में सुदर्शनसिंह अभी अधिक आयु का नहीं था। वह पूरी तरह अभी चालीस वर्ष का भी नहीं हुआ था। शरीर से सुन्दर, स्वस्थ। और जिस प्रकार की बातें ठाकुर ने सुनीं, उन्हें टाल देना, उसने किसी प्रकार भी हितकर नहीं समझा। यह तो उसकी पुत्री के भाग्योदय

किया, वह मानो अकल्पनीय था और अभूतपूर्व था। यद्यपि ठाकुर ने स्वयं भी कभी गरीबी और दीनता का पाठ नहीं पढ़ा, परन्तु सुदर्शनसिंह का वैभव उसके लिये निःसन्देह दर्शनीय था। उस समय ठाकुर के दोनों हाथों में लड्डू थे। वह पैसा प्राप्त कर रहा था। और अपेक्षाकृत सम्मान भी पा रहा था। जिन व्यक्तियों से वह पहिले भेंट नहीं कर सकता था, अब उनसे सुगमता के साथ सम्पर्क स्थापित हो रहा था।

निदान, जब सुदर्शनसिंह की बात सुनकर ठाकुर मौन बना रहा, तो तभी उससे फिर कहा गया 'मित्र मैं चाहता हूं कि हम दोनों का सम्बन्ध अटूट रहे। यह विच्छिन्न न हो पाये। पहाड़ की चट्टान की तरह दृढ़तर हो जाये। अब तक हम दोनों समाज के नाते से बंधे थे, लेकिन अब आत्मा के साथ भी बंध जाना पसन्द करेंगे। सुदर्शनसिंह कहने लगा—'देखते हो, वह बूढ़ा खूसट रामलखन, तुम्हारी पुत्री को जाने कहां-कहां लिये फिरता है। वह उस बेचारी को यौवन की भरी दोपहरी में योग की साधना बताना चाहता है। उस बूढ़े का दिमाग बिगड़ गया। सोने को लोहा बनाना चाहता है। तुम कमला को एक बार बुलाओ तो?'

ठाकुर ने कहा—'कमला के मन पर स्वसुर की बात का प्रभाव है।'

सुदर्शनसिंह ने मेज पर हाथ मार कर कहा—'नहीं, नहीं, यह तुमने गलत समझा है!' वह बोला—'तुम उसके पिता हो न, तो वास्तविकता नहीं देख पाते। तुम पुत्री के मन की बात नहीं समझ सकते। पर मैंने मसूरी में देखा कि कमला के मन में उसके जीवन की इच्छाएं हिलोरें ले रही हैं। उसके मन का समुद्र उसे झकझोरे दे रहा है। तुम उसे बचाओ। उसकी रक्षा करो। उसके जीवन को बरबाद न होने दो, भाई।'

ठाकुर ने कहा—'मैं उसे बुलाने का प्रयत्न करूंगा। पत्र दूंगा।'

का प्रश्न था। वह भी पिता था। दुर्बल था। निदान, वह आंख मूंद कर कमला को सुदर्शनसिंह के हाथों में देने के लिए तैयार हो गया। उसे यह जानकर बरबस ही, हर्ष प्राप्त हुआ कि अब उसकी कमला रानी बनेगी...इतने बड़े वैभव की स्वामिनी...।

सुदर्शनसिंह ने कहा—'क्यों, क्या सोच रहे हो? मुझे स्पष्ट बताओ! देखते हो, मेरी पत्नी के सन्तान नहीं। वह रोगी रहती है। अब उसकी भी यह इच्छा है कि मैं दूसरा विवाह कर लूं। तुम मेरे मित्र हो, तो तुम्हें पहले अवसर देता हूं। मुझे कमला सरीखी पत्नी की दरकार है। अन्यथा, पत्नी तो मैं बहुतेरी प्राप्त कर सकता हूं। मैं कमला के वैधव्य को देखकर स्वयं भी दुःखी हूं। उसकी सहायता करना अपना कर्तव्य मानता हूं। चाहता हूं, कुंए की मिट्टी कुंए में लगे। जब तुम मेरे कारबार के निरीक्षक हो, तुम्हीं पैसा उपार्जित कर रहे हो, तो वह तुम्हारी पुत्री को ही प्राप्त हो। बाहर का काम तुमने सम्भाल लिया है, घर का कमला सम्भाल ले; तब मुझे पूर्ण रूप से छुट्टी हो। मेरी चिन्ता दूर हो।'

ठाकुर ने अत्यन्त आतुर बनकर कहा—'मुझे स्वीकार है।'

'तो आज ही आदमी भेज दो। इस काम में देर न करो। मेरी पत्नी की इच्छा है कि यह कार्य उसके हाथों पूर्ण हो। तुम तो देखते हो कि वह देर से रोगी है। सांस का रोग उसे ऐसा लगा है कि कभी भी उसका दम तोड़ सकता है। उसे हमसे छीन सकता है।' सुदर्शनसिंह खड़ा हो गया।

ठाकुर भी खड़ा हो गया। उसने कहा—'आज आदमी जाएगा कमला को लेने के लिए!'

और उन्हीं दिनों कि जब सुदर्शनसिंह कमला को प्राप्त करने की बात अपने मन में तेजी से पा रहा था, चौधरी रामलखन का पतन देखने की बात भी सोच रहा था, तभी की बात है कि दूर प्रान्त से

लौटकर, फिर गांव में आकर, जब कमला ने एक दिन अवसर पाया, तो कान्त को लक्ष करके कहा—'आज बताओ तुम कि क्या है, तुम्हारे मन में ? क्या सचमुच ही तुम मेरा अन्त चाहते हो...बताओ, मुझे मारना पसन्द करते हो तुम ?'

कान्त ने इतना सुना तो जैसे वह खोया-खोया कमला की ओर देखता रह गया।

कमला ने फिर कहा—'तुम्हारा विवाह क्यों स्थगित हुआ ? मैं इस रहस्य को जानना चाहती हूं। देखते हो, तुम्हारे नाम के साथ मेरी कितनी चर्चा हो रही है। समाज की यह जड़ता क्या नयी है...आदि युग से चली आई है। बताओ, तुमने क्या समझा है।'

कान्त ने कहा—'मैं उसे समझता हूं। समाज के मन की निर्बलता भी जानता हूं।'

कमला ने कहा—'पर तुम समझकर भी नहीं देखते कि मैं कितनी कच्ची नींव पर खड़ी हूं।'

कान्त उस समय गम्भीर था। वह खड़ा हुआ ऊपर के आसमान की ओर देख रहा था। कमला ने जिस उद्वेग के साथ अपनी बात कही, तो वह जैसे स्वयं ही, उसकी गहराई में डूब चुका था।

कमला ने फिर कहा—'क्यों बोलोगे नहीं। कुछ नहीं कहोगे ? दिखता है कि समाज के अन्य लोगों के साथ तुम भी मेरे शत्रु बनोगे !'

इतना सुना कि कान्त ने अपने मन पर झटका-सा खाया और निरे वेदनापूर्ण स्वर में कहा—'अच्छा, भाभी, अब मैं जाता हूं। विश्वास करो, अब मैं यहां नहीं आऊंगा। मैं इस घर की ड्योढ़ी पर पैर नहीं रखूंगा।'

कमला ने जैसे झुंझलाकर कहा—'रोग का यह निदान या उपचार नहीं है, कान्त बाबू ! तुम अपना विवाह करो। मुझे समाज को

अपना मुंह दिखाने दो।'

कान्त ने कहा—'यह तो मेरे अपने स्वार्थ की बात है। बस, इतना कहे जाता हूं कि मैं तुम्हारे रास्ते में नहीं आऊंगा।' और तभी वह वहां से चल दिया। चला गया। कमला देर तक उसी कमरे के द्वार पर खड़ी रही। वह जैसे अपने आप में खो गई। मूढ़ भी बन गयी। वह वहां से कमरे के अन्दर चली गई और कटी डाल की तरह बिस्तर पर गिर पड़ी। उस अवस्था में कमला जैसे मछली की तरह छटपटा गई। जब वह देर तक उसी अवस्था में पड़ी रही, तो एकाएक बोली—'यह कान्त मेरे साथ अपने को भी बर्बाद कर देगा... जरूर, यह उस लड़की से विवाह नहीं करेगा। मैं जितना कह सकती थी, आज कह गई। कल ताई ने मुझसे यही तो कहा था कि कान्त स्वयं विवाह टाल रहा है। अपने पिता को भी नाराज कर चुका है। इस कान्त ने विवाह के नाम पर घर में विद्रोह पैदा कर दिया है। और ताई ने इस कमरे में बैठकर वह सब कहा, जो उसे नहीं कहना था। उसने यहां तक कह दिया कि कान्त तेरे कारण ही विवाह से मुंह मोड़ रहा है...तुझसे भी अधिक सुन्दर लड़की छोड़ रहा है... बड़े घर से सम्बन्ध तोड़ देना चाहता है...कान्त तेरे पाश में बंधा है। उसे छोड़ दे। मुक्त कर दे। तू खानदान की प्रतिष्ठा को कुँए में न डाल दे।

उस समय, जब कमला की ताई ने इतनी बात कही, तो तब कमला की आंखों में आंसू थे। वह मूक थी। बात यहां तक बढ़ सकती है, इसकी वह कल्पना भी नहीं कर सकती थी। कान्त को उसने निकट से अवश्य देखा, अपना आत्मीय भी समझा, परन्तु वही कान्त इस प्रकार उसकी सीमा में आकर खो जाएगा, इसका उसे आभास भी नहीं था। निदान, उसने ताई से कहा—'विश्वास रखो, मैं कान्त बाबू को अपनी सीमा में नहीं बांधूगी। मैं इस खानदान की प्रतिष्ठा पर

पसन्द की है।'

कमला ने कहा—'ताई, तुम क्या मेरी बात का यह भी अर्थ लगाओगी ! मैं कह चुकी हूं कि मेरे द्वारा तुम्हारे घर का कोई अहित न होगा। पर जब कान्त बाबू मेरे प्रति अनुराग रखते हैं, तो क्या मुझसे उन्हें दुत्कारा जाएगा ? न, ताई। मैं पत्थर नहीं हूं। हाड़-मांस की हूं। प्यार का जवाब मैं प्यार से ही दे सकती हूं। मैं यदि कान्त बाबू को देखना बन्द कर दूंगी, तो इसके यह अर्थ कदापि नहीं कि मैं उन्हें अपने मन से भी उतार दूंगी ? न, वह मेरे सदा ही निकट रहेंगे। भला, क्या मैं इतना भी अधिकार नहीं रखती ? तुम तो मां हो ! ममतामयी हो, तो क्या मुझसे यह कहने आई हो कि मैं कान्तबाबू को अपनी आंखों से उतार दूं...दिल के पर्दे से मिटा दूं ? न, ताई ! इतना मैं नहीं कर सकती। कान्तबाबू की सद्भावना, उनका प्रेम, अपने प्रति उनकी अनुरक्ति मुझे सदा याद रहेगी। वह जहां रहेंगे, मेरे लिए स्मरणीय होंगे। मैं भूल नहीं पाती कि जब मैं विधवा हुई, तो इस भरे गाँव में और भरे विश्व में एक कान्तबाबू ही थे कि जिन्होंने मेरे आंसुओं में अपने आंसू मिलाये... मेरी पीड़ा में अपने मन की पीड़ा सन्निहित की। उन्होंने मुझसे सदा कहा, मैं तुम्हारा हूं, भाभी ! और ताई, यदि तुम्हारी यह बात सत्य हो कि कान्तबाबू मझे पाना चाहते हैं, तो सचमुच वह मेरे लिए अधिक आदरणीय हैं। वह मुझे पीड़ित और अभावमयी देखकर ही, एक अक्षत और मुझसे अधिक सुन्दर, सुशिक्षित तथा सम्पन्न पिता की पुत्री से सम्बन्ध करने की बात नहीं सोचते ! भला सोचो तो, यह कितनी बड़ी बात है ! क्या यह कान्तबाबू का मेरे प्रति बलिदान नहीं...न्याय नहीं है ? यह उनकी उदारता और परम श्रेष्ठता की द्योतक नहीं है ?'

ताई ने सांस भरी और कहा—'मैं इसे समझती हूं, बहू !

आघात न आने दूंगी ।'

ताई बोली—'आज सभी इस समस्या में डूबे हैं। क्या तेरे स्वसुर ने तुझसे कुछ नहीं कहा ? तेरे ताऊ ने उन्हें भी पत्र लिखा था। बता दिया था कि कमला यदि चाहे तो इस घर की नौका डूबने से बच सकती है...नौका मंझधार में फंस गई है ।'

कमला ने अपनी रोती हुई आंखों से ताई की ओर देखा। उसने ताई के पैर पकड़ कर कहा—'तुम मुझे पानी में उतार कर, डुबा कर अपने खानदान की नौका किनारे पर लगा सकती हो, ताई !'

ताई ने कहा—'न, बहू ! हम तुझे मारना नहीं चाहते। तेरा भी उद्धार चाहते हैं। हम इसमें तेरा दोष भी नहीं समझते। तुम दोनों एक उम्र के हो। पढ़े-लिखे हो। प्रेम हो गया है। भाभी देवर का नाता ही ऐसा है। कान्त जरूर इस बात को सोचता है कि भाभी का जीवन बिगड़ गया.. वह नई बहू पाकर गृहस्थी बनेगा, तो तेरा यह नया जीवन उसकी आंखों के सामने ही धू-धू करती हुई आग में जलेगा...'

एकाएक, कमला के मुंह से निकल पड़ा—'ताई, तुम जब इतना सोचती हो, तो फिर मुझसे क्या कहने चली हो ! भला मैं कान्तबाबू से क्या कहूं ?'

ताई का जैसे माथा ठनक गया। उसकी छाती धड़कने लगी। अब तक उसे भरोसा था कि कमला के मन में कोई बात नहीं। परन्तु जब उसने स्पष्ट और दो टूक बात कही, तो जैसे सचमुच ही उस कमला ने ताई की छाती पर घूंसा मार दिया। उसका मस्तिष्क झनझना गया। आंखों में अन्धेरा छा गया। उसने आहत स्वर में कहा—'तो मैं समझी बहू, तू ही कान्त को पकड़े बैठी है। अब तक मैं सोचती थी कि वही इस दरवाजे पर आता है। पर नहीं, तू स्वयं ही उसे बुलाती है। तूने मन से ही इस घर की लाज खो देनी

पर मैं तो अपने स्वार्थ की बात कहती हूं। मैं उसी को बड़ा मानती हूं।'

कमला बोली—'जब इस दुनिया में सभी अपना स्वार्थ देखते हैं' तो मैं भी अपना स्वार्थ क्यों न देखूं, भला कैसी बात है! इतना अधिकार तो मुझे भी है!'

उसी समय रामकली भी वहां आ गई। वह बोली—'बहू! बात अधिक न बढ़ा। तू अपने स्वसुर का काम देख और नाम देख!'

कमला ने कहा—'मैं सभी-कुछ देखती हूं अम्मा! पर मुझे कोई नहीं देखता।' यह कहते हुए कमला का स्वर अवरुद्ध बन गया। उससे आगे कुछ नहीं कहा गया।

रामकली ने कहा—'तो तू अपना मन क्यों हलका करती है। तुझे रोना क्यों आता है?'

कमला ने उसी स्वर में कहा—'अम्मा, आज मुझे सभी घेर रहे हैं। भी अपना स्वार्थ पूरा करना चाहते हैं। भला मेरा स्वार्थ भी कोई देखता है? यह ताई...'

ताई ने कहा—'तो बहू! तू बता दे, क्या चाहती है?'

कमला ने कहा—'मैं कुछ नहीं चाहती। मैं मरना चाहती हूं। मैं अपने को दुर्भागी मानती हूं। तुम भी मुझे इस घर का श्राप और पाप मानती हो, यह भी समझती हूं।'

रामकली ने तुरन्त कहा—'न, न, मेरी बहू! तू ऐसा न कह! ऐसा मत सोच! देख, यह घर तो तुझी से खुला है। तेरी ओर देखता है।'

ताई ने रामकली की ओर देखा और सांस भर कर कहा—'अच्छा रामकली! मैंने बहुत कुछ कहा, बहू से भी बहुत कुछ सुना। मैं हार गयी। तेरे जेठ से कह दूंगी, इस घर की नाव बीच भंवर में फंसी

है, अब बल्ली नहीं लगाई जा सकती। भगवान ही, पार करे, तो रक्षा हो सकती है। कान्त समझे और यह बहू समझे, तो बात बन सकती है। लड़की के यहां से जो सगाई में आया, मैं उसे लौटा दूंगी।' यह कहते हुए, वह खड़ी हो गयी। उसके साथ रामकली भी बाहर चली गयी।

लेकिन इस बात के जब दूसरे दिन कान्त वहां आया, तो कमला ने उससे यह नहीं कहा कि कल तुम्हारी मां आई थी। वह न कहने योग्य बात भी कह गयी ''' मैंने भी उससे कह दिया था कि मैं प्यार के बदले में प्यार दूंगी......हृदय से हृदय का स्पर्श हो, तो मैं इसे पाप नहीं मानूंगी।

किन्तु स्वयं कान्त से उसने जिस रुखाई के साथ अपनी बात कही, तो वह सचमुच ही, कान्त के लिये अप्रत्याशित थी। वह इतना बोझिल और भारी नहीं था कि कमला की उस गुरूतर बात को सहार पाता। वह अपने-आप में एक भारी खिन्नता लिये उस घर से लौट गया। दो दिन से जो नाटकीय अभिनय कमला के साथ हो रहा था, उसका एक और दृश्य सामने आया। दूसरे दिन की सन्ध्या में ही, कमला के पिता का आदमी आया। वह एक पत्र भी लाया। वह पत्र कमला के स्वसुर के नाम था। उसमें लिखा था, कमला को तुरन्त भेज दें, उसकी मां बीमार है।

निदान, अगले दिन कमला चल पड़ी। वह उस समय चाहती थी कि उसे कान्त मिले। परन्तु वह नहीं आया। बुलाने पर भी उसने कमला के पास जाने से इन्कार कर दिया।

एक अजीब प्रकार के गिरे हुए मन को ले, कमला अपनी मां के पास चल पड़ी। उस समय उसने अनुभव किया कि उसका वहां से प्रस्थान करना किसी को अप्रिय भी नहीं लगा। केवल चौधरी रामलखन ने उसके साथ गांव के बाहर तक आकर कहा था—'बेटी,

जल्दी आना, पत्र देना।'

किन्तु कमला की आंखों में उस समय आंसू थे और उसने अभी देखा कि कान्त दूर एक स्थान पर खड़ा उसी की ओर देख रहा था। मानो कमला के समान वह भी मौन था ....उसे भी कुछ न कहने के लिये बाह्य कर दिया था।

२४

जब कमला अपने पिता के घर जाने लगी, तो उस संम्वाद को पाकर, बरबस ही कान्त के मन में बात आई कि कमला की इस यात्रा का कोई रहस्य अवश्य है। कान्त को इस बात का पता बहुत पहिले चल गया था कि कमला के पिता और ठाकुर सुदर्शनसिंह का गठ जोड़ा हो गया है। वह दोनों व्यक्तियों को सन्देह की वस्तु मानता था। कान्त यह भी जानता था कि वे दोनों ठाकुर जीवन के जिस वैभव की कल्पना करते हैं, वह समाज और इन्सानियत के लिये अत्यन्त कठोर, विषम और दुःसह है। किन्तु कान्त तो देखता था कि आज के विश्व में और उसके देश में ऐसे ही व्यक्तियों की प्रमुखता है और बहुतायत है ... उसने इतिहास में पढ़ा और देखा कि देश के जयचन्दों ने अपने स्वार्थ का पेट भरने के लिये जाति और धर्म का भी खून करने में आगा-पीछा नहीं देखा। इसी कारण देश सदियों तक पराधीन रहा ... विदेशियों की ठोकर में पड़ा याचक बना रहा ... ...

यों बरबस ही, कान्त की आत्मा में कमला का एकाएक स्वसुर गृह से प्रस्थान करना निरा अकल्पनीय, अशोभनीय और रहस्य से भरा हुआ दीख पड़ा। जब कमला ने उसे बुलाया, तो तब, कान्त के मन में

एक बार आया भी कि वह उसके पास चला जाये। किन्तु पहिले दिन ही, कमला ने अपने जिन उद्‌गारों से उसे घायल कर दिया, उसका सन्ताप अभी उसके मन में था। उसने बरबस ही इस बात को अनुभव किया कि कमला घमण्डी है। वह समझती है कि मैं उसके रूप का भूखा हूं। मैं कमला को प्रेम करने लगा हूं।

किन्तु जब सचमुच ही, कमला स्टेशन जाने के लिये तांगे में बैठ गयी, तो तभी, कान्त की छोटी बहिन ने उसके पास आकर कहा—'भैया, भाभी जा रही है। तुम नहीं मिलोगे?'

कान्त अपने कमरे में बैठा था। उसने बहिन की बात सुनी, तो उसे झिड़क दिया। उसने साफ कह दिया—'भाभी जाती है, तो मैं क्या करूं? क्या घर से चला जाऊं? चल, भाग।'

बहिन ने इतनी बात सुनी, तो वह सहम गयी। वह वहां से बिना कुछ कहे तुरन्त लौट गयी और रुआंसा-सा मुंह लेकर मां के पास आ खड़ी हुई।

यह देख, मां ने पूछा—'अरी, क्या हुआ? क्या किसी ने कुछ कह दिया?'

अञ्जना ने कहा—'मां, मैं भैया से कहने गयी थी कि भाभी जा रही है, तुम उसे नहीं मिलोगे, तो बस मुझे फटकार दिया।'

मां ने हँस कर कहा—'वह पागल है। उसे आज कल क्या कुछ सूझता है। अपने पराये हो गये हैं, उसके लिये!'

किन्तु लड़की को समझा कर जब मां कान्त के कमरे में गयी, तो वह वहां पर नहीं था। कान्त उस समय वहां पहुंच गया था कि जहां से गांव के बाहर निकल कर कमला का तांगा स्टेशन की ओर चल दिया था। यद्यपि, उस समय भी कान्त की इच्छा हुई कि वह हाथ का इशारा कर तांगा रुकवा दे और कमला को जाकर कहे कि मैं इस रहस्य को नहीं समझ सका। तुम्हारा इस प्रकार गांव से पलायन करने का अर्थ

मेरी बुद्धि में नहीं आया । किन्तु कान्त ने इतना कहना तो दूर, तांगा रुकवाने का भी प्रयत्न नहीं किया । वह आगे नहीं बढ़ा ।

लेकिन कमला ने दूर तक जाते हुए, कान्त को रास्ते के उसी मोड़ पर खड़े देखा । जब तांगा उस रास्ते से अदृश्य हो गया, तो तभी कान्त वहां से हटा । जब कान्त अपने घर की तरफ जा रहा था, तभी चौधरी रामलखन ने कान्त को आवाज दी । उसके पास आने पर वह बोले—'क्यों, आज कमला को विदा भी नहीं किया ? क्या किसी बात पर मतभेद हो गया ?'

कान्त ने तुरन्त ही, अपने मन के चोर को छिपाने की चेष्टा करते हुए कहा—'न, चाचाजी ! मुझे पता ही नहीं चला । जब मालूम हुआ, तो तांगा दूर निकल चुका था । मैंने रुकवाना व्यर्थ समझा ।'

रामलखन ने कहा—'भैया, इस बार कमला का जाना मुझे भी पसन्द नहीं आया । जरूर, कमला ने अपने पिता को लिखा होगा ।'

कान्त ने उदास भाव में कह दिया—'सम्भव है, ऐसा ही होगा ।'

चौधरी ने कहा—'नहीं, मेरा मन कहता है । या कमला का पिता ही अपनी पुत्री को मेरे पास से दूर करना चाहता है ।' वह बोले—'कान्त, उस सेवा क्षेत्र में जाकर मैंने कमला की कार्य क्षमता को बहुत अधिक पाया । कमला ने अथक परिश्रम किया । वहां के अधिकारियों ने भी बहू के कार्यों को भूरि-भूरि सराहा । मैं भला उसका साथ कहां दे पाता था ।'

कान्त ने कहा—'आपकी और भाभी की बराबरी कहां । वह युवा है ।'

चौधरी ने कहा—'नहीं, कमला में सेवा करने की लालसा भी अधिक है । वह ऐसा अवसर खोजती है । मैंने देखा कि वह जिस लगन के साथ बीमारों और भूखों की सेवा करती थी, तो उसी तन्मयता के साथ मुर्दों का दाह-संस्कार करने में भी योग देती थी । कमला उन

दुःखी मां, बहिन और पत्नी को भी बड़ी निपुणता के साथ सान्त्वना देती थी कि जिनके आत्मीय उन से बिछुड़ गये थे।

कान्त बोला—'भाभी ने आप से बहुत कुछ सीख लिया है। उसने आप से कुछ पाया है।'

चौधरी बोला—'कान्त, मैं कहता हूं सेवा कार्य के प्रति जैसा अनुराग मैंने इस कमला में पाया, वैसा किसी में अन्यत्र नहीं देखा। मैं तो चकित रह गया।'

उसी समय कान्त के मन में बात आई कि कहे, सम्भव है, उसका पिता ऐसा नहीं चाहता। इसलिये, जब चौधरी ने कमला के प्रति अपूर्व विश्वास और निष्ठा की बात कही, तो वह बोला—'चाचाजी, इस जगत में बहुत से नर-नारी अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन किये बगैर ही मर जाते हैं। उनके स्वजनों द्वारा प्रतिभा मार दी जाती है . कुण्ठित कर दी जाती है। चाचाजी ! शायद यही बात भाभी के लिये भी लागू हो। आप भाभी से जो कुछ कराना चाहते हैं, कदाचित, उसका पिता ऐसा नहीं चाहता। और अब तो सुदर्शनसिंह ठाकुर उनका अगुवा बना है। कमला का पिता उसकी फैक्टरी का मैनेजर बन गया है।'

चौधरी ने चंचल बनकर कहा—'कमला का पिता पैसे के दरिया में बहा जा रहा है। कोई अपना शरीर बेचता है, परन्तु उसने अपनी आत्मा बेच दी है।'

कान्त ने कहा—'कमला का पिता आगामी चुनाव में खड़े होने वाले सुदर्शनसिंह का प्रचार भी करने लगा है। उसने कुछ लोगों को रुपया दिया है।'

ईर्षा भाव में चौधरी ने कहा—'अरे, हां, हां, पैसे वाला सभी प्रकार के शस्त्र काम में लाता है। समाज में बहती हुई गन्दी धारा का विकास भी उसी के द्वारा होता है।' वह बोला—'कान्त बेटा, मैं कमला को शुभ्र और पवित्र देखनी चाहता हूं। मेरी इच्छा है कि वह समाज

की ऊंची नारी बने। उसमें ऐसा पदार्थ है। मुझे लगता है कि वह जन्म से ही इस प्रकार की क्षमता अपने साथ लायी है। जरूर, उसने अपने पूर्व जीवन में बड़ी साधना की है।'

कान्त ने कहा—'चाचा जी, आप किसी की बुराई तो कर पाते नहीं! सच, आप अनुराग अधिक रखते हैं। आप क्यों इस बात को भूलते हैं कि भाभी के मन पर उसके पिता का प्रभाव अधिक पड़ा है। उसके प्राथमिक संस्कार व,ीं बने हैं।'

इतना सुनते ही, चौधरी ने तुरन्त कहा—'तो क्या यही सच है कि वह इस भौतिक जगत की इच्छाएं पसन्द करती है। उन्हीं को महत्व देती है।' वह बोले—'तो तुमने अपनी भाभी को समझा है? उसे खोजा है?'

कान्त ने कहा—'चाचा जी, इतना तो सरलता से समझा जाता है। कमला भाभी का मन अपने पिता के यहां अधिक लगता है।'

चौधरी ने अपने स्वर पर जोर देकर कहा—'मैं नहीं मानता। मैं तेरी समझ को भी अधिक महत्व नहीं देता! और मैं जानता नहीं क्या कि तू भी अपनी उस भाभी के लिए गलत सिद्ध हुआ....तू ने भी इन्सान की गन्दी, छिछली और कसैली वासना में उस बेचारी को डुबो देने का प्रयत्न किया...बता तो रे, क्या तूने इतनी शिक्षा इसीलिए पाई! तू उसके बाप की और सुदर्शनसिंह की बात कहता है, पर मैं पूछता हूं, तो तू किसी मिल का मालिक है नहीं? तेरा बाप मजदूर की तरह खेत में काम करता है और अपने घर का काम चलाता है। उसने अपनी इच्छाएं मारकर तुम्हें पढ़ाया है, योग्य व्यक्ति बनाने का प्रयत्न किया है। तो क्या इसीलिए कि तू सुन्दर औरतों को घूरा करे...तू इतना भ्रष्ट बने, कि अपने ही घर की बड़े भाई की बहू को पाने का प्रयत्न करे'

एकाएक कान्त बोला—'चाचाजी...'

चाचा ने लाल बन कर कहा—'चुप, रे कान्त ? मैं सभी कुछ सुन चुका हूं। तेरे पिता ने अपने पत्र में मुझे लिखा था। मैं तभी समझ गया था कि मेरे भाई का भाग्य फूट गया.. रतन भगवान ने उठा लिया, तो तूने यों अपने को पतित बनाने का प्रयत्न आरम्भ कर दिया !' वह बोले—'तुम सोचते होगे, कि तुमने अपनी भाभी को प्रेम किया ! पर मैं कहता हूं प्रेम नाम की कोई वस्तु इस दुनिया में नहीं है, जो है, वह अलभ्य है। अमोल है ! वह क्या तुम्हें प्राप्त हो सकती है ? जवानी की धारा में बहना प्रेम नहीं कहलाता। यह तो दिमाग की आंधी है। वह दोनों को नष्ट कर सकती है।'

कान्त ने कहा—'चाचाजी, आप भ्रम में हैं।'

चौधरी ने कहा—'बेटे ! बात व्यर्थ ही नहीं चला करती ! तुम ने अपने विवाह को स्थगित कराकर क्या बुद्धिमानी का काम किया ? मैं कहता हूं, तुमने अपना लड़कपन प्रदर्शित किया !'

उसी समय एक व्यक्ति चौधरी के पास आया। वह गांव का जुलाहा था। वृद्ध था। उसकी गर्दन हिल रही थी, पैर डगमगा रहे थे। उसने चौधरी के पास जाकर पूछा—'चौधरी राजा, क्या बहू रानी चली गयी ?'

चौधरी ने कहा—'हां, वह अपने पिता के घर गई है। उसकी मां बीमार है। क्यों, तुझे कुछ काम था, क्या ?'

वृद्ध जुलाहे ने कहा—'चौधरी, पिछले वर्ष मेरी लड़की का ब्याह था। घरवाली जाने कहां-कहां घूम आई, पर किसी ने भी एक छदाम नहीं दिया। बहूरानी के पास आई, तो उसने दे दिया। उन रुपयों से ही लड़की के हाथ पीले किए गए।'

चौधरी ने पूछा—'कितने रुपए दिए थे, बहू ने ?'

जुलाहे ने कहा—'बहूरानी ने सौ रुपए दिए थे।'

चौधरी ने फिर प्रश्न किया—'क्या उधार ?'

जुलाहे ने कहा—'हाँ, चौधरी ! छोटी मालकिन ने कह दिया था, जब हों, तो दे जाना ।'

चौधरी सूखे भाव से मुस्करा दिया—'तो अब हो गए क्या तेरे पास ? रुपए लाया ?'

जुलाहे ने धोती की फेंट में बंधे रुपए निकाले और चौधरी के सामने रख दिए !

चकित बनकर, चौधरी ने कहा—'अरे, इतने कहां से लाया ? क्या कमाई करके लाया ? तू तो बूढ़ा हो गया...अब अशक्त बन गया !'

जुलाहे ने कहा—'चौधरी, यह न पूछो ! बहूरानी ने जिस तरह हमारी लाज रखी, तो हमें भी अपना सभी-कुछ बेचकर यह रुपया चुकाना था । मैंने अपने लिए एक छोटी सी झोंपड़ी रख ली है, मकान बेच दिया । एक गाय थी, उसका भी सौदा कर दिया ।'

तब, एकाएक चंचल बनकर चौधरी ने कहा—'अरे, रे ! तो तूने अपने पास रखा क्या ? सभी-कुछ बेच दिया ! जा, इन रुपयों को ले जा ! बहू आएगी, तो मैं उससे कह दूंगा । मकान का कब्जा न दिया हो, तो वापिस कर ले । गाय भी ले ले ।'

वृद्ध गिड़गिड़ाया—'चौधरी...'

चौधरी ने कहा—'अरे, हां ! बहू तुझे कुछ न कहेगी । उसने तुझे उधार नहीं दिया होगा । उसने तो देकर भुला दिया होगा ।'

जुलाहे ने रुपये बांध लिये और चल दिया । जब वह चला गया, तो तभी, चौधरी ने पास बैठे हुए कान्त को सम्बोधित करके कहा—'देखा ऐसी बहू को जो भी गलत रास्ते पर ले जायेगा, वही पाप का भागीदार बनेगा । मुझे पता है, बहू ने जाने किस किस की गांव में सहायता की है उसने अपने पास का रुपया बीमारों को दिया है, भूखों को दिया है । एक बार जब मैं अधिक चिन्तित था, एक दूसरे गांव के बी० ए० के विद्यार्थी

का परीक्षा फार्म भरने की फीस मैं देने में असमर्थ था, तो बहू ने तुरन्त अपने जेवरों का बक्स मेरे सामने लाकर रख दिया था।' वह बोले-'कान्त, तुम सबने इस बहू को नहीं समझा। तुम्हारी चाची ने भी नहीं समझा। वह तुम्हारी चाची की बहिन, यहां आई, तो उसने इस बेचारी के साथ जितना अन्याय किया, वह क्या मुझसे भुलाया जा सकेगा? ....न, वह वह पाप तो मेरे दिल में गड़ा रहेगा...'

कान्त ने कहा—'मौसी ने सभी कुछ कहा और प्रचारित किया।'

चौधरी ने फिर अपने स्वर पर जोर दिया— 'पर उसने जो कुछ कहा, किसी ने उसका विरोध भी तो नहीं किया ..मैं पूछता हूं, बात तुमसे सम्बन्धित थी, तो तुमने भी निर्लज्ज हो कर, अपनी इस भली भाभी का उपहास होता हुआ देखना पसन्द किया. मनुष्य इसी प्रकार तो नारी की अवहेलना करता है। उसकी प्रतिष्ठा और लज्जा का भद्दे रूप में प्रदर्शन कराता है! सच, तुमने बड़ा भारी पाप किया, शशिकान्त। पुरुष में व्याप्त हुए दम्भ का तुमने भी उपयोग किया... सभी के समान तुमने भी एक विधवा और युवा नारी को समाज के खुले चौराहे पर बिलखने और तड़फने के लिये छोड़ दिया...उसे घिनौनी बना दिया...'

कान्त ने कहा—'चाचा जी, मैं निर्दोष हूं।'

चाचा ने कहा—'नहीं, नहीं, तुम्हारा भी दोष है। तुम्हारा मौन बनना कमला के लिए शाप बन गया। अब सोचता हूं मैं, वह यहां से चली गई, यह अच्छा ही हुआ।'

उसी समय रामकली ने आकर कहा—'रोटी नहीं खाओगे? चलो, उठो।'

चौधरी ने रामकली की ओर देखकर कहा—'बहू तो पहुंच गई होगी। मां से जा मिली होगी।'

रामकली बोली—'हां, पहुंच गई होगी।' उसने कान्त की ओर

देखकर कहा—'अरे, बुद्धि से काम ले, कान्त ! सगाई का सामान न जाने दे। मां-बाप की लाज रख ले ! कुछ तेरे दिमाग में हो, तो उसे भी निकाल दे।'

चौधरी ने उठकर कहा—'सब निकल जाएगा। इस दुनिया का तमाचा जब मुंह पर पड़ता है, तो आदमी ठिकाने पर आ जाता है...'

२५

कमला पिता के घर पहुंची, तो वह अवाक् रह गयी कि उसकी मां बीमार नहीं थी। कमला झूठ बोलकर धोखे के साथ बुलाई गई थी। कमला के पिता ठाकुर ने कहा—'कमला! तुम्हारी आवश्यकता थी। तुम्हें बुलाना था।'

किन्तु उसी दिन जब सन्ध्या के समय पिता के साथ घूमने चली, तो ठाकुर की गाड़ी सीधी सुदर्शनसिंह के बंगले पर पहुंच गयी। सुदर्शनसिंह मानो इसी प्रतीक्षा में था। वह कमला के आने का समाचार पा चुका था। जब कमला उस बंगले में प्रविष्ट हुई, तो ठाकुर सुदर्शनसिंह ने उसका जिस तत्परता के साथ स्वागत किया, वह कदाचित कमला के लिये भी चकित हो जाने वाली बात थी। उस दिन ठाकुर और कमला ने भोजन भी उसी स्थान पर किया।

जब पिता-पुत्री वहां से लौटे, तो कमला ने पिता से कहा। 'मालूम होता है, ठाकुर ने यह बंगला नया बनवाया है। शानदार है।'

कमला के पिता ने कहा—'लेकिन सुदर्शनसिंह परेशान है। पत्नी बीमार है। अफसोस यही है कि इतने बड़े कारबार का कोई उत्तराधिकारी नहीं है। इस ठाकुर को कोई सम्भालने वाला नहीं।'

कमला ने कहा—'यह भी भाग्य की बात है !'

पिता ने कहा—'न, बेटी ! भाग्य तो बनाया जाता है।' उन्होंने कहा—'मेरी इच्छा है कि तुम और ठाकुर एक-दूसरे की अवस्था को समझ लो। तुम दोनों ही एक-दूसरे के लिए योग्य हो। पूर्ण अनुकूल हो।'

इतना सुनते ही, कमला सहम गयी। वह एकाएक जैसे जड़ बन गई।

पुत्री को मौन देख, पिता ने कहा—'क्यों बेटी ! समझ ली न, मेरी बात ! मैंने तुम्हें इसीलिए यहां बुलाया है। यह तो देखती हो न तुम कि सुदर्शनसिंह आज सभी ओर अपनी पहुंच रखता है। इसका सम्मान है।'

कमला ने जैसे झुंझला कर कहा—'लेकिन इससे मेरा क्या सम्बन्ध पिताजी !'

ठाकुर ने तुरन्त ही आतुर बनकर कहा—'न, बेटी ! मुझे तो तेरी चिन्ता है। देखती है, तेरी मां का स्वास्थ्य कितना बिगड़ गया है। उसके मन की सुख और शांति नष्ट हो चुकी है। और इसमें आश्चर्य कैसा, कौन मां ऐसी डायन होगी कि जो अपनी इकलौती बेटी को विधवा देखकर चैन पा सकेगी? ..न, तेरी मां क्या इस तरह जिन्दा रह सकेगी ?' उसने सांस भरी और कहा 'कमला बेटी ! यह तुम्हारे और हमारे भाग्य की बात है कि सुदर्शन सिंह ने स्वयं ही यह प्रस्ताव किया। उसके पास एक बड़ी दौलत है, तो क्या तुम सरीखी चतुर और सुशिक्षित का पाना हमारी जाति मे सरल है, क्या ? न, सुदर्शनसिंह चिराग लेकर ढूंढे तो उसे तुम्हारी जैसी नारी नहीं मिलेगी। वह तुम्हें ..'

एकाएक जैसे सांप के फन पर पैर रख दिया गया हो और तड़प गया हो, इसी प्रकार तड़प कर कमला ने कहा—'पिताजी...'

किन्तु उसी समय उनका निवास स्थान आगया। गाड़ी खड़ी हो गयी। ठाकुर ने नीचे उतरते हुए कहा—'तुम मेरे कमरे में आना। तब अपनी बात कहना।'

कमला तेज चाल से चल कर अपने कमरे में प्रवेश कर गयी। वह धम्म से अपने बिस्तर पर जाकर बैठती हुई बोली—'तो यह सोचा है, इन लोगों ने? पिता ने ही अपनी पुत्री को ठगना पसन्द किया है। सुदर्शनसिंह दौलत के नशे में भरा है और पिताजी के दिमाग पर उस दौलत का धूआँ छा गया है ... हे राम! अब इतनी बड़ी क्रूरता का प्रदर्शन होगा। अपने स्वार्थ को पूरा करने के लिये पिताजी को इतना भी करना पड़ेगा ...

उसी समय नौकर ने आकर कहा—'बीबीजी आपको मालिक बुलाते हैं।'

कमला ने कह दिया—'आती हूं।'

किन्तु वह नहीं गयी। जब देर तक भी वह कमरे से नहीं निकल सकी, तो तब, ठाकुर ने उसके कमरे के द्वार पर आकर कहा—'बेटी,...और वह स्वयं ही कमरे के अन्दर प्रवेश करके बोला—'मैं समझता हूं तुम मेरी ही बात लिये हो। कुछ परेशान हो चली हो।' यह कहते हुए उसने कमला के सिर पर हाथ रखा और उसे प्यार से दुलराता हुआ बोला—'मेरी अच्छी, बच्ची, जब तक मैं हूं, तब तक तुझे चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं। मैंने इस सुदर्शनसिंह को अपनी मुट्ठी में कर लिया है। और जब तुम उसके और मेरे मध्य में खड़ी होगी, तो दुनिया की कोई शक्ति नहीं कि हमें अलग-अलग कर दे। देखती हो, तुम्हारा कोई भाई तो है नहीं, इसलिये, तुम्हारा हित-चिन्तन करना ही, मेरा आजकल विचारणीय विषय बन गया है। मैंने जो कुछ कहा,—तुम उसकी स्वीकृति दो। सुदर्शनसिंह योरोप जाना चाहता है। उसकी इच्छा है कि तुम भी उसके साथ जाओ। इतने समय में तुम्हें उसको

समझने का भी अवसर मिलेगा।'

कमला उस समय भी मौन बनी रही। वह जैसे चेतना शून्य हो गयी थी।

ठाकुर फिर लौट चला। उसने चलते हुए कहा—'तुम अपना मन स्वस्थ बनाओ। समझती हो न, तुम्हारे सुख में ही, हमारी प्रसन्नता है। तुम्हें हँसता देखना ही हमें पसन्द आता है।' यह कहते हुए ठाकुर वहां से लौट चला। जब ठाकुर वहां से चला गया, तो कमला ने अपनी साड़ी बदल दी। वह बिस्तर पर पड़ गयी। यद्यपि उसे प्रकाश में सोना पसन्द नहीं था, किन्तु उस समय उसके मन की जैसी स्थिति थी, तो उसमें प्रकाश हीन कमरा जैसे और अधिक भयावना लग सकता था। उस समय तो कमला स्वयं अपने आप में इतनी सन्दिग्ध और अस्थिर बन गयी थी कि कमरे में यदि छिपकली अथवा कोई भुनगा कोई आहट करता, तो वह चौंक जाती। उसे लगता कि जैसे विश्व के समान वह कमरा भी डोल रहा था। मानो जो वर्तमान था, वह भूत होकर नष्ट हो जाने वाला था। किन्तु वही भूत जो वर्तमान की नींव पर खड़ा था, अपने आप में कितना दृढ़ था, कितना स्थिर था, विश्व के इस अनिवर्चनीय महत्व को पाकर कमला जैसे सन्न सी रह गयी। उसे लगा कि जिस उज्ज्वल भविष्य की लोग कल्पना करते हैं, वह भी इस वर्तमान पर आधारित है। तेज पुञ्ज वर्तमान ही, भविष्य को प्रकाश देता है।

'पर तू क्या....तेरा अस्तित्व क्या, री, कमला। कमला ने जैसे बरबस ही अपने को सम्बोधित किया और कहा—'एक मैं बदनसीब हूं कि जिसका बाप अपनी बेटी को दौलत के दांव पर लगा देना चाहता है ..मेरे पिता को अच्छी शराब मिले, अच्छा भोजन, वस्त्र, और रहने को महल मिले, साथ में प्रतिष्ठा, इसलिए ही तो मेरा क्रय-विक्रय किया जा रहा है......उस धूर्त सुदर्शनसिंह के हाथों मुझे बेच दिया जाने वाला है...'

किन्तु इतना कहने के साथ ही, कमला उठकर बैठ गयी। उसकी आंखें चढ़ गयीं। गाले में बल पड़ गए। उसके शरीर का रोंआ-रोंआ खड़ा हो गया। उस अवस्था में ही, उसने कमरे की जलती हुई बत्ती को लक्ष करके कहा—'एक पिता क्या, यदि हजार पिता आकर भी कहें, तो मैं तब भी ऐसा नहीं करूंगी। मैं अब स्वयम्बर नहीं रचूंगी। जीवन का जो करुण, वीभत्स दृश्य एक बार देख लिया, अब उसे दूसरी बार देखने की अपने-आप में शक्ति अर्जित न कर सकूंगी।'

कमला उठी और उसने बत्ती बन्द कर दी। किन्तु वह बिस्तर पर न पड़ सकी। कमरे में घूमने लगी। बंगले के बाहर चन्द्रमा की चांदनी खिल रही थी। बंगले में जो फूल खिल रहे थे, तो चांदनी में उनकी शोभा अपूर्व बनी थी। कमरे की सभी खिड़कियों के किवाड़ खुले हुए थे। रात की रानी महक रही थी और उसकी खुशबू कमला के कमरे में भी आ रही थी। यदि उस समय कमला की मां वहां होती तो कदाचित मां को शांति मिलती। परन्तु मां तो गांव में थी। इसलिए कमला अपने को वहां सर्वथा अकेली पाकर जैसे दुरूह और कठिन देख रही थी। निदान, इसी समय कमला कमरे के बाहर निकल चली। वह फूलों के गमलों के पास जाकर खड़ी हो गई। जब वह जूही के पेड़ के पास जाकर खड़ी हुई, तो तभी, उसके मन में आया कि इन फूलों के समान उसका जीवन भी बेकार है... यह फूल आदमियों के पैरों तले रौंदे जाते हैं, तो यह नारियां भी आदमियों के द्वारा ही बध की जाती हैं, पतित बनाई जाती हैं...कमला...!

कमला की मनोदशा उस समय अवश्य ही अशान्त थी। वह जूही के जिस पेड़ के नीचे खड़ी थी, तो पृथ्वी पर पड़े उसके फूलों को हाथ में उठा, वह मानो अपने-आप ही मर्माहत बन गयी। वह चांदनी में चमकते हुए उस पेड़ को लक्ष कर नितान्त याचना भरे स्वर में बोली—

'अरी जूही, तू भी बदनसीब है...तू भी अपने फूलों को किसी रानी या राजा के गले में पड़ा देखकर प्रसन्न होती है...रात में तेरे फूलों से सेज सजायी जाती है और भोर गए उन्हीं फूलों को रास्ते में फेंक दिया जाता है...उन्हें धूल में मिला दिया जाता है...री, जूही . फूलों की रानी !

कमला ने वे हाथ में लिए फूल फिर पृथ्वी पर छोड़ दिए । उसने चमकते हुए चांद की ओर देखकर कहा—'मैं भी ऐसी ही एक दुर्भागी हूं...यह पैसे वाला सुदर्शनसिंह मुझे भी इसलिए पाना चाहता है कि मैं रूप रखती हूं, उसके मन का विनोद कर सकती हूं । इतना कहा कि कमला का मस्तिष्क फिर झनझना गया । उसने निरे उद्वेगपूर्ण स्वर में कहा—'मेरा पिता भी यही चाहता है.. मुझे बेचना पसन्द करता है .. वह भी दौलत की कीचड़ में फंस गया है...मुझे बाप...मुझे पैदा करने वाला पिता...'

उस समय, सचमुच ही, कमला की मनःस्थिति अत्यन्त अशान्त थी । वह अब बच्ची तो थी नहीं । वह शिक्षित और जवान थी । वह स्पष्ट रूप से अपने पिता तथा सुदर्शनसिंह के षड़यन्त्र की कहानी समझ चुकी थी । कमला ने उस थोड़े समय में जाने कितनी नारियों की करुण कथा सुन ली थी । कमला को इस बात का भी पता था कि गांव में कान्त के कारण उसकी प्रतिष्ठा घटी थी । उस कान्त ने भावना और आदर्शवाद की चादर ओढ़ कर उसे ठगना पसन्द किया था । वह सहृदय युवक भी कमला के प्रति निर्मम और क्रूर बन गया । इस प्रकार कमला को लगा कि जैसे विश्व का समूचा व्यक्ति-समाज उसे देख रहा था, घूर रहा था और उसे ठगने की व्यवस्था बना रहा था...

रात के उस भरे प्रहर में ही कमला की इच्छा हुई कि वह इस बंगले से निकल चले । उसके पास में पैसा था, जेवर भी था, वह कहीं भी उसे बेचकर अपनी गुजर कर सकेगी । वह 'अपना' कहने वालों से

दूर हो जायेगी। वह तब किसी के हाथों भी न ठगी जायेगी...

किन्तु कमला जब खड़े,-खड़े, थक गयी, तो वह वहीं उद्यान में संग मरमर के चबूतरे पर बैठ गयी। ऊपर आसमान से ओस पड़ रही थी। घास भीग रही थी। फूल भी उस ओस से दबे जा रहे थे। कमला के मन में जिस प्रकार की आंधी उठ रही थी, अथवा जिस तरह की आग उसके हृदय में जल रही थी, तो वह उसी की तपिश से जैसे धू-धू करके जलने लगी थी। किन्तु बाहर ओस से उसका शरीर भीग रहा था। वह कांप रह था। लेकिन कमला का ध्यान उस ओर नहीं गया। जब देर बाद उसे चेतना आई, तो वह उठ कर कमरे में गयी। वह अपने बिस्तर पर जा पड़ी। सो गयी।

जब नया प्रातः आया, तो ठाकुर ने नौकर द्वारा मालूम कर लिया था कि कमला अभी सो रही है। वह जागी नहीं है। किन्तु ठाकुर ने प्रातः की चाय पर सुदर्शनसिंह को बुलाया था। वह आ चुका था। कमला को सोई हुई पाकर, वह ठाकुर से बात करने लगा। उस समय वह जिस नये सूट को पहन कर आया था, वह बम्बई के एक दर्जी से सिलवा कर मंगाया था। ठाकुर उसी सूट की तारीफ कर रहा था। किन्तु उस समय, उसके मन में यह भी बात थी कि कमला को उठना चाहिये। सुदर्शनसिंह आ गया है तो उसे भी आना चाहिये। निदान, वह उठा और कमला के कमरे में गया। देखा कि उस समय कमला जाग चुकी थी। वह आंख खोले पड़ी थी। जाते ही ठाकुर ने कहा—'उठो बेटी! सुदर्शनसिंह आ गया है। वह तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा है। आज तुम्हें इस जिले के कलक्टर से भी मिलना है। आज संध्या समय का तुम्हारा खाना उसी के यहां है।'

कमला उठ कर बैठ गयी और पिता की ओर देख कर बोली—'पिताजी, यह सब तमाशा है ... देखती हूं इस प्रकार तो मेरे जीवन का नाश हो जाने वाला है। बताईये क्या पिता के हाथों ही पुत्री का

पतन होना है...

ठाकुर ने अपने मन के रोष को दबा कर कहा—'न, न, कैसी बात करती हो, बेटी ! अब उठो । जाओ, स्नान कर आओ । कपड़े बदल कर जल्दी आओ ।' यह कहते हुए ठाकुर कमरे से बाहर चला गया । वह सुदर्शन के पास जाकर बोला—'कमला आती है । जाग गयी है ।'

सुदर्शनसिंह ने कहा—'आजकल रात में नींद कम आती है । सुबह को आती है ।'

ठाकुर ने बात सुनी और सिगरेट सुलगाने लगा । वह लोग बरांडे के जिस स्थान पर बैठे हुए थे, वहां से पहाड़ दिखाई देता था । ठाकुर उसी ओर देखने लगा । उसने अपने मन में कहा—'सच, रात कमला देर में सोयी है । मेरी बातों में उलझी रही है । कमला जरूर ही इस विवाह के प्रस्ताव प. सहमत नहीं है ।

किन्तु इसके बाद ही, ठाकुर जैसे चौंक गया । उसने देखा कि वहां कमला आई है । अनुपम सुन्दरी बन आई है । उसने नयी साड़ी पहनी हुई है और मुँह पर पाऊडर तथा होठों पर लिपस्टिक भी लगायी है ।

कमला को देख सुदर्शनसिंह खड़ा हो गया । वह बोला—'मैं चार मील से आया हूं और आप...'

कमला ने कहा—'जी, मैं रात देर में सोई थी । क्षमा करें आपको प्रतीक्षा करनी पड़ी ।' यह कहते हुए वह चाय बनाने लगी । जब वह सुदर्शनसिंह के प्याले में चीनी डालने लगी, तो बोली—'चीनी कितनी ?'

सुदर्शनसिंह बोला—'केवल एक चम्मच ?'

उसी समय, ठाकुर ने अपने मन में कहा—'नहीं, कमला विवाह कर लेगी । लड़कियों की आदत ही इन्कार करने की होती है । लेकिन यह कमला इस समय जिस प्रकार शृंगार करके आई है, यह तो इस बात की

सूचक है कि कमला बेटी अपने भविष्य की उज्ज्वलता स्वयं समझती है और उसे पाना पसन्द करती है।'

चाय पीकर सुदर्शन ने कहा—'तो ठाकुर साहब, आप तैयार हैं ?'

ठाकुर ने कहा—'जी, नहीं, मुझे तो आज फैक्टरी में काम अधिक है। आप चलें। मैं संध्या समय तक पहुंच जाऊंगा।' और उसने कमला से कहा—'बिटिया, तुम शहर जाओ। कहा न, शाम का भोजन कलक्टर साहब के यहां है। तुम देखोगी कि वे बड़े हँस-मुख और मिलन सार आदमी हैं। सुदर्शन बाबू के पुराने मित्र हैं।

सुदर्शनसिंह खड़ा हो गया। कमला भी साथ खड़ी हुई। ठाकुर मोटर तक साथ गया। जब वह उन दोनों को विदा करके लौटा तो उसके मन में हर्ष था कि उसने एक बड़ा काम पूर्ण कर दिया...

२६

शहर पहुंच कर, कमला इस बात की बराबर प्रतीक्षा करती रही कि उसके पिता आयेंगे। परन्तु जब संध्या समय तक ठाकुर वहां नहीं पहुंचा, तो कमला की चिन्ता बढ़ी और उसने जीवन में एक और अध्ययन किया तथा सहज भाव से समझ लिया कि उसका पिता स्वयं ही उसके रास्ते से हट रहा है... वह सुदर्शनसिंह को अपनी पुत्री के निकट आने का अवसर दे रहा है। अपने पिता की ऐसी घिनौनी और अशिष्ट इच्छा को देख, कमला के मन में बरबस ही यह धारणा बन गयी कि उसका पिता भी तुच्छ है। हीन और कायर है। उसने बरबस ही अपना यह विचार बना लिया कि चरित्रहीन व्यक्ति सभी कुछ कर सकता है... वह पत्नी और पुत्री का क्रय-विक्रय भी कर सकता है। निदान, उस दिन कमला को कान्त कई बार याद आया। उसके मन में यह बात भी बार-बार आई कि कान्त मुझसे कुछ मांगता था... वह याचक बन कर आया था। धूर्त या कमीना नहीं था। उसने किसी सम्मोहक मन्त्र का भी प्रदर्शन नहीं किया। वह भोला और सुकुमार बनकर आया और अन्तत: वैसा ही रहा। मेरे प्रति कान्त उदार रहा, सहृदय बना रहा।

रात में कमला और सुदर्शनसिंह नगर से लौटे, तो रास्ते में ही,

सुदर्शन ने कहा—'इस जीवन के तट पर आकर जिस प्रकार लहरें अपना सिर पीटती हैं, और लौट जाती हैं, क्या यही हम लोगों का अन्त नहीं है कमलादेवी ?

कमला उस समय मौन थी। वह अपनी ही सीमा में खोई हुई, भागती हुई मोटर में बैठी हुई जा रही थी। पास में सुदर्शनसिंह बैठा था, परन्तु उसे मानो उस समय इतना भी ज्ञान नहीं रहा। लेकिन जब सुदर्शन ने एक अजीब प्रकार की बात कही, जैसे उसने अपने को दार्शनिक बताने की चेष्टा की। जिसे सुनकर कमला एकाएक कुछ कह नहीं पाई। इसलिये कमला को मौन देख, सुदर्शन ने फिर कहा—'मैंने अनेक बार सोचा है कि आखिर यह जीवन क्या है...जीवन भर मनुष्य क्या खोता और पाता आया है ... भला जीवन रूपी इस बहते प्रवाह की भी कोई सीमा है ! दरिया का पानी तो समुद्र में चला जाता है, लेकिन यह जीवन उसने कहा—'लगता है, जिस प्रकार समुद्र का पानी वाष्प बन कर बादल बनता है और बरसता है, तो कदाचित उसी तरह... यह इन्सान का जीवन भी मरता है और फिर जीवन प्राप्त करता है। मैं यह भी सुनता हूं कि पाया हुआ जीवन एक साधना है ... पिछले संस्कारों का सम्मेलन ही, इस पाये हुए जीवन में होता है। हमारा एक दूसरे से सम्बन्ध बनता है। अनुराग और विराग भी हमें उसी अनुपात से प्राप्त होता है—क्यों, तुम्हारा इस विषय में क्या मत है, कमलादेवी ?'

कमला ने कहा—'मेरा इस विषय में कोई अध्ययन नहीं।'

सुदर्शन ने तुरन्त ही फिर कहा—'न, न, यह बात तो सामान्य है। मैं तो जानना चाहता हूं कि तुमने भी इस विषय में कभी सोचा है ? मेरे मन में तो यह बात बार-बार आती है कि निश्चय ही, हमारा संयोग और वियोग एक ही धारा के दो रूप हैं। क्या जो आज हमारा आत्मीय है, निकटतर है, वह दूसरे जीवन में हमें प्राप्त नहीं हुआ ? मैं कहता हूं वह जरूर मिला होगा। आज यदि हम किसी से

आदर पाते हैं, प्यार पाते हैं, तो उसकी भूमिका पूर्व जन्म में बनी होगी।'

कमला ने कहा—'सुदर्शनबाबू, यह गहन विषय है। लम्बा भी है। यह क्या, यों सहज ही समझा जा सकता है?'

सुदर्शनसिंह ने कहा—'मैं प्राय: इसमें उलझता हूं। कभी-कभी अधिक अशान्त बन जाता हूं।' उसने जैसे कमला की आंखों में झांकने का प्रयत्न किया और कहा—'कमलादेवी, तुम समझती होगी कि मैं बहुत सुखी हूं। सम्पन्न भी हूं। परन्तु आज कहता हूं, मैं अत्यन्त दु:खी हूं। तुमने मेरी पत्नी देखी नहीं, वह अत्यन्त कर्कशा है। वह मेरे लिये शाप है।'

कमला ने सहज भाव से मुसकरा दिया—'यह भी तो हो सकता है कि आप उसके लिये शाप हों?'

मानो सुदर्शन के मुँह पर एक तमाचा पड़ा, वह तिलमिला गया। तभी सम्भल कर उसने कहा—'हां, यह भी सम्भव हो सकता है। परन्तु मैंने उसकी आवश्यकताओं का पूरा ध्यान रखा है।'

कमला जैसे ईर्षा भाव से मुसकरा दी—'सुदर्शनबाबू, इस बात का भला क्या भरोसा कि आपने अपनी पत्नी की आवश्यकता को समझ लिया हो और उसे पूर्ण करने का प्रयत्न किया हो?'

सुदर्शन ने कहा—'ऐसी चेष्टा तो की।'

कमला ने कहा—'अधिकांश मनुष्यों का यही मत है। परन्तु वह सच आज भी सिद्ध नहीं हुआ!'

उसी समय सुदर्शनसिंह का बंगला आ गया। गाड़ी अन्दर प्रविष्ट हो गयी। सुदर्शन नीचे उतरा तो उसने कमला से कहा—'तो आप रात यहां बिताना पसन्द करेंगी, या पिता के यहां। यह ड्राईवर छोड़ आयेगा।'

कमला ने कहा—'मैं वहीं चली जाऊंगी।'

सुदर्शन ने कहा—'अच्छा।'

कमला ने कहा---'अच्छा, नमस्ते !'

गाड़ी फिर लौट चली। रात के लगभग बारह बजे कमला जब अपने पिता के बंगले पर पहुंची तो वहां सन्नाटा था। कमला ने ड्राईवर को रोक कर कहा---'एक मिनट ठहरना।' और वह सीधी अपने कमरे में गयी। वहां प्रकाश किया और सुदर्शनसिंह के नाम एक पत्र लिखकर उसे लिफाफे में बन्द करती हुई बाहर आई और ड्राईवर को देकर बोली---'इसे साहब को देना। सुबह उठते ही दे देना।'

ड्राइवर ने सलाम किया और गाड़ी लेकर चला गया।

सुबह कब हुआ, इसका कमला को एकाएक पता नहीं चला। किन्तु जब उसकी आंख खुली, तो वह देखकर चकित रह गई कि उसी समय नौकर ने वहां आकर कहा कि 'आपको साहब बुलाते हैं।'

कमला सीधी अपने पिता के कमरे में पहुंच गई। उसने वहां जाकर देखा कि उसका पिता एक अजीब परेशानी में भरा कमरे में घूम रहा है। वह कमला को देखते ही, मेज के पास आकर रुक गया और बोला-- 'तो तुमने सुदर्शनसिंह को पत्र लिख दिया। तुमने यह भी कह दिया कि मैं विवाह नहीं करूंगी।'

कमला ने कहा---'जी !'

पिता ने कठोर स्वर में कहा---'तो तू अब इतनी भी निर्लज्ज बन गई है कि अपने आप ही विवाह की बात चलाए। किसी को हां करे, किसी को इन्कार करे !'

कमला ने कहा---'पिताजी, आप विवेकशून्य न हों। मैं अब बच्ची नहीं हूं ! मैं आपकी निर्लज्जता पूर्ण रूप से देख रही हूं। स्पष्ट है कि मैं सुदर्शनसिंह को तो घृणा करती ही हूं, लेकिन, पिता के रूप में आपको देख पाकर भी लज्जित हूं।' यह कहते हुए कमला कांपने लगी। उसके स्वर में जितना क्रोध था, वह मानो उसके शरीर भर में फैल गया था। उसके मन में व्याप्त हुई घृणा जैसे वाणी में फूट

चुकी थी ।

किन्तु ठाकुर के मन की अवस्था उस समय सर्वथा विपरीत थी। उसके हाथों पाली-पोसी पुत्री उसके मुंह पर इस प्रकार तमाचा मार दे, इतना उसे किसी प्रकार भी स्वीकार नहीं था। ठाकुर की मेज का दराज खुला था, उसमें पिस्तौल रखा था। उसने वह निकाल लिया। उसका घोड़ा भी उठा लिया।' जब कमला अपनी बात करने के साथ कमरे के बाहर जाने लगी, तो तभी, ठाकुर ने चीख कर कहा—'कमला !...'

कमला ने लौट कर कहा—'मैं आपसे घृणा करती हूं।'

किन्तु इतनी बात सुनने के साथ ठाकुर के हाथ से पिस्तौल का घोड़ा छूट गया। उस पिस्तौल से गोली निकली और वह कमला की कनपटी के पास से निकल कर, सामने दीवार में जा लगी। कमरे में जोर का धड़ाका हुआ। कुछ धुआं हुआ। उस बंगले के नौकर दौड़ आए। किन्तु जब उन्होंने ठाकुर के पास जमीन में पड़ा हुआ पिस्तौल देखा, पुत्री को भी उसी कमरे में खड़ी देखा, तो वे सब वहां से उल्टे पैरों लौट पड़े।

उस समय अवाक् और आश्चर्य से पूर्ण बनी हुई कमला ने जब पिता के हाथों से छूटा पिस्तौल नीचे पड़ा देखा, तो वह आगे बढ़ी और उस पिस्तौल को ऊपर उठाकर पिता के सामने करती हुई बोली—'पिताजी, आप इसे लीजिए ! फिर चलाइये ! मेरा दुर्भाग्य कि आपका निशाना चूक गया... आपकी इस कमला का प्राणान्त आपके हाथों से होते-होते बच गया !' उसने कहा—'यह तो बड़े ही सुन्दर संयोग की बात होती कि आपके जिन हाथों ने मुझे पाला-पोसा, तो उन्हीं के द्वारा मेरा अन्त भी हो जाता...आज यह खेल समाप्त हो जाता।' यह कहते हुए कमला ने वह पिस्तौल मेज पर रख दिया और कहा—'पिताजी, आज मैंने समझा कि जब मनुष्य का विवेक नष्ट

हो जाता है, तो वह बुद्धि और हृदय से काम लेना भी बन्द कर देता है। बताइये, ऐसा ही काम तो आज आपने किया ? पर यह कृत्य उस जघन्यता से ऊंचा नहीं था कि आप अपने मन की जिस अधोगति के कारण मुझे सुदर्शनसिंह के हाथों सौंपना चाहते थे। केवल इसीलिए न कि आप मुझे उसकी पत्नी बनाकर, उसके ऐश्वर्य, धन के भागीदार बन जाते ?...पिताजी, कभी सोचा भी आपने कि आप कहां जा रहे हैं...आपको दिखाई नहीं देता कि जिस पहाड़ की चोटी पर आप चढ़े हैं, तो उसके नीचे ही विशाल गह्वर है, जहां आप गिर जाने वाले हैं। और यह तो आप जानते ही होंगे कि उस गड्ढे में गिरकर आज तक कोई नहीं बचा है। आप भी...पिताजी ..'

ठाकुर उस समय कमरे में घूम रहा था। वह बार-बार जैसे चौंकता था। कमला की ओर भी देखता था। परन्तु वह मौन था यह देख, कमला आगे बढ़ी और जब ठाकुर मेज के पास जा खड़ा हुआ तो कमला पास जाकर बोली—'आप खिन्न न बनिए, पिताजी ! आप मुझे मां के पास ले चलिए ! मैं मां के दर्शन करूंगी और लौट जाऊंगी !' उसने कहा—'पिताजी, आप विश्वास कीजिए ! मेरे स्वसुर एक देवता हैं। आज उनकी एकमात्र इच्छा है कि मैं आदर्श नारी बनूं। उनके अरमानों का मैं प्रतिनिधित्व करूं।'

किन्तु ठाकुर उस समय भी मौन बना रहा। वह बाहर चल दिया। किन्तु उसके पीछे ही जब कमला भी बाहर चली, तो वह दरवाजे के पास जाते ही दीवार से टकरा गई। यह घटना इस प्रकार अकस्मात हुई कि कमला भौचक्की रह गयी। दीवार उसके सिर में जोर से लग गयी। उस दीवार में ही वहां कील गड़ी थी, वह कमला के माथे में गड़ गयी। खून बह निकला। उसके मुँह से चीख निकली और वह वहीं पर सिर पकड़ कर बैठ गयी।

उसी समय नौकर वहां आया और बोला—'अरे, बीबीजी, यह

गया ?'

कमला ने कहा—'भाई मैं अन्धी बन गयी थी। दीवार की कील लग गयी।' यह कहते हुए वह उठी और अपने कमरे की ओर चल पड़ी। जब वह अपने कमरे में पहुंची तो वह सिर की पीड़ा को लिये चारपाई पर बैठ गयी। खून काफी निकल आया। धोती भीग गयी।

नौकर ने कहा—'बहू जी, कपड़े बदल लो। आराम करो। कहो तो डाक्टर बुलाऊं ?'

कमला ने कहा—'नहीं, मैं आराम करूंगी। तुम पिताजी से भी न कहना।'

नौकर ने कहा—'वे बाहर गये हैं। मोटर निकाल कर ले गये हैं।'

कमला ने कहा—'तुम जाओ। साफ धोती मेरे पास रख जाओ।'

जब नौकर वहां से गया, तो कमला ने उठ कर कपड़े बदल लिये। उसने कमरे के किवाड़ बन्द कर दिये और पड़ गयी। उस अवस्था में ही, उसकी आंख लग गयी। किन्तु जब दो घन्टे बाद कमला की आंख खुली, तो तब वह उठ नहीं सकी। वह पहिले से अधिक अशक्त बन गयी थी। वह अनुभव करने लगी कि वह कमजोर है। रुग्ण है। कमला ने सहज ही जान लिया कि उसे बुखार है। उसके सिर में पीड़ा है।

किन्तु वह दिन जैसे प्रातः से ही, कमला के लिए अशुभ था। जब दोपहर हुआ, तो तभी, पुलिस के कुछ सिपाही एक थानेदार सहित वहां आये। थानेदार ने कहा—'ठाकुर महेन्द्रसिंह का मोटर एक्सीडेंट हो गया। उसी स्थान पर उनका प्राणान्त हो गया। लाश अस्पताल में है। प्राप्त की जा सकती है।'

कमला ने इतना सुना, तो जैसे उसकी आंखों के सामने समस्त संसार घूम गया। उसका सिर चकरा गया। वह बिस्तर पर पड़ी

हुई चीख पड़ी—'मेरे पिता !'

नौकर ने कहा—बीबीजी, फैक्टरी का छोटा मैनेजर आया है; कहता है, मालिक बाबू भी प्रातः से बाहर हैं। वे बम्बई गए हैं। लाश अस्पताल से जा रही है। बताइए, यहीं पर दाह-संस्कार करें ?'

कमला ने कहा—'नहीं, पिताजी का संस्कार गांव में होगा।'

कमला को इस बात का पता चल गया था कि उसके पिता ने जान बूझ कर अपनी हत्या की थी। उन्होंने बेतहाशा गाड़ी चलायी थी। निश्चय ही उनके मस्तिष्क में अपने प्रति और अपने कर्म के प्रति घृणा पैदा हो गई थी।

चौधरी रामलखन उन दिनों अधिक व्यस्त थे। वे घर पर भी कम रहते थे। किन्तु जब उन्हें कमला के पिता की मृत्यु का समाचार मिला, तो वे तुरन्त वहां आये। उन्होंने कमला और उसकी मां को सान्त्वना दी। परिस्थिति उनके समक्ष स्पष्ट थी। ठा०सुदर्शनसिंह भी वहां पर उपस्थित थे। वे कमला को प्राप्त करने के लिए फिर भी प्रयत्नशील थे। किन्तु चौधरी रामलखन ने कमला को लक्ष किया और कहा—'भूचाल उतर चुका। आकाश भी साफ है। चाहो तो तुम अब भी अपना मार्ग प्रशस्त कर सकती हो। देखती हो, भगवान मुस्करा रहा है। वह जगत के समस्त प्राणियों को चेतना प्रदान कर रहा है। क्या तुम उस शुभ्र ज्योति से दूर रह सकती हो ?—न, ऐसा कभी नहीं हो सकता, बहूरानी !'

कमला रो रही थी। उसकी आंखें गालों पर बही जा रही थीं। उसने उस श्वेत संन्यासी के पैर पकड़ लिए और अत्यन्त कातर तथा याचनामयी वाणी में कहा—'मेरी रक्षा करो, पिताजी।'